आर.एन.आई. नं. 3653/57 डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-21/2012-14
मुद्रण तिथि दिनांक 5 से 8 अगस्त, 2014
वर्ष : 72 ★ अंक : 08 ★ मूल्य : 10 रु.
डाक प्रेषण तिथि 10 अगस्त, 2014 ★ श्रावण, 2071

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
जयपुर

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'॥

संसार की समस्त सम्पदा और भोग
के साधन भी मनुष्य की इच्छा
पूरी नहीं कर सकते हैं।

- आचार्य हस्ती

आवश्यकता जीवन को चलाने
के लिए जरूरी है, पर इच्छा जीवन
को बिगाड़ने वाली है,
इच्छाओं पर नियंत्रण आवश्यक है।

- आचार्य हीरा

जिनका जीवन बोलता है,
उनको बोलने की उतनी जरूरत भी नहीं है।

- उपाध्याय मान

Jai Guru Heera Jai Guru Hasti Jai Guru Maan

।। जैनं जयति शासनम् ।।

दान से पुण्य होता है, पर संयम से कर्मों की निर्जरा होती है ।
दान हृदय की सरलता है, पर संयम हृदय की शुद्धता है ।।

DP Exports is leading Indian firm specializing in import, export and manufacture of diamonds and jewellery. We offer a wide range of rough diamonds, along with a specialization in the field of manufacturing polished diamonds and jewellery.

timeless jewels
unmatched quality
flawless craftsmanship

Dharamchand Paraschand Exports

1301, Panchratna, Opera House, Mumbai - 400 004. India.
t: +91 22 2363 0320 / +91 22 4018 5000
f: +91 22 2363 1982 email : dpe90@hotmail.com

31342

।। महावीराय नमः ।।

जय गुरु हीरा | जय गुरु हस्ती | जय गुरु मान

जिस दिन श्रद्धा जग जायेगी, अनमोल-दुर्लभ परम अंग रूप मानव जीवन को समर्पण करते देर नहीं लगेगी। श्रद्धा है तो प्राण अर्पण भारी नहीं लगेगा।

-आचार्य श्री हीरा

With Best Compliments From :

S. .D. GEMS &
SURBHI DIAMONDS

Prakash Chand Daga

Virendra Kumar Daga (Sonu Daga)

FC51, Bharal-Diamond Bourse, Bandra Kurla Complex,
Bandra (E), MUMBAI-400051 (MAH.)
Ph. : (O) 022-23684091, 23666799 (R) 022-28724429
Fax : 022-40042015 Mobile : 098200-30872
E-mail : sdgems@hotmail.com

Jai Guru Heera | *Jai Guru Hasti* | *Jai Guru Maan*

व्यसनी से उसी प्रकार बचना चाहिये, जिस प्रकार छूत के रोगी से बचा जाता है।

- आचार्य श्री हीरा

With Best Compliments from :

Basant Jain & Associates, Chartered Accountants
BKJ & Associates, Chartered Accountants
BKJ Consulting Private Limited
Megha Properties Private Limited
Ambition Properties Private Limited

601, Dalamal Chambers, New Marine Lines, Mumbai-400020

बसंत के. जैन

अध्यक्ष : श्री जैन रत्न युवक परिषद, मुम्बई
ट्रस्टी : गजेन्द्र निधि ट्रस्ट

Tel. : (O) 22018793, 22018794 (R) 28810702

जिनवाणी
हिन्दी-मासिक

卐 **संरक्षक**
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन-2636763

卐 **संस्थापक**
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 **प्रकाशक**
विनयचन्द डागा, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997, फैक्स-0141-2570753

卐 **प्रधान सम्पादक**
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन
सामायिक-स्वाध्याय भवन, प्लॉट नं. 2,
नेहरू पार्क, जोधपुर-342003 (राज.)
फोन : 0291-2626279
E-mail : jinvani@yahoo.co.in
E-mail : editorjinvani@gmail.com
Website: www.jinvani.net

卐 **सह-सम्पादक**
नौरतन मेहता, जोधपुर
डॉ. श्वेता जैन, जोधपुर

卐 **भारत सरकार द्वारा प्रदत्त**
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-RJ/JPC/M-21/2012-14
ISSN 2249-2011

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

धीरस्स पस्स धीरत्तं,
सव्वधम्माणुवत्तिणो।
चिच्चा अधम्मं धम्मिट्ठे,
देवेसु उववज्जई॥
-उत्तराध्ययन सूत्र, 7.29

धीर पुरुष का धैर्य देख,
क्षान्त्यादि धर्म-अनुसरण करे।
तज पाप धर्म में लीन बना,
देवों में सुख का भोग करे॥

अगस्त, 2014
वीर निर्वाण संवत्, 2540
श्रावण, 2071

वर्ष 72 अंक 8

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 250 रु.	स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
आजीवन देश में : 1000 रु.	संरक्षक सदस्यता : 11000/-
आजीवन विदेश में : 12500 रु.	साहित्य आजीवन सदस्यता- 4000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क/साभार नकद राशि 'जिनवाणी' बैंक खाता संख्या SBBJ 51026632986
IFSC No. SBBJ 0010843 में जमा कराकर जमापर्ची (काउन्टर-प्रति) अथवा ड्राफ्ट भेजने का पता
'जिनवाणी', दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.)
फोन नं.0141-2575997, 2571163, फैक्स : 0141-2570753, E-mail:sgpmandal@yahoo.in

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-2562929

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय-	आत्मस्वरूप का बोध	-डॉ. धर्मचन्द जैन	7
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-संकलित	11
	उपादान-निमित्त कारण	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी	12
	वाग्वैभव(28)	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी	13
प्रवचन-	पहचानें आत्मा का मूल्य	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी	14
	अब तो चेतो रे भाई	-मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी	20
जीवन-व्यवहार-	बोलें प्रिय-हित-मित वचन (2)	-मुनि श्री मनीष सागरजी	26
अध्यात्म-	मैत्रीभाव	-श्री कन्हैयालाल लोढ़ा	33
	जैन आचार से स्वस्थ जीवन की प्राप्ति (2)	-श्री रणजीत सिंह कूमट	40
तत्त्व-चर्चा-	जिज्ञासा-समाधान	-तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी	46
	आओ मिलकर ज्ञान बढ़ाएँ (88)	-श्री धर्मचन्द जैन	54
अंग्रेजी-स्तम्भ-	**An Analysis of the term - Micchāmi dukkaḍaṃ**	*-Prof. Jagat Ram Bhattacharyya*	51
धारावाहिक-	लग्न की वेला (6)	-आचार्य श्री उमेशमुनि जी 'अणु'	59
प्रेरक-प्रसंग-	खमत-खामणा	-प्रो. पारसमल संकलेचा	64
	सुकरात की सहनशीलता	-श्री जशकरण डागा	81
प्रासंगिक-	आत्मशोधन का पर्व : पर्वाधिराज पर्युषण	-प्रो. सुमेरचन्द जैन	48
	भारतीय कानून में जैन अल्पसंख्यकता के मायने	-श्री अरिहन्त चौपड़ा	68
	समर्पित सांस्कृतिक दूत श्री वीरचंद राघवजी गाँधी	-डॉ. दिलीप धींग	78
प्रवचनांश-	जीवनोपयागी बोल, हैं बड़े अनमोल	-श्रद्धेय श्री लोकचन्द्रमुनि जी	72
बाल-स्तम्भ -	दगा किसी का सगा नहीं	-डॉ. दिलीप धींग	75
युवा-स्तम्भ -	समाज के विकास हेतु सोचें निरन्तर	-डॉ. एन.के.खीचा	80
नारी-स्तम्भ -	कालचक्र ये चलता जाता है	-श्रीमती नीलू डागा	83
स्वास्थ्य-विज्ञान -	अच्छी चिकित्सा पद्धति कौनसी	-डॉ. चंचलमल चोरडिया	85
कविता/गीत-	'क्षमा' मिटा दे वैर बुराई	-श्री दिलीप गाँधी	19
	इंसान भी क्या चीज़ है	-श्री शशि कुमार बोहरा	45
	उत्तराध्ययन को खोलो	-मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी	56
	संवत्सरी	-श्री पुखराज मोहनोत	65
	खमत-खामणा को हृदय में धार लीजिए	-श्री देवेन्द्रनाथ मोदी	66
	जीवन-बोध क्षणिकाएँ	-श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनि जी	71
	अमन चैन का नाम नहीं है	-श्री मोहन कोठारी 'विनर'	73
	शरण मुझको दीजिए	-श्री मगनचन्द जैन	82
	लघु कविताएँ	-डॉ. रमेश 'मंयक'	84
	जैनत्व की पहचान	-श्री राजकुमार नवलखा	93
	समाज की तस्वीर	-श्री गणेशमुनि जी	121
अनुभव-	गूंगे का गुड़	-श्रीमती मधु चौरडिया	74
विचार-	मित्र और मित्रता	-श्री अभयकुमार जैन	47
	मोक्ष की यात्रा	-श्रीमती वन्दना भण्डारी	67
	वाक्यामृत	-श्री नितेश नागोता जैन	70
चिन्तन-	स्वाध्याय : शांतिदायक सर्वदा	-डॉ. लक्ष्मीचन्द जैन	39
साहित्य-समीक्षा-	नूतन साहित्य	-डॉ. श्वेता जैन	94
समाचार विविधा-	समाचार-संकलन	-संकलित	95
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	-संकलित	122

सम्पादकीय

आत्मस्वरूप का बोध

❖ *डॉ. धर्मचन्द जैन*

इसमें कोई सन्देह नहीं कि मनुष्य चेतनाशील है। उसमें अनन्त जिज्ञासाएँ हैं। वह बाह्य जगत् एवं उसमें विद्यमान प्रत्येक वस्तु के गुण-धर्म एवं विभिन्न प्राणियों के व्यवहार को जानना चाहता है। दूसरे मनुष्य किस प्रकार जीते हैं, वे क्या खाते हैं, वे कैसे रहते हैं, उनका पारिवारिक एवं सांस्कृतिक माहौल कैसा है, वे विषम परिस्थितियों में किस प्रकार का व्यवहार करते हैं, वे क्या नया कर रहे हैं आदि के सम्बन्ध में भी मनुष्य की जिज्ञासा रहती है। वह अपनी जिज्ञासाओं की पूर्ति हेतु अध्ययन, चर्चा, पर्यटन आदि का आलम्बन लेता है। मनुष्य को केन्द्र में रखकर ही अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, कृषि-विज्ञान, चिकित्सा-विज्ञान, मनोविज्ञान, दर्शन, कला, संस्कृति, भूगोल-विज्ञान, अंतरिक्षविज्ञान, गणित, इतिहास, वाणिज्य, आभियांत्रिकी, भाषा-विज्ञान, व्याकरण, ज्योतिर्विज्ञान आदि विद्याओं का विकास हुआ है। जिज्ञासा के कारण नई शोध भी चलती रहती है एवं विद्या की नई शाखाएँ निरन्तर विकसित होती रहती हैं। कम्प्यूटर विज्ञान, जेनेटिक विज्ञान, पर्यावरण विज्ञान आदि अनेक विषय इसके उदाहरण हैं। मनुष्य ने बाहर का जगत् बहुत कुछ जाना है, किन्तु स्वयं के सम्बन्ध में प्रश्न किया जाए तो उत्तर नकारात्मक, सन्देहास्पद अथवा असन्तोषप्रद आता है। मनुष्य अपनी शरीर रचना के सम्बन्ध में विज्ञान की पुस्तकों से, वैदिक ग्रन्थों से अथवा जैन-बौद्ध साहित्य से जानकारी कर लेता है। किन्तु शरीर एवं चेतना के सम्बन्ध को लेकर वह प्रायः अनुभव के स्तर पर सच्चाई को नहीं जानता। वह अधिकतर इस सम्बन्ध में भ्रमित ही रहता है।

प्रश्न यह है कि चेतनाशील तत्त्व क्या है? अनुभव के स्तर पर हम प्रायः शरीर को ही चेतनाशील समझते हैं एवं उसी में मैं मोटा हूँ, मैं दुबला हूँ, मैं काला हूँ, मैं गोरा हूँ, मैं लम्बा हूँ, मैं नाटा हूँ, मैं रोगी हूँ, मैं स्वस्थ हूँ आदि के रूप में बोध करते रहते हैं। शरीर के बल से ही व्यक्ति अपने को बलशाली तथा शरीर के निर्बल होने पर अपने को बलहीन मानता है। यह अनुभव अत्यन्त स्थूल अनुभव है, जो अधिकांश लोगों का अनुभव होते हुए भी ज्ञानियों की दृष्टि में सत्य नहीं है। शरीर से चेतन तत्त्व भिन्न है। उसे हम 'आत्मा' के नाम से जानते हैं। आत्मा में ऐसे अनेक गुण हैं जो उसे शरीर से पृथक् करते हैं। हाँ, आत्मा के कारण हमें शरीर में चेतना का अनुभव होता है। आत्मा के द्वारा देह छोड़ देने पर शरीर में चेतना का अनुभव नहीं होता। शरीर एवं चेतना का पारस्परिक सम्बन्ध अनादिकाल से चला आया है। तेजस एवं

कार्मण शरीर चेतन आत्मा के साथ इस तरह सम्पृक्त हैं कि उनकी भिन्नता का ज्ञान सहजता से नहीं हो पाता है। वास्तव में तो शरीर एवं चेतना स्वरूप से भिन्न हैं। चेतना का लक्षण जानना एवं देखना (निर्विकल्प होना) है। जबकि शरीर इन लक्षणों से रहित है। शरीर में स्थित इन्द्रियाँ जानने में साधन बनती हैं। मन एवं बुद्धि भी जानने में साधन हैं, किन्तु जानने वाला उनसे भिन्न है। वह आत्मा है। श्रोत्रेन्द्रिय कभी यह नहीं कहती कि मैं जानती हूँ, चक्षुरिन्द्रिय भी ऐसा नहीं समझती कि मैं देखती हूँ। देखने वाला, सुनने वाला इन इन्द्रियों से पृथक् है, जो विभिन्न इन्द्रियों से होने वाले ज्ञानों में समन्वय स्थापित करता है। शरीर में ऐसा सामर्थ्य नहीं कि विभिन्न इन्द्रियों से होने वाले ज्ञानों में एकता व समन्वय को स्थापित कर सके। किन्तु शरीर के प्रत्येक अंग में एवं प्रत्येक कोशिका में चेतना का प्रवाह होने से हम शरीर के साथ तादात्म्य का अनुभव करते हैं तथा यह समझते हैं कि मैं बड़ा हो गया हूँ, मैं युवा हो गया हूँ अथवा मैं वृद्ध हो गया हूँ। शरीर का अपना धर्म है एवं आत्मा का स्वभाव उससे भिन्न है। फिर भी इनके पारस्परिक तादात्म्य का अनुभव होने से हम अपने को शरीर ही मानने लगते हैं तथा शरीर की हानि-वृद्धि में अपनी हानि-वृद्धि समझते हैं। शरीर एक साधन है, जिसका उपयोग भोग एवं योग दोनों में हो सकता है। जो व्यक्ति देह को आत्म स्वरूप समझता है वह भोग के मार्ग को अपनाता है तथा जो उसमें सन्देह करता है, उससे असन्तुष्ट होता है एवं देह से स्व की भिन्नता का अनुभव करने की साधना में तत्पर रहता है वह योग मार्ग को अपनाता है। मानव के शरीर की महत्ता इसी में स्वीकार की गई है कि वह शरीर के साथ इन्द्रिय ज्ञान एवं बुद्धिज्ञान से भी समृद्ध है।

जब मनुष्य अपने को देहरूप मानता है, तो उसके प्रति आसक्त होता है। बाह्य जगत् का सम्बन्ध भी प्रायः शरीर के कारण ही बनता है। बुद्धि के साथ तादात्म्य के कारण मनुष्य अपने को बुद्धिमान्, धन के स्वामित्व के कारण धनवान् तथा भूमि का स्वामी होने के कारण भूमिपति समझने लगता है। अपने को शरीर मानने के कारण ही सारे दोष उत्पन्न होते हैं- कामना, ममता और आसक्ति का बीज देहाभिमान में ही विद्यमान है। पर की चाह का अनुभव कामना को उत्पन्न करता है। फिर मानव कामना-पूर्ति के लिए प्रयत्नशील होता है। शरीर के कारण ही वह पुत्र-पत्नी, पिता-माता आदि परिवारजनों के प्रति ममत्व करता है। शरीर के सुख-भोग से जुड़े पदार्थों को प्राप्त करके उनके प्रति ममत्व करता है। कामना और ममता दुःख के हेतु हैं, अतः इनका त्याग करने के लिए अपने को शरीर से पृथक् अनुभव करने की आवश्यकता है। शरीर से चेतना के पृथक् होने का अनुभव ध्यान-साधना के अभ्यास द्वारा किया जा सकता है। जिस दिन शरीर से पृथक् आत्म-स्वरूप का अनुभव होगा, वह क्षण जीवन के सम्यक् उन्नयन का आधार बनेगा। आगम की भाषा में इसे सम्यग्दर्शन का प्रकटीकरण कहा जा सकता है।

विचार करने पर विदित होता है कि संसार में दो तत्त्व हैं- द्रष्टा एवं दृश्य। चेतना या आत्मा

द्रष्टा है तो शरीरादि पदार्थ दृश्य। आत्मा के अतिरिक्त समस्त चराचर जगत् दृश्य है। दृश्य से सम्बन्ध विच्छेद होने पर ही निज आत्म-स्वरूप का सम्यक् बोध होना सम्भव है। हमें जो इन्द्रियाँ प्राप्त हुई हैं, उनसे बाह्य जगत् का एक सीमा तक ज्ञान किया जा सकता है, किन्तु स्व का बोध इन्द्रियों से होना सम्भव नहीं है, इन्द्रियाँ शब्द, रूप, गन्ध, रस एवं स्पर्श का ज्ञान कर सकती हैं, इनसे रहित आत्मस्वरूप का नहीं। आत्मा शब्द, रूप, गंध, रस एवं स्पर्श से रहित है, इसका अपना कोई आकार नहीं है। इसका अनुभव मन एवं बुद्धि से भी नहीं हो सकता। मन बाह्य पदार्थों को जानने एवं दुःख-सुख का अनुभव करने में कारण बनता है, किन्तु जानने वाला तो स्वयं आत्मा होता है। वह मन का विषय नहीं बनता। बुद्धि से भी आत्मा को सीधा नहीं जाना जा सकता, क्योंकि बुद्धि उसका साक्षात्कार नहीं कर सकती, वह आत्मा की सिद्धि में तर्क एवं अनुमान उपस्थित कर सकती है। हम बुद्धि से यह जान सकते हैं कि शरीर एवं आत्मा में विभिन्न आधारों पर भिन्नता होनी चाहिए। किन्तु बुद्धि से चेतना का साक्षात्कार नहीं हो सकता। इसलिए यह कहा जा सकता है कि चेतनाशील आत्मा का अनुभव स्वयं आत्मा के द्वारा ही हो सकता है। जब इन्द्रिय, मन एवं बुद्धि को साधन न बनाकर स्व को जानने का प्रयास किया जाता है, तब आत्मा का स्वरूप बोध होता है।

आत्म-स्वरूप का बोध कराने के लिए वेदान्त में जीव को ब्रह्म स्वरूप कहा गया है। (तत्त्वमसि) जैनदर्शन में भी जीव को सिद्ध स्वरूप बताकर उसके आत्मस्वरूप का बोध कराया जाता है। सिद्ध के गुण प्रत्येक आत्मा में स्वीकार किए गए हैं। यह एक विधि है, जिसके द्वारा किसी आत्मा को अपने गुण विकसित करने के लिए प्रेरित किया जाता है। यह मार्ग आस्था का मार्ग है। आस्था से यथार्थ को स्वीकार कर प्रत्यक्ष अनुभव के लिए प्रयत्न किया जाता है। दूसरा मार्ग विवेक का मार्ग है, जो स्व और पर में, आत्म और अनात्म में, स्वरूपतः चेतन एवं अचेतन में भेद की प्रज्ञा जगाता है। सत्यनिष्ठ साधक स्व-पर का निरीक्षण करते-करते देह और आत्मा में भिन्नता का बोध कर लेता है। तीसरा मार्ग कायोत्सर्ग का मार्ग है, जिसमें काया से अपने को पृथक् अनुभव करने का अभ्यास किया जाता है, इसके लिए तटस्थता की आवश्यकता होती है। अपनी प्राचीन धारणाओं और मान्यताओं को छोड़कर इन्द्रिय एवं मन को निगृहीत करते हुए बुद्धि को तटस्थ कर काया से स्वयं को पृथक् अनुभव किया जाता है। देह एवं आत्मा में पृथक्ता का साक्षात् बोध कराने वाली यह उत्तम विधि है, जो सम्प्रति लुप्त हो गई है। कायोत्सर्ग में चित्त की एकाग्रता युक्त शुभ ध्यान सहायक है। शुभ ध्यान के माध्यम से देहादि पर वस्तुओं की आसक्ति से उत्पन्न जड़ता को दूर किया जाता है एवं चिन्मयता के अनुभव की वृद्धि की जाती है।

एक बात जान लेने की है कि ममता, कामना, आसक्ति आदि की उत्पत्ति शरीर में नहीं होती है। यह मलिन चेतना में होती है। इस मलिनता का प्रभाव हमें मन के माध्यम से प्रतीत

होता है। मन चंचल एवं दूषित हो जाता है। कभी-कभी उसे नियन्त्रित करना भी कठिन प्रतीत होता है। इसलिए चेतना की अशुद्धि को दूर करना आवश्यक है।

चेतना की अशुद्धि को दूर करने हेतु चेतना के स्वरूप का सम्यक् बोध अपेक्षित है। स्वयं का बोध स्वयं के द्वारा ही किया जा सकता है। गुरु एवं शास्त्र का उपदेश उसमें सहायक हो सकता है। भ्रान्त या भटके हुए साधक को अनुभवी महापुरुषों एवं वीतराग वाणी का मार्गदर्शन स्वरूपबोध में प्रकाश की किरण बन सकता है। पर-पदार्थ आत्म-स्वरूप का बोध नहीं करा सकते, स्वयं का बोध स्व के द्वारा ही हो सकता है। आत्मस्वरूप को जानने में पर-पदार्थों से वैराग्य एवं दुःखों से विमुक्ति की तीव्र अभिलाषा सहायक है। आत्म-बोध होने पर पदार्थों की कामना, उनके प्रति ममता एवं आसक्ति को त्यागना सरल हो जाता है। ऐसा व्यक्ति शान्ति, स्वाधीनता एवं अनन्त उदारता का अनुभव करता है। उसका सीमित दृष्टिकोण समाप्त हो जाता है।

आत्मा का बोध उसके गुणों से भी हो सकता है। आत्मा के दो प्रमुख गुण हैं- जानना और देखना (निर्विकल्प होना)। इन दोनों गुणों के आधार पर उसे ज्ञाता एवं द्रष्टा कहा जाता है। ये दोनों गुण आत्मा के ही हैं, शरीरादि के नहीं। इन्द्रियादि इसमें एक सीमा तक सहयोगी हैं, किन्तु ज्ञान इन्द्रिय एवं मन को नहीं आत्मा को ही होता है। अतः आत्मा ही ज्ञाता होता है। ज्ञाता होने एवं द्रष्टा होने का अनुभव जिसे होता है उसे आत्मा के होने में सन्देह नहीं होना चाहिए। उसमें अनन्त शक्ति भी स्वीकार की गई है। आत्मा की शक्ति शरीर की शक्ति से भिन्न है। शरीर को ही आत्मा मानने वाले लोग अवश्य यह तर्क दे सकते हैं कि शरीर को अन्नादि का भोजन नहीं दिया जाए तो ऐसा लगता है कि चेतना क्षीण हो गई है। यह प्रतीति सही होते हुए भी यहाँ कहना होगा कि शरीर एवं आत्मा के बीच एक अन्य कड़ी है- प्राणों की। प्राणों के अन्तर्गत पाँच इन्द्रियों की शक्ति, काया, वचन एवं मन की शक्ति भी सम्मिलित है, वह भोजनादि के द्वारा बनी रहती है। किन्तु आत्मा में जो शक्ति है- सहनशीलता, उदारता, क्षमाभाव, समता आदि गुणों को अभिवृद्ध करने की, वह शरीर में नहीं होती। आत्मा में ही इस प्रकार की शक्ति होती है। प्रभु महावीर सदृश अनेक साधक प्राणशक्ति के घटने पर भी आत्मशक्ति से तपस्या का आराधन करते रहे हैं। किन्तु स्थूल शरीर एवं आत्मा का साथ आहार-सेवन से ही बना रहता है। शरीर बल भी साधना में सहायक है, मनोबल एवं इन्द्रिय-निग्रह भी साधना में सहायक है, किन्तु आत्मा की शक्ति एवं उसके अन्य गुण शरीर पर निर्भर नहीं करते। इसलिए शरीर से आत्म-स्वरूप भिन्न है, इसका बोध साधक को आत्मबल का भान कराता है एवं वह शरीरादि की पराधीनता से भी स्वाधीन होने का प्रयत्न करता है। ★

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

वियाणिया दुक्खविवड्ढणं धणं, ममत्तबंधं च महाभयावहं।
सुहावहं धम्मधुरं अणुत्तरं धारेज्ज निव्वाणगुणावहं महं।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 19.99

अर्थ- धन को दुःखवर्धक और ममता के बन्धन को महाभयावह समझकर निर्वाण के गुणों को प्राप्त कराने वाले, शाश्वत सुखदायक, उत्कृष्ट धर्म की धुरा को धारण करो।

विवेचन- गाथा में निम्नांकित बिन्दु प्रतिपादित हैं- 1. धन दुःखवर्धक है, 2. ममत्व का बंधन महा भयकारी है, 3. धर्म का आचरण सुखकर है तथा निर्वाण प्राप्त कराने वाला है।

साधु बनने के पूर्व धन का त्याग करना होता है; क्योंकि धन दुःख की शृंखला को बढ़ाता है। यदि कोई साधु बनकर भी धन से नाता नहीं छोड़ता तथा उसके संग्रह एवं रक्षण में लगा रहता है तो वह दुःख को ही आमन्त्रित करता है। जिस गृहस्थ जीवन में धन की महत्ता स्वीकार की गई है, उसमें भी धन से जुड़ाव दुःख का कारण बनता है। धन दुःखवर्धक है, इसके अनेक कारण हैं- 1. जिसके पास धन अधिक है वह निर्धनों एवं जरूरत मंदों की ईर्ष्या का पात्र होने से अनेक बार कष्ट झेलता है। 2. जिसके पास धन है वह उसकी सुरक्षा एवं वृद्धि के लिए चिन्तित रहता है। अपना कीमती समय उसकी चिन्ता में ही लगाए रहता है। 3. वह अपने समकक्ष धनिकों का प्रतिद्वन्द्वी होने से अनेक बार उनके द्वारा उत्पन्न समस्याओं से घिरा रहता है। 4. वह सदा पराधीनता का अनुभव करता है, और पराधीनता दुःख है। 5. वह धन की तृष्णा को छोड़ नहीं पाता है अतः दुःखी रहता है।

ममत्व एक बन्धन है। यह वस्तु, व्यक्ति आदि से अपने को बांधता है। इस बन्धन का परिणाम भयकारी होता है। धन-धान्य, भूमि-भवन, पद-प्रतिष्ठा, पुत्र, पत्नी आदि के साथ ममत्व करना व्यक्ति में अनिष्ट की आशंका आदि का भय उत्पन्न करा देता है।

सुखकारी तो एक मात्र धर्म की धुरा है, जिसे धारण करने पर जीवन का भीतरी विकार बह जाता है। धर्म का पालन करते हुए भी कष्ट आते हैं, किन्तु ममत्व, अहंत्व एवं अनासक्ति का त्याग करने के कारण साधक उन कष्टों में अपने पूर्वबद्ध कर्मों की निर्जरा करता हुआ निर्मलता को प्राप्त कर लेता है, वह क्षपकश्रेणी पर आरूढ़ होकर मोक्ष एवं निर्वाण के योग्य अनन्त ज्ञान, अनन्तदर्शन आदि गुणों का विकास कर लेता है।

आगम की यह गाथा संयम-जीवन की महत्ता एवं उपयोगिता को संस्थापित करती है।**-सम्पादक**

विचार-वारिधि

उपादान-निमित्त कारण

आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा.

- प्रत्येक कार्य की निष्पत्ति में उपादान और निमित्त, ये दोनों ही कारण होते हैं। कभी एक कारण से ही कार्य-सिद्धि हुई हो- ऐसा नहीं होता है। ऐसा न कभी हुआ है और न कभी होगा। जिस तरह मंथन करने वाला मथेरणा दधि से मक्खन निकालता है, तब मंथन क्रिया करते समय क्रमशः एक हाथ पीछे रहता है तो दूसरा हाथ आगे। दोनों हाथों से क्रिया चलती है, लेकिन एक हाथ आगे और दूसरा हाथ पीछे चलता है। इसी तरह ज्ञान-प्राप्ति में कभी निमित्त आगे और उपादान पीछे रहता है तो कभी उपादान आगे और निमित्त पीछे रहता है। हमारे यहाँ जिनशासन में अनेकान्त दृष्टिकोण है। इसमें व्यवहार और निश्चय ही मुख्य है। कभी व्यवहार आगे रहता है तो निश्चय पीछे और कभी निश्चय आगे तो व्यवहार पीछे रहता है। गौण एवं प्रधानता से दोनों को लेकर चलना है।
- कारण दो प्रकार के होते हैं- एक प्रेरक और दूसरा उदासीन। घर में घड़ी लगी हुई है और उसमें 8.30 बज गये तो व्याख्यान में जाने का समय हो गया। घड़ी व्याख्यान के समय की याद दिलाने में कारण हुई। एक घर में माताजी, पिताजी या पुत्र ने कहा-'अभी तक तैयार नहीं हुए हो, मालूम भी है कि साढ़े आठ बज गये हैं। जल्दी करो। व्याख्यान में जाना नहीं है क्या?' घड़ी एवं घर वालों में अन्तर यह है कि घड़ी टाइम बताती है, लेकिन प्रेरणा नहीं करती। अतः यह उदासीन कारण बनी, और घर के सदस्य प्रेरक कारण बन गये।
- जो उदासीन कारण होता है, उसको वस्तुतः न तो पाप ही होता है और न पुण्य ही। जैसे पढ़ने के लिए पोथी उदासीन कारण है। पोथी क्या जाने कि वह ज्ञान में सहायक निमित्त कारण बन गई है।
- एक बार कृष्ण ने सोचा- "मैं धर्म कर्त्ता तो नहीं बन सकता, लेकिन मैं धर्म-मार्ग का प्रेरक क्यों नहीं बनूँ? जो करता है उसका अनुमोदक क्यों नहीं बनूँ?" जो लोग तन से, मन से, वाणी से धर्म की दलाली करते हैं, खुद नहीं कर सकें तो भी दूसरों को करने की प्रेरणा देते हैं, साधना-मार्ग पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं, उनको उसकी दलाली अवश्य मिलती है। कृष्ण ने सहायक, प्रेरक, अनुमोदक बनकर एकान्त पुण्य का खजाना इकट्ठा किया और वे तीर्थंकर पद के अधिकारी बन गये। श्री कृष्ण का उदाहरण प्रेरक निमित्त का उदाहरण है। *-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार*

अमृत-चिन्तन

वाग्वैभव (28)

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

- पर्युषण-साधना के अन्तर्गत विषय-विकारों को मिटाना, भूल की धूल को झाड़ना और कषायों को कृश करना चाहिये।
- अहिंसा विश्व के प्राणिमात्र का सर्वश्रेष्ठ, सर्वाधिक निपुण एवं आद्य धर्म बताया गया है।
- घर में रहते हुए भी कम से कम पाप हो और साथ ही धर्म-साधना में पुरुषार्थ के माध्यम से जागरण हो तो चातुर्मास के सुयोग का लाभ उठाया जा सकता है।
- दोष दूर करने और गुण ग्रहण करने की योग्यता निर्माण करता है- विवेक।
- अविवेक से किया गया 'धर्म' बंधन काटने की बजाय बंधन बांधने वाला बन सकता है।
- बंधन में डालने वाले तीन तत्त्व हैं-तन की आसक्ति, धन की ममता तथा परिवार का मोह।
- तप में मर्यादाओं को नहीं तोड़ें। तर्क देकर गलियाँ नहीं निकालें।
- समर्पण का भाव तर्क छोड़ने पर आता है।
- एक सामायिक, एक नवकारसी भी पापों का शमन करती है।
- प्रत्येक श्रावक-श्राविका का नियम होना चाहिये कि वह प्रतिदिन कम-से-कम एक सामायिक करे। सामायिक भी घर में करने की बजाय धर्मस्थान में करे।
- भगवान से बढ़कर भगवान की वाणी है।
- तिजोरी में रखे नोट तो समय-समय पर संभाले जाते हैं। कपाटों में बन्द पड़े आगम शास्त्रों को भी संभालना चाहिये।
- जब-जब श्रावकों के ज्ञान में कमी हुई, साधु कमजोर हुए हैं।
- अज्ञान व मोह के कारण मृत्यु को सन्निकट देखकर व्यक्ति आर्त्तध्यान करता है।
- जैन दर्शन जीने की कला के साथ ही मरने की कला का बोध भी देता है।
- संसार में वे धन्य हैं, जिनके हृदय में गुरु का वास होता है। पर, वे धन्य-धन्य हैं, जो चेले होकर गुरु के हृदय में स्थान पाते हैं।
- मन से आसक्ति की ज्वाला को बुझा देने का नाम ही संथारा है।
- दया में विवेक होना चाहिए। अविवेक ने दया को बदनाम कर दिया।
- मृत्यु की विभीषिका पर विजय प्राप्त कर लेना संथारा है।

-हीरा प्रवचन-पीयूष से संकलित : श्री पी. शिखरमल सुराणा, चेन्नई

प्रवचन

पहचानें आत्मा का मूल्य

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. द्वारा नासिक के रविवार पेठ स्थित स्थानक में 10 मार्च 2001 को फरमाए इस प्रवचन का आशुलेखन श्री नौरतनजी मेहता द्वारा किया गया है। प्रवचन में शरीर की अपेक्षा आत्म-शुद्धि पर बल प्रदान करने, नियमित सामायिक धर्म-स्थान में करने तथा भावी पीढ़ी को संस्कारशील बनाने की प्रेरणा की गई है।-सम्पादक

तीर्थंकर भगवान महावीर की आदेय-अनमोल वाणी में मुख्य रूप से दो तत्त्व कहे गये हैं। एक है- जीव, दूसरा है-जड़। एक आत्मा, दूसरा शरीर। एक चैतन्य, दूसरा पुद्‌गल। इन दो तत्त्वों में एक स्थायी है, सदा साथ रहने वाला है। अनन्त ज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्त सुख का खजाना है। दूसरा अस्थायी है, चंचल है और धोखेबाज है। सेवा-शुश्रूषा और सार-सम्भाल करने पर भी वह साथ देने वाला नहीं है।

मैं आपसे एक पृच्छा करूँ- इन दो तत्त्वों में एक स्थायी है और दूसरा अस्थायी है तो इन दोनों में से किसको अधिक समय देना चाहिये? एक नौकर मालिक के लिए जी जान लड़ाने वाला है। वह अपना सुख भुलाकर मालिक की इच्छानुसार चलने वाला है। दूसरा नौकर अवसर की बाट जोहता है। ज्यों ही अवसर हाथ लगा, वह माल लेकर भाग जाने वाला है। दोनों नौकरों में आपको कौनसा प्यारा है? एक सुख-दुःख में सहयोगी है, एक अपने ही दुःख की दास्तान कहने वाला है। आपको कौनसा प्रिय है? (सभा में से आवाज-मालिक की इच्छानुसार चलने वाला।)

इसी प्रकार आपको स्थायी आत्म तत्त्व प्रिय है या अस्थायी शरीर? आपको भले ही शरीर प्यारा हो, किन्तु यह बात अच्छी तरह जान लें कि अगर आत्मतत्त्व नहीं रहा तो फिर इस शरीर को कोई पूछने वाला नहीं है। मैं प्रश्न करूँ? कोई देर से आवे तब भी आगे पधारो सा क्यों कहते हो? आगे क्यों? क्या चमड़ी गौरी है इसलिए? गले में हार पहना हुआ है इसलिए? किसी बँगले के मालिक हैं इसलिए? संघ में अधिकारी हैं इसलिए? (श्रावकों में से कोई जवाब नहीं मिलता है।) जवाब भी मैं ही दूँ। अन्य कारण के होते हुए एक प्रमुख कारण है- आपके भीतर में यह आत्मदेव विराजमान है इसलिए। यदि आत्मा ही नहीं रहेगी तो किसको क्या कहेंगे? शरीर में से आत्मा निकल जायेगी तो इसे कौन पूछेगा? देखिये, अभी कहते हैं पधारो सा और आत्मतत्त्व नहीं रहने पर उन्हें जल्दी निकालो कहने लगते हैं।

मतलब, महत्त्व है इस चैतन्य का। आप चैतन्य की कद्र करते हैं। ठीक है, आप चैतन्य की कद्र करें, शरीर की कद्र भी करें, किन्तु मुझे कहना है कि चैतन्य के लिए आप कितना समय दे रहे हैं और इस नश्वर शरीर के लिए कितना समय दे रहे हैं?

एक आत्मा है, एक शरीर है। इन दो तत्त्वों के लिए समय का विभाजन करिए। विभाजन में एक हिस्सा आत्मा के लिए, एक हिस्सा शरीर के लिए। दिन-रात के चौबीस घण्टों में से बारह-बारह घण्टे आते हैं। आत्मा के लिए बारह घण्टे देने के लिए कौन तैयार है? किनके नाम लिखूँ? मैं शरीर के लिए मना नहीं करता। शरीर है, तो उसके लिए समय चाहिए। परिवार है, उसके लिए भी समय चाहिये। बच्चों के लिए भी समय चाहिये। चलो, आप समय का चार भागों में बँटवारा कर लीजिये। फिर भी छः घण्टे का समय चैतन्य के लिए दीजिए।

यह जीवन अनित्य है, विनाशी है। ठाणांग सूत्र के तीसरे ठाणे में कहा गया है कि देवता भी अपनी आयुष्य पूर्ण होने के भय से काँप उठते हैं। उनके रोंगटे खड़े हो जाते हैं। देवता चिन्तन करते हैं कि यह दिव्य ऋद्धि, दिव्य विमान और विपुल सामग्री जो मुझे प्राप्त है, वह जाने वाली है, इस चिन्तन मात्र से वे काँप उठते हैं। देवता की कांति में कुमलाहट जैसे संकेत आते हैं तो वे समझ जाते हैं कि छः महीने के भीतर-भीतर उनका वहाँ से प्रस्थान हो जायेगा। देवताओं के तेरह बोल हैं, जिनको देखकर उन्हें महसूस हो जाता है कि अब प्रस्थान का समय निकट है। जानकारी देवताओं को ही नहीं, मनुष्यों को भी हो सकती है। काले बाल धोले हो जाना किसका सूचक है? आप ख़िजाब लगाकर सफेद बाल भले ही काले कर लें, पर मानकर चलिये इस तरह का जोड़-तोड़ भी काम में आने वाला नहीं है। आप जरा चिन्तन तो करें, साथ क्या लेकर जायेंगे? न मानव कुछ साथ ले जायेगा, न देवता ही। हाँ, अवधिज्ञान से देवताओं को यह ज्ञात हो सकता है कि उन्हें वहाँ से कहाँ जाना है?

देवता अवधिज्ञान से देखते हैं कि उन्हें कीचड़ के कीड़ों के रूप में उत्पन्न होना है तो उन्हें धूजणी छूट जाती है। आपको कोई गन्दगी सेवन करने के लिए कहे तो.........?

यह तन अशुचि का भण्डार है। आप अब भी अगर साधना नहीं करेंगे तब कब करेंगे? देवता चिन्तन करते हैं, पर उनके लिए कोई उपाय नहीं है। बिना मनुष्य जन्म के न कोई साधना कर पाया है, न कर सकेगा। देवता विचार करते हैं- हमें यह ऋद्धि-सिद्धि और सुख-साहिबी छोड़कर जाना पड़ेगा, पर मनुष्य जन्म मिल गया तो उसे सार्थक करना है। मनुष्य जन्म पाकर आपने यदि करणी नहीं की, तो क्या नरक में या तिर्यंच में साधना होगी?

आप अभी धर्मस्थान में बैठे हैं, वीतराग वाणी श्रवण कर रहे हैं। यदि महाराज नहीं

आए हुए होते, तो क्या आप यहाँ होते? महाराज आए हुए हैं इसलिए यहाँ है। कुछ महाराज को राजी करने आते हैं, कुछ लोक-लाज से आते हैं, तो कुछ यह सोचकर कि हमारे पिताजी संघ में काम कराने वाले थे, इसलिए चलना चाहिये। कुछ महाराज नए आए हैं, चलो देखें तो सही, कैसे हैं, सोचकर आते हैं। आज महाराज आए हैं, इसलिये यहाँ उपस्थित हैं, पर आप में से कितने लोग हैं, जो सन्त हों न हों, अपनी साधना करने नियमित यहाँ आते हैं?

मैं आपसे पूछूँ- आपको भूख लगती है, तो क्या करते हैं? क्या घर में कोई मनुहार करे तब ही आप खाना खाते हैं? पत्नी परोस कर लाए तब ही भोजन करते हैं? भूख लगने पर कभी कोई घर में हो न हो आप स्वयं लेकर भोजन करने भी बैठ सकते हैं। तब आपको न मनुहार की जरूरत है, न परोसने वाले की। मारवाड़ में एक प्रचलित कहावत है-''भूख राँड भूँडी, जाय सम्भाले कूँडी।'' घर में हाथ से ले लेंगे और कदाचित् घर में खाने की वस्तु नहीं भी हो तो होटल पकड़ लेंगे। भूख में मनुहार की जरूरत नहीं। ऐसे ही कभी रोग हो जाय, तो खुद आगे होकर अस्पताल चले जायेंगे, डॉक्टर को दिखायेंगे। आपको भूख में और रोग-निकन्दन में मनुहार की जरूरत नहीं, पर भवरोग मिटाने हेतु आप क्या करते हैं? इस पर चिन्तन करने की आवश्यकता है। मैं छः, आठ, बारह घण्टे की बात नहीं कहता, किन्तु आत्म-तत्त्व के लिए एक घण्टा निकालने की बात भी कहूँ तो वह भी भगवान के भरोसे है। आपको मौके की दुकान चाहिये। मौके की दुकान के लिए पगड़ी देनी पड़े, तो भी आप देने को तत्पर रहेंगे, किन्तु घर छोड़कर धर्मस्थान में आकर सामायिक करने की बात कही जाय, तो वह शायद आसानी से गले नहीं उतरती। आचार्य भगवन्त कभी-कभी फरमाया करते थे- सामायिक में चार प्रकार की शुद्धियाँ होनी चाहिये- द्रव्य शुद्धि, क्षेत्र शुद्धि, काल शुद्धि और भाव शुद्धि। जब तक द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से सामायिक शुद्ध नहीं होगी, आपको सामायिक का आनन्द नहीं आयेगा। घर में सामायिक के समय कभी फोन की घण्टी घनघनायेगी, कभी दूधवाला आवाज देगा, कभी बच्चों के रोने की आवाज आएगी, तो कभी आने-जाने वालों का व्यवधान रहेगा। कई भाई जो घर में सामायिक करते हैं, वे कहते हैं- ''बाबजी! स्थानक दूर है, आने-जाने में व्यर्थ समय जाता है।'' आज आपको मुम्बई दूर नहीं लगती, अपनी मिल दूर नहीं लगती, अस्पताल दूर नहीं लगता, लेकिन धर्मस्थान दूर लगता है। कल एक भाई जलगांव से आया। वह बोला- ''जलगाँव से नासिक लोकल ट्रेन में चढ़ना बहुत मुश्किल है। बाल-बच्चे एवं सामान साथ हो तो शायद चढ़ नहीं पाएँ। क्यों? जलगाँव से पाचोरा और चालीसगाँव तक के लोग अप-डाउन करते हैं। सैकड़ों लोग रोज आते-जाते हैं। नौकरी पेशा वाले, काम-धंधा वाले, स्कूल-कॉलेज

वाले सुबह जाते हैं, शाम को लौटते हैं। चालीसगाँव से जलगाँव कितना दूर है, पर रोज आने-जाने वाले हैं। नासिक से मुम्बई दूर नहीं लगता। सुबह जाकर शाम को आ जाते हैं। मतलब सौ-पचास किलोमीटर आपको दूरी नहीं लगती, लेकिन धर्मस्थान दूर लगता है।''

आपको धर्मस्थान में आकर सामायिक की रुचि नहीं जगी और न ही सामायिक में अतिचारों का विचार आया। मैं आपसे पूछूँ- आप भोजन करने बैठते हैं, तो क्या कचरे से भरे हाथ नहीं धोते? बहिन कभी हलुआ बनाए और कढ़ाई में रेत पड़ी है, तो वह क्या करती है? क्या पहले रेत साफ करती है या कढ़ाई में सीधा घी डालती है? खीचड़ी में एक कंकर आपको बर्दाश्त नहीं होता, लेकिन सामायिक में लगने वाले अतिचार कैसे बर्दाश्त होते हैं? अतिचार पर आपका विचार तक नहीं जाता, इसलिए आप एक घण्टे भर के लिए सामायिक के निमित्त घर नहीं छोड़ते।

हम आचार्य भगवन्त (आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.) के सान्निध्य में विहार करते हुए जा रहे थे। एक जगह लिखा था-नो स्मोकिंग। वहाँ मिलिट्री का बारुद रखा हुआ था। कोई चिनगारी आग पकड़ सकती है, इसलिए उस क्षेत्र के लगभग एक किलोमीटर की परिधि में आग जलाना, बीड़ी-सिगरेट पीना, अगरबत्ती तक लगाना निषिद्ध था। रोटी बनानी हो, तो भी एक किलोमीटर की सीमा से बाहर। जैसे- सेना के रखे बारुद के लिए चिनगारी कभी भी विस्फोट कर सकती है, उसी प्रकार घर में रहते हुए ममता से बचा नहीं जा सकता। कभी बच्चा रोता है, कभी बच्चों में झगड़ा होता है, कभी कोई आता है, तो कभी कोई जाता है। जो समता धर्मस्थान में रह सकती है, वह घर पर नहीं रह सकती। (श्रोताओं द्वारा गर्दन हिलाकर स्वीकृति) आप गर्दन तो हिला रहे हैं, पर गर्दन हिलाने से काम नहीं चलता। आप शुद्ध सामायिक करना चाहते हैं, तो आपको धर्मस्थान में आने का पुरुषार्थ करना पड़ेगा।

कल सायं मैं गोदावरी नदी की ओर स्थंडिल के निमित्त गया। लौटते समय मैंने 20-25 माताएँ देखी, जो अपने-अपने बच्चों को स्कूल से लेकर आ रही थीं। स्कूल भेजना और लाना किसका काम? वहाँ तो माता-पिता अपना कर्त्तव्य समझते हैं, पर किसी बच्चे को सामायिक सिखानी हो, तो उनके मुँह से सहसा निकलता है- हमने मास्टर रखा है, उसका फिर क्या काम? मुझे लगता है व्यावहारिक शिक्षण के लिए माता-पिता अपना कर्त्तव्य समझकर भाग-दौड़ करते हैं, किन्तु धर्म के संस्कारों के लिए उनमें उपेक्षा पाई जाती है। धर्म के संस्कारों के लिए आपकी अगर इसी तरह उपेक्षा रही तो मानकर चलिये भावी पीढ़ी सुरक्षित नहीं रह सकेगी। आपको बेटे की चिन्ता है, पोते और पड़पोते की चिन्ता है, माँ-बहन-भाई के लिए और दुकान-मकान के लिए सोचने वाले हैं, पर आपमें

से कितने हैं जो यह सोचते हैं कि हमारे जीवन के पचास वर्ष पूरे हो गये, इन पचास वर्षों से हमारे से कितने पाप छूटे हैं? रोज हिंसा हो रही है, रोज झूठ बोले जा रहे हैं, बिना हेरा-फेरी के काम नहीं चलता। पचास-साठ-सत्तर वर्ष के हो गये, फिर भी मोह-ममता नहीं छूटी। आप ही बतायें-आपने कौनसे पाप छोड़ दिए? इतनी उम्र हो गई, फिर भी कहना कुछ, करना कुछ। याद रखिये- पाप छूटे बिना न किसी की गति सुधरी है, न सुधरने वाली है।

आज कुछ लोग हैं, जो दूसरों के लिए पृच्छा करते हैं कि अमुक व्यक्ति सम्यक् दृष्टि है या नहीं? दूसरों को देखने के बजाय आप अपना निरीक्षण करें, अपने विषय में सोचें। अपने आपका चिन्तन करें कि अपनी ममता छूटी है या नहीं। अपने पाप घटे हैं या नहीं। आपको मैं कहना चाहूँगा कि आपके लिए तो कुण्डे में रत्न हैं। आपको समुद्र में गोते लगाने की जरूरत नहीं। आप थोड़ी-सी साधना में भवतारी बन सकते हैं। भगवान महावीर प्रभु का यह शासन इक्कीस हजार वर्ष बीतने तक चलेगा। आखिरी समय तक एक साधु, एक साध्वी, एक श्रावक, एक श्राविका रहेंगे। भले ही उनकी बीस वर्ष की उम्र रहेगी, उपवास मासखमण जैसा लगेगा, पर शासन के अन्त तक एकभवतारी होंगे।

मैं कह गया आज साधन बढ़ाये जा रहे हैं। किन्तु जितने साधन बढ़ रहे हैं, उतनी साधना नहीं बढ़ रही। बैठके (आसन) नहीं होंगे तो हजार-पाँच सौ बैठकों के आर्डर देकर मँगवा लेंगे। चातुर्मास नहीं है, तो विनति करके मंजूरी ले आयेंगे। विनति करने वालों में भी कुछ ऐसे हैं, जो समझते हैं कि हम तो महाराज को विनति करके ले आए। अब महाराज जाने, महाराज का काम जाने। मैं साधन का निषेध नहीं करता, पर साधना की ओर आज जो उपेक्षा देखी जा रही है, वह ठीक नहीं है।

अगर पदाधिकारी लोग धर्मस्थान में पहले आकर बैठें, तो यहाँ भीड़ लग सकती है। साधनाशील अधिकारी विरले हैं। मुझे कहना यही है कि सहज रूप से निवृत्त हुए लोग जिनके ऊपर घर गृहस्थी की जिम्मेवारी नहीं, वे तो धर्मस्थान में आकर साधना के क्षेत्र में आगे बढ़ें। कई भाई ऐसे भी हैं, जिनके विनयशील पुत्र हैं और वे कहते भी हैं- "पिताजी! आपको दुकान पधारने की जरूरत नहीं, आप तो धर्म-ध्यान करें।" मारवाड़ी में एक कहावत है- 'बीदँ रे मुण्डे लाराँ पड़े तो जानी बेचारा काँई करें।' वह खुद लकड़ी का सहारा लेकर दुकान जाये तो उसका क्या किया जाये? मैं फिर कह रहा हूँ- साधना के लिए साधन चाहिये, धर्मस्थान चाहिये, धार्मिक उपकरण चाहिये, उपदेश भी चाहिये। किन्तु इनकी उपयोगिता तभी होगी, जब साधक स्वयं साधना के लिए तैयार होंगे। मैं नासिक वालों का आह्वान करता हूँ- आप साधना के क्षेत्र में अपने चरण आगे बढ़ायें। सन्त हों, न हों आपकी साधना निरन्तर चलनी चाहिये। अगर आपकी साधना निरन्तर चलती रही तो सिद्धि आपसे

दूर नहीं।

स्थानकवासी समाज सामायिक और स्वाध्याय के बल पर टिका हुआ है। सामायिक-स्वाध्याय की उपेक्षा से कितने ही भाई बिखर गये। दूसरे शब्दों में कहूँ तो सामायिक-स्वाध्याय की उपेक्षा से अनेक भाई बिगड़ गये, नास्तिकता की ओर बढ़ गये। इस बिगाड़ में एक कारण 'समय नहीं है' को भी कहा जा सकता है।

यदि आपका सामायिक-स्वाध्याय और साधना का क्रम बना रहेगा तो वह आपके लिए तो हितावह होगा ही, भावी पीढ़ी के लिए भी आदर्श होगा। जो करेगा वह तिरेगा। इसी भावना के साथ......। ■

'क्षमा' मिटा दे बैर-बुराई

श्री दिलीप गाँधी

जीवन की भूलों को भूलो अभी
दुर्भाव दिल में, ना रखो कभी
फासले बढ़ाकर हों ना दुःखी

तन के घाव तो मिट जाते हैं
मन के घाव ना मिट पाते हैं
बोलें अगर हम मीठी बोली
मिलती दिल से, दिल में खुशी
फासले बढ़ाकर हों ना दुःखी

'क्षमा' मिटा दे वैर बुराई
बिछुड़े कभी ना भाई-भाई
थोड़ा अगर हम पालें संयम
आँसू की सूख जाये नमीं....
रहना सबसे अब हिल मिल

टूटे कभी ना कोमल ये दिल
'गाँधी' क्षमा से सुधरे गति
जीवन की भूलो को भूलो अभी...
फासले बढ़ाकर हों ना दुःखी।।

-चित्तौड़गढ़ (राज.)

प्रवचन

अब तो चेतो रे भाई

मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.सा.

मधुर व्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. द्वारा आषाढ़ शुक्ला 14 वि.स. 2071 चौमासी पर्व के अवसर पर 11 जुलाई 2014 को शक्ति नगर, जोधपुर के स्वाध्याय भवन में फरमाए इस प्रवचन का संकलन एवं सम्पादन श्री पुखराज जी मोहनोत, जोधपुर ने किया है।-**सम्पादक**

बचपन में जब थोड़ी-सी समझ विकसित हुई ही थी तब एक वाक्य पढ़ने को मिला। उसके बाद तो अनेक विद्यालयों में उस वाक्य को प्रायः लिखा हुआ देखा। वाक्य का अर्थ और उसका आशय समझ से परे था। कुछ अबोधता थी। पर नासमझी में भी पुनः पुनः पढ़ते-पढ़ते उस वाक्य को याद कर लिया। कहना चाहिए- रट लिया। जब कंठाग्र हो गया तो उसका आशय, अर्थ जानने समझने की ललक उत्पन्न हुई। उम्र के साथ कुछ समझ बढ़ी तो उसका अर्थ भी समझने को मिला और आशय भी समझने को मिला।

समय के साथ आयु बढ़ी। बचपन से किशोरवस्था में पहुँचा तब धर्म-गुरुवरों के सम्पर्क में आया, जिनवाणी श्रवण के अनेक अवसर मिले, जिनशासन- जैन सिद्धान्तों से समझ बढ़ी। बस, इसके साथ ही उस वाक्य का अर्थ और आशय भी कुछ अलग-सा लगा। "क्या अर्थ निकला, क्या आशय दिल-दिमाग पर छाया?" यह बताने से पूर्व आपकी इतने समय से जागृत हुई जिज्ञासा एवं उत्कंठा को शांत करना आवश्यक है। आप सभी जानना चाहते हैं- वह वाक्य क्या था? तो जान लीजिए, वह वाक्य था- "आवश्यकता आविष्कार की जननी है।" वाक्य आप सभी ने सुन रखा है। याद भी है आप सभी को। आपने क्या अर्थ समझा इस वाक्य का? लगभग सभी के दिमाग में एक ही अर्थ है। सभी यही आशय लेते हैं कि समय के साथ मानव को जो-जो जरूरत पड़े, जैसी-जैसी आवश्यकता का अनुभव हो, वैसे-वैसे आविष्कार करना, नये निर्माण करना। सांसारिक लोग अधिकांशतः यही अर्थ लगाते हैं, भौतिकता से इस वाक्य का आशय जोड़ते हैं। बाह्य वातावरण से, जागतिक पदार्थों से ही अपना आशय लगाते हैं।

यह इक तरफा अर्थ है। साधारण सिक्के के जैसे दो पहलू होते हैं, वैसे ही शब्द व वाक्य के भी भिन्न-भिन्न अर्थ निकलते हैं। जैन-धर्म, जैन-सिद्धांत तो अनेकांत का पोषक है, अतः प्रत्येक शब्द, वाक्य के दो व दो से अधिक अर्थ निकलते हैं, चाहिए रुचि रखकर

और उसमें डूबकर अनेक आशय निकालने वाला। साधकों के जीवन में, उनके चिन्तन में भी यह वाक्य अलग अर्थ देने वाला है। साधना पक्ष में इस वाक्य (आवश्यकता आविष्कार की जननी है) का अर्थ होगा- दुःख से मुक्ति की आवश्यकता अनुभव करने वाले व्यक्ति की साधना के पथ में आने वाली रुकावटों को पार करने के लिए योग्य धर्म-मार्ग का अनुसंधान करना। जहाँ-जहाँ अंधकार हो वहाँ-वहाँ प्रकाश फैलाने वाली साधना को अपनाना। यह अर्थ साधकों के भीतर में साधना की प्यास जगाता है। उनके अन्तर में व्रत, प्रत्याख्यान, तप, त्याग आदि की चाह जगती है। वे तब संसारी से सिद्ध, रागी से वैरागी, पतित से पावन बनने के लक्ष्य पर स्थिरता एवं दृढ़ता से अपने कदम बढ़ाने की भावना से ओतप्रोत बन जाते हैं।

इस तरह की आवश्यकता की अनुभूति के पीछे एक चिन्तन होता है। साधक सोचता है- अब तक कितने जन्म व्यर्थ खो दिए मैंने। कितने-कितने दुःख विगत जन्मों में सहन किए मैंने। असह्य को मजबूरन सहन करना पड़ा। पर अब क्या है मेरी आवश्यकता? कब मैं उस सुख की प्राप्ति कर सकूँगा, जो आने के बाद कभी फिर जावे नहीं। कब मुझे वह मंजिल मिल पाएगी जिसके आगे कोई राह ही नहीं। आवश्यकता की इस अनुभूति ने, परम सुख की इस जिज्ञासा ने उसके भीतर मंजिल तक पहुँचने के लिए विभिन्न आविष्कारों को जन्म दिया। आप भी अपनी दृष्टि, अपना विचार और अपनी सोच को परिवर्तित कर एक नई दिशा दें। अपने को उस परम सुख और चरम मंजिल के साथ जोड़कर देखें।

विश्व के समस्त जीव सुख प्राप्ति की इच्छा रखते हैं। दुःख कोई नहीं चाहता। पर सुख क्या है, कहाँ है, कैसा है। वास्तविक सुख से जीव बहुत दूर है। वस्तुतः वह भ्रम में गुमराह हो रहा है। यही कारण है कि इस जीव ने आज तक सुख के नाम पर दुःख को ही हासिल किया है। एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक सभी जीव चाह तो सुख की करते हैं, पर भटक रहे हैं वे। दुःख को सुख मान बैठे हैं। सुख को ठीक तरह से समझना है। कौन समझाएगा? कैसे समझेंगे? यह बताती है जिनवाणी। यह बताते हैं आपके धर्मगुरु। यह बताने ही आता है, आया है, आएगा चातुर्मासी जैसा पर्व। आवश्यकता समझें और आविष्कार करें। अपनी दशा और दिशा बदलें। नव-निर्माण में लग जाएँ। ऐसा निर्माण, ऐसा आविष्कार कि फिर किसी अन्य निर्माण की आवश्यकता ही नहीं रहे। सांसारिक आविष्कार तो कभी न कभी आउट डेटेड होते रहते हैं, पर यहाँ जिस आविष्कार की बात की जा रही है, वह सदैव अपडेट ही रहता है।

एक वर्ष में तीन चौमासे होते हैं, पर चातुर्मास, जिसमें संत-सती एक जगह पर चार मास तक निवास करते हैं और श्रावक-श्राविका आत्मा के उद्धार हेतु धर्म-ध्यान अधिक

करते हैं, ऐसा चातुर्मास एक है- श्रावण से कार्तिक तक।

इस चातुर्मास से सम्बन्धित दो चौमासी होती हैं। एक बैठती चौमासी और दूसरी उतरती चौमासी। दोनों अलग-अलग हैं, पर दोनों मंगलकारी और आत्मधर्म से जोड़ने वाली। आती हुई चौमासी स्थिरता का संदेश देती है। यह कहती है कि- हे जीव! अब तक तू बहुत भटका। चार गति, चौरासी लाख जीवयोनि में ठोकरें खाता रहा। नरक-निगोद से स्थावर और त्रस काय योनियों में कितने-कितने दुःख तूने उठाए। पर अब यह चौमासी कह रही है- 'भटकना छोड़, स्थिर बन।' आप जानते हैं, हम संत-सती चार माह ग्राम-ग्राम, नगर-नगर विचरण नहीं करके, एक ही जगह स्थिर बन जाते हैं। हमारा जो आगम-विधान है, उसमें नौ कल्पी विहार का उल्लेख मिलता है। वर्ष के आठ माह में आठ कल्प, और यह - श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक का चातुर्मास नौंवा कल्प है। यह चातुर्मास स्थिरता का विशेष संदेश देने वाला है। इसका उद्घोष है- "अब तक बहुत भटका, अब स्थिर बन। ऐसा स्थिर कि फिर भटकना ही न पड़े।" अब तक क्या हुआ? सुनिए-

रिश्ते अनन्त हमने हर जीव से बनाए।
कोई जगह न ऐसी जहाँ पर जनम न पाए।।
चारों गति भटकते, नहीं पा सके किनारा।
शासन मिला प्रभु का, सौभाग्य है हमारा।।
आराधना हो ऐसी, नहीं जन्म लें दुबारा।
शासन मिला प्रभु का, सौभाग्य है हमारा।।

भगवती सूत्र में उल्लेख मिलता है-"इस लोक का एक भी आकाश-प्रदेश ऐसा नहीं हैं, जहाँ इस जीव ने जन्म-मरण नहीं किया हो और कोई भी जीव ऐसा नहीं है, जिससे इस जीव का कोई न कोई संबंध न बना हो। इस जीव की अब तक की जीवन-यात्रा अत्यन्त दर्द भरी, समस्याओं से सरोबार और वेदनाओं का अम्बार ही है। इस बार किसी विगत जन्म के कुछ सत्कर्मों का योग मिला है अतः मानव जन्म, उत्तम कुल के साथ संदर्भ और सद्गुरु का सद्भाव मिला है। आगे बढ़ने, आत्म-विकास करने और आत्मा के उद्धार करने की अनुकूलता प्राप्त हुई है। अब तो चिन्तन कर कि पापों और कर्मों से मुक्त होने की साधना करने, मोक्ष प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ करने का ऐसा स्वर्णिम अवसर फिर कहाँ मिलेगा? एक स्थान पर स्थिर होने का ऐसा सुनहरा अवसर! ऐसा स्थान जहाँ जन्म नहीं, जरा नहीं, मरण नहीं, रोग नहीं, शोक नहीं, दुःख नहीं, दर्द नहीं, कर्म नहीं, काया नहीं, मोह नहीं, माया नहीं, चाकर नहीं, ठाकर नहीं। ऐसा स्थान जहाँ आत्मा ज्योति में ज्योति बन विराजमान हो जाए। ऐसा ही स्थिरता का संदेश महावीर प्रभु के युग में माता भद्रा ने अपने

पुत्र शालिभद्र को दिया।

जब शालिभद्र प्रभु वीर के चरणों में दीक्षित होते हैं तब उनकी माता भद्रा उन्हें संयम पथ पर अग्रसर होने के लिए धन्य,धन्य कहती है। साधन-सुविधाओं से जुड़े होने और छूट नहीं पाने के कारण अपने आपको कायर बताकर इन्हें तृणवत् त्याग मोक्ष पथ पर आगे बढ़ जाने वाले पुत्र की वीरता की प्रशंसा करती है। इसके साथ ही वह कहती है- मेरे लाल! साधना के पथ पर तुम्हारे कदम बढ़ गए हैं। धन्य है तुम्हारी यह वीरता। मेरा हृदय तुम्हारे लिए इस समय अनन्त हितकामना से ओतप्रोत है। मैं एक छोटी-सी सीख देना चाहती हूँ, जिसका तुम्हें जीवन-पर्यन्त ध्यान रखना है। उस माता की सीख थी-

''सुण म्हारा जाया, करणी करता, कोई परमाद मती कीजो।
मुझको छोड़कर और जननी घर जनम मती लीजो।।''

''हे मेरे लाल! अपने साधक जीवन में ऐसे अप्रमत्त बनकर रहना, ऐसी विशिष्ट साधु-चर्या का पालन करना, ऐसे विशिष्ट करण के पुरुषार्थी बनना कि तुम्हें फिर से जन्म-मरण नहीं करना पड़े, किसी अन्य माता के गर्भ से अब कभी जन्म नहीं लेना पड़े। मैं चाहती हूँ कि मैं ही तेरी अन्तिम माता कहलाऊँ, मुझे ही यह जग तुम्हारी अन्तिम माता के रूप में जाने-पहचाने।''

उस महनीय माता की यह सीख हम सबके लिए भी है। इस चौमासी पर्व की भी यही सीख है कि बहुत भटक लिए, बहुत गोते खा लिए, बहुत दुःख प्राप्त कर लिए। संसार में ही रमे रहे, जागतिक पदार्थों में ही उलझे रहे तो क्या होगा? संसार के कार्य इस जन्म में तो क्या अनंत जन्मों तक भी पूरे नहीं हो पाएँगे। अनन्त भव कर लिए और अनन्त भव आगे भी कर लेंगे। पाप में ही जीव रमण करता रहा तो ठोकरें ही खानी है। पाप से भयभीत बनें। आश्चर्य तब होता है, जब देखते हैं कि आज आदमी की गति उल्टी मति की हो रही है। वह पाप से दूर होने की जगह करुणा, सहृदयता, प्रेम आदि से दूर हो रहा है। पाप में दिन-ब-दिन अधिक निर्भय बनता जा रहा है। उसे जहाँ कर्मबंध से भयभीत बने रहना चाहिए, आज वह कर्मबंध से व उसके परिणाम से बिल्कुल भयभीत नहीं है और संसार सुख के नाम पाप करते एवं कर्मबंध करते भयभीत होने की अपेक्षा खुश हो रहा है।

याद करो भगवान महावीर ने अपने त्रिपृष्ठ वासुदेव के भव में क्रोध में आकर शय्यापालक के कानों में पिघला सीसा डलवाया था, क्या परिणाम मिला उसका? गजसुकुमाल के जीव ने निन्यान्वे लाख भव पूर्व नन्हें शिशु के सिर पर एकदम गर्म रोटी रखी, जिससे वह मर गया। परिणाम क्या मिला? ऐसे कितने उदाहरण है आपके सामने। अन्तर में आत्मा की अनुभूति के साथ विचार करेंगे तो पापों में रुचि स्वतः छूट सकती है,

पर विचार करें तब न।

संत-सतियों का चातुर्मासिक स्थिरवास एक प्रेरणा दे रहा है। क्यों करते हैं वे स्थिरवास? वे अहिंसाप्रेमी हैं, छःकाय-प्रतिपाल हैं अतः उस अहिंसा के पालनार्थ, जीव-जन्तुओं व कीड़े-मकोड़ों की रक्षार्थ चातुर्मास में स्थिरवास करते हैं। वर्षा ऋतु में चारों ओर हरियाली ही हरियाली और हर पथ, हर डगर में नन्हें जीवों का वास होता है। उनकी रक्षा सहज संभव बन जाती है। उनका स्थिरवास संघ-वृद्धि के लिए, प्रवचन-प्रभावना के लिए और आत्महित के कारणों से भी होता है।

आपको भी अपने आत्महित का विचार करना है। आज का दिन धर्म-प्रेरणा का दिन, आज का पर्व आत्म-जागृति का पर्व है। विचार करना है कि कैसे हो यह चातुर्मास, संतों का स्थिरवास, पूज्य उपाध्यायश्री का यहाँ चार माह तक अपने संत-समुदाय के साथ विराजना?

याद करिए इस अवसर्पिणी काल के प्रथम चक्रवर्ती भरत को। उनके समक्ष जब एक ही दिन तीन-तीन शुभ सूचनाएँ एक साथ आईं।

एक शुभ सूचना में आयुधशाला के प्रबंधक ने निवेदन किया-महाराज! आज आयुधशाला में चक्ररत्न की प्राप्ति हुई है। तभी दूसरी शुभ सूचना महलों में पुत्ररत्न उत्पन्न होने की मिली और उसी समय बागवान ने महाराज को नमन करके कहा- भगवान ऋषभदेव को कैवल्य की प्राप्ति हुई है।

भरत षट् खंडाधिपति थे। क्या उनकी ऋद्धि और क्या उनकी समृद्धि! वर्णनातीत। दो मिनट के लिए भरत महाराज कुछ सोच में डूबे रहे कि पहले कौनसे महोत्सव का आयोजन किया जाये? उन्होंने चुना कैवल्य-महोत्सव को प्रथम स्थान पर। प्राथमिकता दी धर्म को, कर्म को नहीं।

चौमासे के लिए अन्य स्थानों की विनतियाँ भी गुरुदेव की सेवा में पहुँची। लॉटरी खुली आपके नाम की। अब आपका क्या विचार? यही कि गुरुदेव तो पधार ही गए, चौमासा हो ही गया। अब तो गुरुवर यहीं विराजेंगे। अब क्या चिन्ता? धर्म के नाम पर यदि कोई चिंतन नहीं, जीवन में कुछ बदलाव लाने का संकल्प नहीं, तो यहाँ आना, प्रवचन सुनाना तथा सामायिक की पोषक और व्रत आदि भी उतने फलदायी नहीं होंगे, जितने होने चाहिए। आज इस अनुकूल वातावरण में भी धर्म-कार्य में पुरुषार्थ नहीं किया और केवल सांसारिक पापमय जीवन को प्रधान रखा तो भविष्य क्या होगा, जरा सोचें।

जयपुर में एक घर में गोचरी के लिए गया। बाई ने विनय एवं भावनापूर्वक गोचरी बहराई और कहा- गुरुदेव! इसे मांगलिक सुना दीजिए। मैंने देखा एक बच्चा शय्या पर

सोया था। वह जिंदा था, पर उसमें हलचल नहीं थी। लोथड़ा था वह, जिंदालाश कह सकते हैं उसे। पूछा- इसकी यह हालत कब से? बाई ने बताया- जन्म से। अब सोचिए! उसे आर्य क्षेत्र मिला, उत्तम कुल मिला, श्रावक के घर में जन्म लिया, पर क्या हालत है उसकी? हम यही कह सकते हैं कि उसकी करणी में कहीं न कहीं कमी रह गई।

आपकी करणी कैसी? कभी-कभी तो विचार आता है कि क्या पूरी की पूरी करणी में ही कसर है? क्या है आज का आपका जीवन। सुबह से शाम तक आरम्भ-समारम्भ, निन्दा-विकथा, कषाय और विकार, असंयमित जीवन का उदाहरण है एक-एक पल। पर आश्चर्य यह कि इस पर भी आप खुश हैं, कोई खेद, कोई आपत्ति नहीं। ध्यान रहे- संसार बढ़ाने की बुद्धि पर जितने अधिक खुश रहेंगे, कर्म उतने ही चिकने, निकाचित बंधेंगे।

हंस-हंस बांधता, पर नहीं जानता।
उदय में आसी रे, नाच नचासी रे।।

यह एक संकेत है, समझदार के लिए। जो समझ जाते हैं, वे तिर जाते हैं। अभी अहमदाबाद में एक साथ उन्नीस दीक्षाएँ हुईं। उनमें अनेक सी.ए., डॉक्टर, इंजीनियर, पोस्ट ग्रेजुएट व ग्रेजुएट थे। आप क्या हैं? किस बात पर आप इतरा रहे हैं और संसार को ही सब कुछ समझ उसी में रचे-पचे हैं। एक बात ध्यान में ले लीजिए, जिसने भी धरती पर जन्म लिया है, उसे एक दिन मरना है।

आ धरती अखंड कवारियाँ, वर किया केई लाख।
मुसलमान सब गड़ गए, हिन्दू हो गए राख।।

आपसे बढ़-बढ़कर अनन्तानन्त आए और चले गए। आपको किस बात का अहंकार है? जागृत बनें! सावधान बनें!! सावचेत बनें!!! आज चातुर्मास प्रारम्भ हो रहा है। संकल्प लें, इस पावन-दिन, पावन-पर्व पर कि आप अपने जीवन को नियमों, व्रतों से सजायेंगे। सामायिक, स्वाध्याय, पौषध प्रतिक्रमण से आत्मशुद्धि-आत्म-विकास करेंगे। आपका आज से लक्ष्य बनेगा- संयमित जीवन से संयम-ग्रहण करने की दिशा में बढ़ने का अन्तर में एक ही नाद गूंजे- ''संयम ही मेरा लक्ष्य हो।' ■

विशेष:-

1. अपने इस ओजस्वी और प्रेरणा से परिपूर्ण प्रवचन के बाद मुनिश्री ने रात्रिभोजन पर अत्यन्त हृदयस्पर्शी शब्दों में अपना उद्बोधन दिया।
2. प्रवचन में उपस्थित भाई/बहनों में से लगभग 80 प्रतिशत ने एक वर्ष के लिए सामूहिक-भोजों में रात्रिभोजन नहीं करने का संकल्प लिया।

जीवन-व्यवहार

बोलें प्रिय-हित-मित-निरवद्य वचन (2)

मुनि श्री मनीष सागर जी

3. मित वचन

जो बोलने की कला नहीं जानता, वह जीवन के किसी भी क्षेत्र में सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। बोलने की कला का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है- मित वचन अर्थात् कम बोलना। जो विज्ञ व्यक्ति होते हैं, वे प्रायः कम, लेकिन समुचित बोलते हैं, जबकि अज्ञ और मूर्खजन अधिक और अर्थहीन बोलते हैं। कहा भी गया है- **'विद्याविहीनाः बहुभाषकाः स्युः।'**[43]

व्यक्ति के पास सुनने के लिए दो कान और बोलने के लिए एक ही जीभ है। इसका संकेत यही है कि सुनो ज्यादा और बोलो कम।[44] वस्तुतः मुखरता आदमी को छोटा बना देती है। यह उसकी समझदारी की नहीं, अपितु नासमझी की परिचायक है। स्थानांगसूत्र में तो यहाँ तक कहा गया है कि **'मोहरिए सच्चवयणस्स पलिमन्थू'** अर्थात् मुखरता से सत्य का ही विनाश हो जाता है।[45] सूत्रकृतांगसूत्र में इसीलिए कहा गया है- **'निरुद्धगं वावि न दीहइज्जा'** अर्थात् थोड़े में कही जाने योग्य बात को व्यर्थ ही लम्बी न करें।[46]

मित भाषण मानव का महान् गुण है। जब काम की बात कम शब्दों में ही कही जा सकती है, तो बहुमूल्य शब्द-सम्पदा को व्यर्थ की बातों में खोने से क्या फायदा? चिकित्सकीय परीक्षण करने पर यह ज्ञात होता है कि बोलने की क्रिया में शारीरिक ऊर्जा का बड़ी मात्रा में व्यय हो जाता है। आवश्यकता से अधिक बोलने से बौद्धिक ऊर्जा का भी ह्रास होता है। कहा भी गया है- जिस प्रकार घनी पत्तियों वाले पेड़ में फल कम लगते हैं, उसी प्रकार अधिक बकवास करने वाले में बुद्धि का अभाव हो जाता है।[47] अतः सूत्रकृतांग का यह कथन सार्थक सिद्ध होता है कि व्यक्ति को मर्यादा से अधिक नहीं बोलना चाहिए।[48]

मितभाषिता एक महान् कला है, क्योंकि अधिक बोलना महत्त्वपूर्ण नहीं है, महत्त्वपूर्ण है- सारगर्भित बोलना। अब्राहम लिंकन का एक प्रसंग प्रसिद्ध है। किसी ने उनसे पूछा- "आप इतना अच्छा भाषण देते हैं, इसके लिए कितनी तैयारी करते हैं?" लिंकन ने कहा- "यह भाषण पर निर्भर है। यदि पंद्रह मिनट बोलना है, तो दो दिन चाहिए और यदि पाँच मिनट बोलना है, तो उसके लिए लम्बी तैयारी चाहिए। यदि दो घण्टे बोलना हो, तो अभी

बोल सकता हूँ, उसके लिए कोई तैयारी नहीं चाहिए।'' कम बोलने अर्थात् सारभूत और तथ्यपरक बोलने के लिए गहरी विचारणा अपेक्षित है। सूत्रकृतांग में इसीलिए सारगर्भित निर्देश दिया गया है[49]- **'अणुवीई वियागरे'** अर्थात् जो कुछ बोलें, पहले विचारें, फिर बोलें (Think before you speak)। वस्तुतः सारभूत बात को संक्षेप में कहने के लिए सारे कचरे हटाकर हीरा चुनना होता है।[50]

मितभाषी होने से व्यक्ति उचित समय पर उचित कार्य का निष्पादन कर सकता है, किन्तु जो व्यक्ति बहुत बातूनी होते हैं, वे हर समय, हर जगह और हर प्रसंग में भाषा के पुद्गलों को बिखेरते ही रहते हैं। सार्थक-निरर्थक का उन्हें भान तक नहीं रहता और इससे उनका कोई भी कार्य समयानुसार सम्पादित नहीं हो पाता। आचार्य तुलसी ने संस्कार बोध में कहा भी है[51]-

व्यर्थ बात में क्यों कभी, करें समय बरबाद।
बातेरी की बिगड़ती, रखें सूत्र यह याद।।

वाचाल व्यक्ति प्रारम्भ में अच्छे संगी-साथी एकत्र तो कर लेता है और जहाँ-तहाँ खूब प्रशंसा भी प्राप्त कर लेता है, लेकिन समय के साथ-साथ उसके संगी-साथी उसे समझ जाते हैं, तब वे जरूरत और स्वार्थ की पूर्ति हेतु उसके साथ रहते हैं और फिर दूर चले जाते हैं। वाचाल व्यक्तियों की समाज में दशा का व्यंग्यात्मक चित्रण करते हुए एक चीनी लेखक चुआंगत्से ने कहा है कि "A dog is not considered a good dog, because he is a good barker" अर्थात् एक कुत्ते को इसीलिए अच्छा नहीं माना जाता, क्योंकि वह बहुत अच्छा भौंकता है।[52] कभी-कभी तो व्यक्ति को अपनी वाचालता स्वयं पर ही भारी पड़ती है। उत्तराध्ययन में वाचालता के दयनीय परिणाम के लिए स्पष्ट कहा है- ''जिस प्रकार सड़े हुए कानों वाली कुतिया जहाँ भी जाती है, दुत्कार दी जाती है, उसी प्रकार शीलरहित, शरारती और वाचाल व्यक्ति भी सर्वत्र धक्के देकर निकाल दिया जाता है।''[53]

जैनागमों की भाषा सरल-सरस होते हुए भी परिमित है। इनमें अनावश्यक शब्दों का प्रयोग नहीं मिलता। संस्कृत वैयाकरणों के लिए प्रसिद्ध है कि वे अपनी रचनाओं में से एक भी अनावश्यक अक्षर को निकालने में सफल होते, तो पुत्रजन्मोत्सव जैसे आनन्दित होते थे। आज भी इसी शैली की आवश्यकता है, किन्तु इसके लिए हमें फालतू शब्दों के प्रयोगों से बचना होगा।[54]

उत्तराध्ययन में इसीलिए संक्षेप में हित शिक्षा दी गई है कि **'बहुयं मा य आलवे'** अर्थात् जितनी आवश्यकता हो उतना ही बोलना चाहिए, अधिक नहीं।[55]

मितभाषिता के लिए सबसे बड़ी बाधा है- विकथा। अक्सर जब हम किसी से मिलते हैं, तो कुछ औपचारिक बातें करने के पश्चात् किसी अनावश्यक विषय की चर्चा छेड़ देते हैं। फिर तो पता ही नहीं चलता कि समय कहाँ निकल गया। इन विषयों को जैनाचार्यों ने 'विकथा' कहा है। इनमें अनुरक्त होना 'प्रमाद' है। साधक इनसे विरक्त होने का प्रयास करता है। आचार्य भद्रबाहु ने तो यहाँ तक कहा है कि जो संयमी होते हुए भी प्रमादी है, वह जो भी कथा करता है, उसे 'विकथा' ही मानना चाहिए।[56]

व्यक्ति को इन विकथाओं को बोलने एवं सुनने में अपना कीमती समय एवं शक्ति का अपव्यय नहीं करना चाहिए। जैनाचार्यों के अनुसार, 'यदि हमें वार्ता करनी ही है, तो धर्मकथा ही करनी चाहिए, क्योंकि ये धर्मकथाएँ हमारे जीवन-प्रबन्धन का पाथेय होती हैं।' ओघनिर्युक्तिभाष्य में स्पष्ट कहा गया है- 'सद्गुणों की प्राप्ति के लिए धर्मकथा की जाती है।[57] धर्मकथाओं के माध्यम से होने वाली स्व-पर जीवनोपयोगी चर्चाएँ आत्मिक शान्ति और आनन्द की अभिवृद्धि करती हैं।

मितभाषिता का अर्थ अस्पष्टभाषिता बिल्कुल नहीं है। संप्रेषण अर्थपूर्ण एवं सुस्पष्ट होना चाहिए। वस्तुतः वचन की फलश्रुति है- अर्थज्ञान। जिस वचन को बोलने पर अर्थ का ही ज्ञान न हो सके, तो उस वचन से भला क्या लाभ?[58] विशेषावश्यकभाष्य में गुरु-शिष्य के उदाहरण के माध्यम से परस्पर अस्पष्ट-संप्रेषण की व्यर्थता पर कटाक्ष करते हुए कहा गया है- ''वह गुरु, गुरु नहीं, अपितु बधिर के समान है, जिससे पूछा कुछ और जाए तथा वह बताए कुछ और। इसी प्रकार वह शिष्य भी शिष्य नहीं है, जो सुने कुछ और तथा कहे कुछ और।''[59] दशवैकालिक में सन्तुलित संप्रेषण पर जोर दिया गया है। सामान्यतः 'कहने-सुनने' की क्रिया को समाज से पूरी तरह हटाया नहीं जा सकता। इसका अपना औचित्य एवं उपयोगिता है।[60] लेकिन इसमें 'कितने' का विवेक व्यक्ति की सजगता की कसौटी है, बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि वह न अति बोले और न अल्प।

दशवैकालिकसूत्र में ठीक ही कहा गया है- 'व्यक्ति स्वानुभूत, परिमित, असन्दिग्ध, परिपूर्ण और स्पष्ट वाणी का प्रयोग करे, किन्तु यह भी ध्यान रखे कि वह वाणी वाचालता से रहित और दूसरों को उद्विग्न करने वाली न हो।'[61]

पारस्परिक मनमुटाव से पनपी संवादहीनता मितभाषिता नहीं है। आज समाज इसी समस्या से गुजर रहा है। घर में अपने लोगों के बीच बैठकर भी कई बार अपनेपन की भावना नहीं रह पाती। कुछ भी कहने से पहले सौ बार सोचना जरूरी लगने लगता है कि कहीं कोई बात बढ़ न जाए और काम बिगड़ न जाए।[62] ऐसी स्थिति में परस्पर मौन (असंवाद) अथवा

दो टूक बातें होना भी सम्यक् मितभाषिता नहीं है। यहाँ पर आवश्यकता है कि हम बातचीत के लिए स्वस्थ वातावरण निर्मित करें, परस्पर एक-दूसरे के मन्तव्य समझें, अपनी गलतफहमियाँ दूर करें, अपने मानादि काषायिक भावों का उपशम करें और परिमित, लेकिन स्वस्थ-संवाद करें। यही उचित समाधान है और यह अनेकान्त दृष्टिकोण से ही सम्भव है। आचार्य भद्रबाहु ने कहा भी है- जो व्यक्ति अभिव्यक्ति-कौशल में अकुशल है और अभिव्यक्ति की मर्यादाओं से अनभिज्ञ है, वह कुछ नहीं बोलकर भी मौन नहीं रहता, जबकि अभिव्यक्ति में दक्ष और अपनी मर्यादाओं में प्रसंगानुसार उचित बोलने वाला मौन ही है, भले ही वह बोले। इस अनेकान्तमयी विचारधारा को विचारवान् विवेकी व्यक्ति ही समझ सकते हैं।[63]

जहाँ स्वार्थ और सम्मान की पूर्ति होती हो, वहाँ बहुत बोलना अन्यथा चुप्पी साध लेना भी सम्यक् मितभाषिता नहीं, बल्कि मौकापरस्ती है। व्यक्ति को इस गिरगिट वृत्ति से बचना चाहिए। इसी प्रकार कई बार व्यक्ति अहंकारवश भी मितभाषी जैसा व्यवहार करने लगता है। जैनाचार्यों ने अहंकार के आठ प्रकार बताए हैं- शारीरिक रूप-रंग, शारीरिक बल, भौतिक लाभ, भौतिक ऐश्वर्य, कुल (पितृपक्ष), जाति (मातृपक्ष), तप-त्याग एवं ज्ञान का अहंकार। अहंकार के कारण व्यक्ति स्वयं को समाज एवं परिवार के अन्य सदस्यों से पृथक् महसूस करता है। वह उच्च या हीनभावनाओं (Superiority or Inferiority complex) से ग्रसित होकर धीरे-धीरे अल्पभाषी बन जाता है। किन्तु यह भी सम्यक् मितभाषिता नहीं है। मितभाषिता कषायजन्य नहीं होनी चाहिए। कषायरहित रहते हुए सारभूत, तथ्यपरक और आवश्यकतानुरूप कम बोलना ही सम्यक् मितभाषिता है।

अन्त में इतना ही कहा जा सकता है कि मुखरूपी तिजोरी में वाणी रूपी रत्न सम्भालकर रखना चाहिए। इस तिजोरी पर मौनरूपी ताला लगाना चाहिए तथा योग्य ग्राहक मिलने पर ही उसे दिखाना चाहिए।[64]

4. निरवद्य (निर्दोष) वचन

जैनाचार्यों ने हित,मित और प्रिय वचनों के साथ ही वचन की निरवद्यता अर्थात् निर्दोषता या अहिंसकता पर भी अत्यधिक जोर दिया है, क्योंकि यदि वचन सावद्य हों, तो भाषा-समिति का पालन भी नहीं हो सकता।

जैनाचार्यों ने इसीलिए आचारांग, दशवैकालिक, प्रश्न-व्याकरण, सूत्रकृतांग, प्रज्ञापनासूत्र आदि शास्त्रों में न केवल निरवद्य वचनों को ही बोलने की प्रेरणा दी है, अपितु निरवद्यता का अतिगहन विश्लेषण भी किया है। यह विश्लेषण ही व्यक्ति को 'क्या बोलना

और क्या नहीं' का विवेक प्रदान करता है।

आज सभी ओर सावद्य (दोषपूर्ण) वचनों का ही बोलबाला है। अधिकांश वक्ताओं में निरवद्य वचनों के प्रति निष्ठा और समर्पण भी नहीं है, यहाँ तक कि सावद्य-निरवद्य का सुस्पष्ट भेद करने वाली सम्यक् समझ का भी अभाव है। उन्हें इतना भी ज्ञात नहीं है कि 'मैं जो बोल रहा हूँ, वह बोलने योग्य है भी या नहीं।'

जैनाचार्यों ने इसीलिए भाषा (वचनों) का स्याद्वादमय, सटीक एवं सूक्ष्म स्पष्टीकरण किया है। उनके अनुसार, जो बोली जाए वह भाषा है (भाष्यते इति भाषा)[65] भाषा अवधारिणी अर्थात् अर्थबोध कराने वाली होती है, क्योंकि इससे पदार्थ का अवधारण अर्थात् निश्चय होता है।[66] किन्तु यह भाषा सत्य, असत्य (मृषा), सत्यासत्य (मिश्र) एवं असत्यासत्य (व्यवहार)- ऐसे चार प्रकार की होती है और इसीलिए यह आवश्यक नहीं है कि हर बात जो बोली जाती है, वह उचित अर्थात् बोलने योग्य ही हो। इन चार भाषाओं को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है-

1. **सत्यभाषा**- जो सत् अर्थात् विद्यमान पदार्थों का सम्यक् बोध कराती हो, हितकारिणी हो और जीवादि तत्त्वों की सम्यक् प्ररुपणा करती हो, वह सत्य-भाषा कहलाती है। संक्षेप में, वस्तु-स्वरूप का यथोचित प्रतिपादन करने वाली भाषा 'सत्यभाषा' है।[67]
2. **असत्यभाषा**- जो सत्य भाषा से विपरीत स्वरूप वाली हो, वह 'असत्य-भाषा' कहलाती है।[68]
3. **सत्यासत्य भाषा**- जिसमें सत्य और असत्य दोनों मिश्रित हों अर्थात् जिसमें कुछ अंश सत्य हो और कुछ अंश असत्य हो, वह 'सत्यासत्य' या 'मिश्र भाषा' कहलाती है।[69]
4. **असत्यासत्य भाषा**- जो भाषा इन तीनों प्रकार की भाषाओं में समाविष्ट न हो सके अर्थात् जिसे सत्य, असत्य या मिश्ररूप नहीं कहा जा सके अथवा जिसमें इन तीनों भाषाओं में से किसी भी भाषा का लक्षण घटित न हो, वह 'असत्यासत्य (व्यवहार) भाषा' है। इस भाषा के विषय आमन्त्रण, निमन्त्रण, आदेश, उपदेश आदि हैं।[70]

जैनदृष्टि से सत्य, आदि चारों भाषाओं की पहचान निम्न प्रकार से की जा सकती है-

1. **जो आराधक हो, वह सत्य भाषा**- जिसके द्वारा मोक्षमार्ग की आराधना की जाए अथवा वस्तु-स्वरूप का यथार्थ कथन किया जाए, वह आराधक भाषा कहलाती है। दूसरे शब्दों में, जो आराधक हो, उसी भाषा को सत्य-भाषा समझनी चाहिए।[71]
2. **जो विराधक हो, वह असत्य भाषा**- जो भाषा वस्तु-स्वरूप की मिथ्या स्थापना

करने के आशय से कही जाती है अथवा जो भाषा सत्य होते हुए भी अप्रासंगिक, दुराशययुक्त और परपीड़ाजनक हो, वह विराधक भाषा कहलाती है। विराधक भाषा को ही असत्य-भाषा समझना चाहिए।[72]

3. **जो आरधक-विराधक मिश्ररूप हो, वह सत्यासत्य भाषा-** जो भाषा आंशिक रूप से आराधक और आंशिक रूप से विराधक हो, वह आराधक-विराधकमिश्र भाषा कहलाती है। जैसे- किसी नगर में आज 150 बच्चों का जन्म हुआ हो, किन्तु किसी के पूछने पर कह देना कि सैकड़ों बच्चों का जन्म हुआ है।[73] आराधक-विराधक भाषा को ही सत्यासत्य भाषा समझनी चाहिए।
4. **जो न आराधक हो न विराधक, वह असत्यासत्य भाषा-** जिस भाषा में आराधक, विराधक एवं आराधक-विराधक मिश्र लक्षण न हों, उसे 'असत्यासत्य भाषा' समझना चाहिए, जैसे- 'हे मुने! प्रतिक्रमण करो। स्थण्डिल का प्रतिलेखन करो' आदि।[74]

अधिकांश लोग यह मानते हैं कि कही जाने वाली हर बात उचित ही होती है, तो कुछ लोग यह मानते हैं कि भाषा के केवल दो ही प्रकार हैं- सत्य एवं असत्य, जिनमें से सत्य बोलने योग्य है और असत्य नहीं। किन्तु यह विचार भी पूर्णतः सही नहीं है। दशवैकालिक सूत्र में इन चार प्रकार की भाषाओं के सन्दर्भ में स्पष्ट कहा गया है कि[75]-

चउण्हं खलु भासाणं, परिसंखायं पन्नवं।
दोण्हं तु हिणयं सिक्खे, दो न भासिज्ज सव्वसो।।

अर्थात् प्रज्ञावान् पुरुष चार प्रकार की भाषाओं को समझकर सत्य एवं व्यवहार (असत्यासत्य) भाषाओं का ही प्रयोग करें। असत्य एवं मिश्र भाषाओं को सर्वथा न बोलें। अतः असत्य भाषा और मिश्र भाषा का प्रयोग भाषिक-अभिव्यक्ति की क्षमता का सदुपयोग नहीं, वरन् दुरुपयोग है। इन दोनों से स्व-पर का अहित ही होता है। ये दुराशययुक्त एवं दुष्परिणामदायिनी होती हैं। इनसे ऐहलौकिक एवं पारलौकिक विनाश होता है।

संदर्भ-

43. अमोलसूक्तिरत्नाकर, कल्याणऋषि, 39.32
44. जैनभारती (पत्रिका), अगस्त-2004, बोलो वचन विचार, पृ. 35
45. स्थानांगसूत्र, 6.102
46. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.14.23
47. जीवन की मुस्कान (द्वितीय महापुष्प), डॉ. प्रियदर्शनाश्री, पृ. 58

48. नाइवेलं वएज्जा - सूत्रकृतांगसूत्र, 1.14.25
49. वही, 1.9.25
50. जैनभारती (पत्रिका), अगस्त-2004, बोलो वचन विचार, पृ. 35
51. वही, अक्टूबर-2002, मत बोलो अणगमती वाणी, पृ. 50
52. वीरप्रभु के वचन, रमणलाल ची. शाह, 1.13.121
53. उत्तराध्ययनसूत्र, 1.4
54. बोलने सुनने की कला, डॉ. शीतला मिश्र, पृ. 38
55. बहुयं मा य आलवे- उत्तराध्ययनसूत्र, 1.10
56. दशवैकालिकनिर्युक्ति, 211
57. चरणपडिवत्तिहेउं धम्मकहा- ओघनिर्युक्तिभाष्य, 7
58. वयणं विण्णाणफलं, जइ तं भणिएऽवि नत्थि किं तेण- विशेषावश्यकभाष्य, 1513
59. वही, 1443
60. जैनभारती (पत्रिका), दिसंबर, 2001, क्या कहें ? कैसा कहें ? कब कहें ?, पृ. 45
61. दशवैकालिकसूत्र, 8.47
62. जैनभारती (पत्रिका), दिसंबर, 2001, क्या कहें ? कैसा कहें ? कब कहें ?, पृ. 46
63. दशवैकालिकसूत्रनिर्युक्ति, 290-291
64. जीवन की मुस्कान (द्वितीय महापुष्प), डॉ. प्रियदर्शनाश्री, पृ. 60
65. भाष्यते इति भाषा- प्रज्ञापनासूत्र, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर, 11.831, पृष्ठ 48
66. ओहारिणी भाषा- वही, 11.831, पृ. 48
67. वही, पृ. 49
68. वही, पृ. 49
69. वही, पृ. 49
70. वही, पृ. 49
71. वही, पृ. 49
72. वही, पृ. 49
73. वही, पृ. 50
74. वही, पृ. 50
75. दशवैकालिकसूत्र, 7.1

-जैन विज्ञान एवं प्रबन्धन संस्थान,
112, विक्रम टॉवर, सपना संगीता रोड, इन्दौर-452001 (मध्यप्रदेश)

सन्त-वाणी

संकलित

संसार में सबसे बड़ा वीर, सबसे बड़ा धीर, सबसे बड़ा गम्भीर, सबसे बड़ा दक्ष एवं तत्त्वज्ञ वही हो सकता है जो अपने साथ बुराई न करे। अगर हम अपने साथ बुराई नहीं करेंगे, तो इससे आपका जीवन समाज के लिए उपयोगी हो जाएगा।

अध्यात्म

मैत्रीभाव

श्री कन्हैयालाल लोढ़ा

जो निश्छल स्नेह रखता है वह मित्र है तथा मित्र का समस्त प्राणियों के प्रति स्नेहभाव मैत्री है। भगवान महावीर के द्वारा प्रतिपादित अहिंसा का एक सकारात्मक आयाम मैत्रीभाव है। उत्तराध्ययन सूत्र एवं आवश्यक सूत्र में समस्त प्राणियों के प्रति मैत्री की प्रेरणा की गई है। मैत्रीभाव को प्राप्त जीव अपने भावों की विशुद्धि कर निर्भय होता है। जो मैत्रीभाव रखता है वह स्वयं तो निर्भय बनता ही है, किन्तु जिन प्राणियों के प्रति मैत्रीभाव रखता है वे भी निर्भयता एवं निश्चिन्तता का अनुभव करते हैं। मैत्री के बिना न अभयदान हो सकता है और न ही सहयोग की भावना हो सकती है। मित्रता का लक्षण ही मित्र का सहयोग करना है।

मैत्रीभाव में हृदय प्रेम-रस से ओतप्रोत रहता है। जहाँ मित्रता (प्रेम) का रस है, वहाँ परमानन्द के सागर में प्रसन्नता की लहरें अठखेलियाँ करती रहती हैं। क्षति, पूर्ति, अपूर्ति, निवृत्ति रहित नित-नूतन रस उमड़ता है। इस रस से पूरित हृदय में कामना, राग, द्वेष, मोह आदि उत्पन्न नहीं होते।

मित्रता में प्रेम होता है, राग नहीं होता है। राग वहीं होता है जहाँ अन्य से, पर से सुख लेने की या सुख पाने की इच्छा होती है। जबकि प्रेम में अपना सुख वितरण करने का, त्यागने का भाव होता है, सुख लेने का नहीं। मित्रता में स्वयं कष्ट पाकर भी मित्र का दुःख दूर करने का, मित्र की प्रसन्नता बढ़ाने का, मित्र का हित करने का भाव होता है। मित्र, मित्र की प्रसन्नता के लिए, हित के लिए अपने विषय सुख को त्यागने तथा कष्ट उठाने को तैयार रहता है और बदले में मित्र से लेशमात्र भी सुख पाने की चाह नहीं रखता है। मित्र में निःस्वार्थ त्याग होता है। निःस्वार्थ त्याग ही धर्म है, वही साधना है। अतः मित्रता, त्याग का, साधना का जीता जागता रूप है।

मित्र से मित्र की सहायता किये बिना नहीं रहा जाता। मित्र भूखा-प्यासा रहे और व्यक्ति स्वयं भोजन करता रहे, मित्र रोगी रहे, कष्ट पाता रहे उसकी सेवा शुश्रूषा न करे, मित्र खड्डे में गिर जाय, उसे उठावे नहीं, उसकी सहायता न करे फिर भी मित्र होने का कोई दावा करता रहे तो ऐसी मित्रता का कोई अर्थ नहीं है। इसे मित्रता कहना भूल है। ऐसी मित्रता, मित्रता नहीं शत्रुता है, मित्रता का उपहास करना है, घोर-क्रूरता है, अमानवीय व्यवहार है, पशुता है जिसका मानव जीवन में कोई स्थान नहीं है।

मैत्रीभाव का नाम ही प्रेम है। जहाँ प्रेम है वहाँ राग नहीं, जहाँ राग है वहाँ प्रेम नहीं।

प्राणिमात्र को रस या सुख स्वभाव से ही अभीष्ट है। इसका स्रोत है प्रेम, मैत्रीभाव। मैत्री या प्रेम का विकृत रूप ही राग है। राग में दूसरे से सुख पाने की इच्छा रहती है। अतः जहाँ राग है, वहाँ विषय सुख का भोग है, वहाँ हीनता है, दीनता है, पराधीनता है। इसके विपरीत प्रेम या मैत्रीभाव में दूसरों को प्रसन्नता प्रदान करने की, सेवा की, सहायता की उदात्त भावना रहती है। उदात्त भावना व उदारता से हृदय में प्रसन्नता निवास करती है। जिसके हृदय में प्रसन्नता निवास करती है उसे अन्य किसी वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति से प्रसन्नता पाने की आवश्यकता ही नहीं होती। जिसे अन्य से सुख पाने की आवश्यकता नहीं होती, उसके हृदय में कामना या इच्छा की उत्पत्ति नहीं होती, अन्य से सुख लेने की, अर्थात् भोग की भावना ही नहीं होती। अतः भोग से बचने, भोग से मुक्ति पाने का उपाय है प्रेम या मैत्रीभाव। भोग से मुक्ति ही समस्त दोषों से, दुःखों से, शरीर से, संसार से मुक्ति है। यही सच्ची मुक्ति है।

जहाँ छोटे-बड़े का भेद है, वहाँ प्रेम या मित्रता नहीं हो सकती। प्रेम या मित्रता वहीं संभव है जहाँ समानता का भाव है। समानता में समता और समता में समानता ओतप्रोत है। समानता या समता विषमता को खा जाती है। विषमता ही समस्त द्वन्द्वों व दुःखों का कारण है। अतः विषमता के अन्त में ही समस्त द्वन्द्वों व दुःखों का अन्त है। यही मुक्ति है। अतः मुक्ति मैत्री (प्रीति) की देन है, यह कहना अत्युक्ति नहीं होगा।

मैत्रीभाव का समर्थन करते हुए आवश्यकसूत्र में कहा गया है-**'मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झं न केणई।'**

अर्थात् मेरा किसी से वैर नहीं है, सभी प्राणियों के प्रति मित्रता है। इस सूत्र को प्रातः-सायं प्रतिक्रमण करते हुए दोहराया जाता है। इस सूत्र में आगमकार "मेरा किसी जीव से वैर नहीं है", केवल यह निषेधात्मक सूत्र देकर ही नहीं रह गये हैं, अपितु इसके साथ "मेरा सब जीवों के साथ मैत्रीभाव है", यह विधेयात्मक सूत्र भी दिया है। यदि आगमकार को केवल अहिंसा का निषेधात्मक रूप ही अभीष्ट होता तो "मेरा किसी से वैर नहीं है" इतना सूत्र ही पर्याप्त होता और "सब जीवों के प्रति मेरी मित्रता है" इस सूत्र भाग को जोड़ने की आवश्यकता ही न होती। इससे स्पष्ट है कि सूत्रकार को मित्रता रूप अहिंसा का सकारात्मक पक्ष भी अभीष्ट है। कारण कि अनंतानंत प्राणियों के प्रति हमारा वैर भाव नहीं है, किन्तु वैर न होने से हमारा उन प्राणियों के साथ मैत्रीभाव है, यह नहीं कहा जा सकता।

निर्वैर होना अच्छी बात इसलिए है कि इससे मित्रता की पात्रता व सामर्थ्य आता है। वस्तुतः मैत्रीभाव ही महत्त्वपूर्ण है। यही नहीं मैत्रीभाव के बिना निर्वैरता टिकती ही नहीं है। कारण कि जिस हृदय में प्रेम की सरिता नहीं बहती, वह हृदय शुष्क व नीरस होता है। नीरसता ऊब पैदा करती है। अतः सच्चे अहिंसक साधक के हृदय में सदैव यह भाव उमड़ा

रहता है कि सबका भला हो, सबका मंगल हो, सबका कल्याण हो, सबका हित हो, सब सुखी रहें। यही सच्चा मैत्रीभाव है। जैसाकि सामायिक पाठ में कहा गया है "सत्त्वेषु मैत्रीं" अर्थात् सभी प्राणियों के प्रति मैत्रीभाव रहे।

मैत्री व वैरभाव के स्वरूप व लाभ-हानि पर आध्यात्मिक दृष्टि से विचार प्रस्तुत किए जा रहे हैं-

1. वैरभाव शांति व प्रसन्नता का घातक है। क्योंकि वैरभाव की उत्पत्ति का मूल है- दूसरे में बुराई या दोष देखना। दूसरों के दोष-दर्शन, उनके द्वारा अपने प्रति किए गए आघात व अपकार स्मरण करने से प्रतिशोध के भाव पैदा होते हैं। पर दोष-दर्शन से द्वेष, अपकार और आघात के स्मरण से प्रत्यपकार व प्रत्याघात रूप वैरभाव की ज्वालाएँ ज्वलित होती हैं। ऐसा हृदयवृक्ष जो वैर की आग से प्रज्वलित हो रहा हो, उस पर शान्ति व प्रसन्नता के पक्षी विश्राम करने नहीं आ सकते।
2. वैरभाव ऐसा तीव्र विष है जिसका सीधा प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ता है। मस्तिष्क के मर्मस्थलों में आंदोलन, उद्वेलन, असंतुलन व अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है, जिसका सारे शरीर के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
3. वैरभाव की आग में मस्तिष्क की सर्जनकारी शक्तियों की आहुति लग जाती है, फलतः ऐसा निर्बल मन वाला व्यक्ति जीवन में महान् कार्य नहीं कर सकता। उसका जीवन हीन कामों में ही व्यतीत हो जाता है।
4. अपकारी के प्रति अपकार करना, काटने वाले को काटना यह श्वान की प्रकृति है, सज्जन की नहीं। पाशविक प्रकृति है, मानवीय नहीं। मानवीय प्रवृत्ति या प्रकृति में तो मित्रता को ही स्थान है, शत्रुता को नहीं। वह शत्रुता को मित्रता से, अपकार को उपकार से जीतता है, कारण कि वह जानता है कि वैर से वैर की, द्वेष से द्वेष की आग घटती नहीं, अपितु बढ़ती ही है और हृदय को दग्ध करती है जो किसी भी ज्ञानी को अभीष्ट नहीं है।
5. दूसरे में दोष या बुराई दिखने का मुख्य कारण है उसके कार्य व विचारों की भलाई-बुराई को अपने आदर्श या स्वार्थ के फीते से मापना तथा अपने ही आदर्श को सर्वोत्कृष्ट मानना। अपने ही विचार, सिद्धान्त व आदर्श को सर्वोत्तम मानने वाले का आग्रह होता है कि समस्त संसार उसी के सिद्धान्त या आदर्श को स्वीकार करे और चले। जो उसे अस्वीकार करता है या विरोध करता है, वह ही दोषी या बुरा है। परन्तु विज्ञजन अनेकान्त दृष्टि का उपयोग करते हैं। वे जानते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति की विशेष स्थिति, शक्ति व मति होती है। तदनुसार ही वह अपना उद्देश्य बनाता व जीवन

ढालता है, अतः बुराई का कारण विवेक की कमी है और विवेक की कमी उसे भी अभीष्ट नहीं है। अतः वह क्षमा का अधिकारी है न कि द्वेष व दण्ड का। सत्य तो यह है कि दुरात्मा और महात्मा, पापी और धर्मी में श्रेणि और गुणों के विकास का ही अन्तर है। आज का धर्मात्मा किसी समय पापी था और आज का पापी भविष्य में पुण्यात्मा हो सकता है। आत्मा के विकास क्रम में पापी बच्चा है और पुण्यात्मा वृद्ध। पापियों को दुष्ट समझ उनसे घृणा या वैर रखना वैसा ही है जैसा छोटे बच्चों को अबोध, अनाज्ञाकारी, खिलौने खेलने वाला समझ उनसे घृणा या वैर रखना, जो न न्यायोचित है और न मानवोचित ही।

6. वैर या बुरा मानने का कारण है पापी, दोषी व बुरे व्यक्ति से घृणा करना, जो कि उचित नहीं है। वस्तुतः घृणा पाप से होनी चाहिए पापी से नहीं, दोष से होनी चाहिए दोषी से नहीं, बुराई से होनी चाहिये, बुरे से नहीं। कारण कि कोई भी व्यक्ति पापी, दोषी व बुरा होना पसंद नहीं करता। फिर भी वह ऐसा करता है तो निश्चय ही वह पाप के स्वरूप व अहितकारी परिणाम से अनभिज्ञ है। अन्यथा कौन ऐसा व्यक्ति होगा जो पाप रूप विष को अहितकारी जानकर भी खाये, पाप रूप साँप को सुन्दरता के मोह से पाले। अतः पाप का कारण अज्ञान है। अज्ञानी पर क्रोध, रोष व द्वेष करना अज्ञानता का ही परिचायक है। जिस प्रकार शिशु पाखाना कर वस्त्रों को बिगाड़ दे तो वह क्षमा, सहानुभूति व सहायता का ही पात्र है, द्वेष या रोष का नहीं, उसी प्रकार पापी भी ज्ञान की दृष्टि से बच्चा ही होता है। अतः वह क्षमा या सहायता का ही पात्र होता है, घृणा, द्वेष या रोष का नहीं। इसलिए ज्ञानीजनों का प्रयत्न पापी को मिटाने का न होकर, पाप को मिटाने का होता है। उनके हृदय में किसी भी प्राणी के प्रति रोष, क्षोभ व क्रोध के लेश भी भाव नहीं होते हैं। जब हृदय में लेश भी द्वेष या क्रोध न हो तब फिर क्षमा की आवश्यकता ही नहीं रह जाती। क्षमा की आवश्यकता तो तब होती है जब किसी के कार्य व वचन को बुरा माना जाय। वस्तुतः सर्वोत्तम स्थिति तो यही है कि क्षमा की आवश्यकता ही न पड़े। यह ही अत्युत्तम बात है कि सर्व प्राणियों को क्षमा कर दिया जाय। उनके प्रति रहे हुए, वैरभाव को भुला-धुला दिया जाय तथा मैत्रीभाव स्थापित कर लिया जाय।

7. प्रश्न उपस्थित किया जाता है कि दोषी को दोषी व दंडनीय क्यों न माना जाय? दोषी से द्वेष क्यों न किया जाय? तो कहना होगा कि सारी मानवजाति में ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं मिलेगा जो जन्मतः निर्दोष हो। कारण कि जन्म धारण करने का कारण ही राग होता है जो समस्त दोषों की भूमि है। अतः जन्मतः प्राणिमात्र दोषी है। भूतकाल किसी

का भी निर्दोष नहीं है। निर्दोषता तो साधना का चरम व परम परिणाम है। प्रत्येक व्यक्ति साधना को अपनाकर निर्दोष होने में समर्थ है। आंशिक दोष से कोई भी संसारी प्राणी मुक्त नहीं है अतः दोषी को दंड देने के सिद्धान्त को स्वीकार किया जाय तो सभी प्राणी दंड के पात्र होंगे और प्राणी दंड देने को अपने हाथ में ले ले तो सभी परस्पर दंड देने लगेंगे। जिससे विश्व में घोर अव्यवस्था व नारकीय स्थिति उपस्थित हो जायेगी। कर्मविज्ञान के अनुसार पापी या दोषी को पाप या दोष का दुःखद फल स्वतः मिलता है। दोष स्वयं विष तुल्य होता है जो दोषी व्यक्ति को प्रतिक्षण अशांति, अंतर्द्वन्द्व आदि असंख्य दुःखों के रूप में दंड देता है। दोषी व्यक्ति नियमतः दुःखी होता है। दुःखी दया, सहानुभूति व सहायता का पात्र होता है न कि दंड का। दया या सहानुभूति का पात्र कहिये या मित्रता का अधिकारी, एक ही बात है। जब दोषी व्यक्ति भी दंड का नहीं, मित्रता का अधिकारी है तब निर्दोष व्यक्ति तो स्वतः ही मित्रता का अधिकारी हो जाता है। दूसरे शब्दों में कहा जाय तो सदोष और निर्दोष सभी व्यक्ति मित्रता के अधिकारी हैं, वैर या दंड के कोई भी नहीं।

8. विज्ञजन गुण-ग्राहक होते हैं, दोषदर्शी नहीं। वे जानते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति की प्रकृति या प्रवृत्ति उसके आत्मिक विकास पर निर्भर करती है। प्रत्येक व्यक्ति के आत्मिक विकास का स्तर भिन्न-भिन्न होता है। अतः व्यक्तियों की प्रकृति-प्रवृत्ति आदि में भिन्नता होना स्वाभाविक है। व्यक्ति के दोषों या बुराइयों का कारण आत्मिक विकास की कमी है अन्यथा विश्व की सभी आत्माएँ समान स्वभाव व सामर्थ्य वाली हैं। अतः व्यक्ति की दूषित प्रकृति व प्रवृत्ति के शोधन का उपाय प्रतिशोध न होकर उनका आत्मिक विकास करना है।

9. अधम से अधम व्यक्ति में भी अगणित गुण होते हैं। विश्व में एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं मिल सकेगा जिसमें गुण का सर्वथा अभाव हो और केवल दोषों का ही पुंज हो। ज्ञानीजनों की दृष्टि व्यक्ति के गुणों पर जाती है। अतः उनके हृदय में प्रीति उदित होती है जो उन्हें प्रमुदित बनाती है। इस प्रकार मैत्रीभाव की प्रसन्नता वैरभाव की खिन्नता को खा जाती है। मैत्रीभाव वाला व्यक्ति सदैव आनंदित रहता है। अज्ञजन ही वैर भाव को अपनाकर खिन्न व अवसन्न रहते हैं, विज्ञजन तो मैत्रीभाव अपनाकर प्रसन्न ही रहते हैं।

10. जहाँ परदोष-दर्शन अकल्याणकारी है, वहाँ स्वदोष-दर्शन कल्याणकारी है। अपने दोष देखने से दोष मुक्त होने में सहयोग मिलता है। कोई भी व्यक्ति दोषी रहना नहीं चाहता। अतः जब अपने दोष को जान लेता है तो दोष मुक्त होने का प्रयत्न करता है। व्यक्ति दोष को तब तक ही अपनाता है जब तक कि वह दोष को दोष-रूप व

अहितकर नहीं जानता है। इस दृष्टि से साधना-जगत् में स्व-दोष दर्शन का बड़ा स्थान है। स्वदोष दर्शन को जैन पारिभाषिक शब्दावली में 'आलोयणा' (आलोचना) कहा है। साधक के लिए आलोयणा का क्या महत्त्व है, यह सर्वविदित है।

जिस प्रकार जहाँ अंधकार का अभाव है, वहाँ प्रकाश स्वतः प्राप्त है, इसी प्रकार जहाँ वैरभाव का अभाव है, वहाँ मैत्रीभाव स्वतः प्राप्त है और जहाँ वैरभाव का अभाव व मैत्रीभाव का सद्भाव है वहाँ क्षमादान व क्षमायाचना सहज उपलब्ध है।

वस्तुतः उपर्युक्त गाथा में साधना का चरम व परम रूप तथा मर्म अंतर्निहित है। क्षमादान, उदारता, क्षमायाचना, नम्रता, वैरत्याग, समता एवं प्रियता मैत्रीभाव गुण के द्योतक हैं। इन गुणों का विकास दुरात्मा को पुण्यात्मा, धर्मात्मा और अंत में परमात्मा बनाने में समर्थ है।

मित्रता वहाँ ही होती है जहाँ वैर नहीं होता है, प्रेम होता है, सहयोग की भावना होती है, आत्मीयता होती है। आत्मीयता का अर्थ है सब प्राणियों को अपने समान समझना। अतः मित्रता में समानता का व्यवहार होता है। जहाँ किसी से सुख पाने की इच्छा होती है, वहाँ भोग होता है, मित्रता नहीं होती। मित्रता वहीं होती है, जहाँ मित्र की प्रसन्नता के लिए अपना सुख निःस्वार्थभाव से अर्पित कर दिया जाता है और उससे वह स्वयं प्रसन्न होता है।

मित्रता आत्मीयता की द्योतक है। अतः **''मित्ती मे सव्वभूएसु''** का अर्थ हुआ सब प्राणियों के प्रति आत्मीयभाव, अपनेपन का भाव अर्थात् सर्वात्मभाव। आत्मीयभाव में परायेपन का भाव नहीं रहता। सर्वात्मभाव में कोई भी जीव पराया नहीं रहता। अतः प्राणिमात्र के प्रति सहायता का भाव होता है। वस्तुतः सक्रिय सहायता ही सेवा है। सेवा में सक्रिय सर्वहितकारी भाव होता है। यही मैत्रीभाव है। जहाँ सब प्राणियों की सेवा का भाव नहीं है, प्रत्युत उनके प्रति उपेक्षा का यह भाव है कि जीव दुःख पाते हैं तो पाते रहें अपनी बला से, दुःख पाते होंगे अपने कर्मों से, हमें उनसे क्या मतलब, क्या लेना-देना? ऐसा भाव जहाँ है और वह व्यक्ति प्राप्त सामग्री, सामर्थ्य, शक्ति, योग्यता का उपयोग अपने सुख-भोग के लिए करता है, वहाँ सर्वात्म भाव नहीं स्वार्थभाव है। जहाँ स्वार्थभाव है वहाँ मैत्रीभाव नहीं है, भोग है। भोग समस्त दोषों व दुःखों का बीज है।

यद्यपि सेवा का क्रियात्मक रूप अपनी शक्ति, सामर्थ्य, योग्यता के अनुसार होता है अर्थात् सीमित होता है, परन्तु सेवा का भावात्मक रूप सर्वात्म भाव असीम होता है। सर्वात्मभाव ही सबके प्रति आत्मीयभाव या प्रेम का भाव है। यही सब प्राणियों के प्रति मैत्रीभाव है। मैत्रीभाव में प्रेम होता है। प्रेम का रस राग के रस को खा जाता है। जहाँ राग है वहाँ ही समस्त दोषों की उत्पत्ति है। जहाँ दोष है वहाँ दुःख है ही, यह प्राकृतिक विधान है।

इस प्रकार दुःख से छूटने का उपाय दोषों का त्याग है। दोषों के त्याग का उपाय राग का त्याग है। राग के त्याग का उपाय प्रेमभाव है। प्रेमभाव ही मैत्रीभाव है। अतः जहाँ सर्व प्राणियों के प्रति मैत्रीभाव है वहाँ राग का, दोषों का एवं दुःखों का निवारण स्वतः होता है, इसमें लेशमात्र भी संदेह को स्थान नहीं है।

मैत्रीभाव राग को तो गलाता ही है, साथ ही द्वेष का भी नाश करता है। कारण कि मैत्रीभाव का विपरीत वैरभाव है। वैरभाव द्वेष का द्योतक है। अतः वैरभाव का त्याग कर मैत्री भाव को अपनाना द्वेष को त्यागकर प्रेम को अपनाना है। इस प्रकार मैत्रीभाव राग-द्वेष का नाशक है। अतः मैत्रीभाव वीतराग साधना का, संयम का, विरति का अंग है। जैसा कि तत्त्वार्थ सूत्र में कहा है- **''मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थ्यानि सत्त्वगुणाधिकक्लिश्यमानाविनयेषु।''** (तत्त्वार्थ सूत्र, 7.8)। अर्थात् प्राणिमात्र के प्रति मैत्रीभाव, गुणियों के प्रति प्रमोदभाव, दुःखियों के प्रति करुणाभाव और दोषियों के प्रति माध्यस्थ भाव रखना संयम में सहायक है।

इन चारों भावों में मैत्रीभाव मुख्य है कारण कि जिसमें मैत्रीभाव है, वही गुणियों के प्रति प्रमोदभाव, दुःखियों के प्रति करुणाभाव और दोषियों के प्रति तटस्थभाव रख सकता है, अतः शेष तीनों भावों में मैत्रीभाव ओत-प्रोत है।

-82/127, नीलगिरी पथ, मानसरोवर, जयपुर-302020 (राज.)

स्वाध्याय : शांतिदायक सर्वदा

डॉ. लक्ष्मीचन्द जैन

1. पूज्यपाद आचार्य भगवन्त हस्तीमल जी म.सा. ने सदैव स्वाध्याय करने की शिक्षा पर बल दिया, क्योंकि यह एक ऐसा पाथेय है जो व्यक्ति को सदैव सन्मार्ग पर चलने में सम्बल प्रदान करता है।
2. स्वाध्याय सदैव शांतिदायक है, स्वाध्याय तो जीवन का मूल मंत्र है। यदि संवरयुक्त स्वाध्याय किया जाए तो वह सामायिकमय जीवन बना देता है। स्वाध्याय सुसंस्कारशील बनाता है।
3. सामायिक व्यक्ति में समभाव की साधना जगाती है। यह दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, वैराग्य की जननी है। स्वाध्याय, संवर, सामायिक, समर्पण, समता ये सब एक-दूसरे के पूरक हैं।
4. ज्ञानी महापुरुषों ने अपनी दिव्य दृष्टि से स्वाध्याय, संवर, सामायिक का मार्ग सबके लिए प्रशस्त करके हमारे लिए पुण्यानुबंधी पुण्य का सृजन किया है। इसमें आत्मा की शुद्धता प्रकट होती है।

-छोटी कसरावद (मध्यप्रदेश)

अध्यात्म

जैन आचार से स्वस्थ जीवन की प्राप्ति (2)

श्री रणजीत सिंह कूमट, (सेवानिवृत्त आई.ए.एस.)

(जुलाई-2014 के अंक से आगे)

तप से स्वास्थ्य

जैन परम्परा में तप को बहुत महत्त्व दिया गया है। धर्म की परिभाषा करते हुए दशवैकालिक सूत्र में धर्म को अहिंसा, संयम और तप कहा है- ''धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो'' (दशवैकालिक सूत्र, अध्ययन 1, सूत्र 1) आचार्य उमास्वाति ने तत्त्वार्थसूत्र में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र को ही मोक्ष मार्ग बताया। यहाँ चारित्र में तप समाहित था। उत्तराध्ययन सूत्र में तप का अलग से आख्यान किया गया है-

''नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा।
एयं मग्गमणुप्पत्ता, जीवा गच्छन्ति सुग्गइं।।''

अर्थ- ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप के मार्ग पर चलने वाला उच्च गति को प्राप्त करता है। साधारणतः कुछ लोग तप का अर्थ शरीर को कष्ट देने से लगाते हैं, परन्तु तप का मुख्य उद्देश्य है अपने कषाय और आवेगों को नियंत्रित करना। इन्द्रियों के आवेग हमें खूब नाच नचाते हैं। जिह्वा का स्वाद हमसे कितने तरह के व्यंजन बनवाता है? शरीर के सुख और सुविधा के लिये हम अनेक इंतजाम करते हैं। इन आवेगों के अतिरिक्त कषाय यथा क्रोध, मान, माया और लोभ हमारे जीवन को कलुषित करते हैं और ये ही हमारे कर्म बंध का मूल कारण हैं। बिना कषाय के कर्म का स्थिति बंध एवं अनुभाग बंध नहीं होता। तप से यदि कषाय कम नहीं होते तो समझना चाहिए कि तप सही रूप से नहीं हो रहा है। इस सम्बन्ध में शुभचंद्राचार्य ने यहाँ तक कह दिया कि यदि क्रोध का शमन नहीं किया तो सब तप व्यर्थ है-

यदि क्रोधादयः क्षीणास्तदा किं खिद्यते वृथा।
तपोभिरथ तिष्ठन्त्सु तपस्तत्राप्यपार्थकम्।।

-ज्ञानार्णव, अध्याय 19, श्लोक 76

अर्थ- हे मुनि! यदि क्रोधादि कषाय क्षीण हो गए हैं तो तप करके खेद करना व्यर्थ है क्योंकि क्रोध को जीतना तप है और यदि क्रोध तुझमें स्थिर है तो तेरा तप करना व्यर्थ है, क्योंकि कषायी का तप करना व्यर्थ ही होता है।

क्रोधादि कषायों पर विजय पाये बिना तप की बाहरी क्रियाएँ दिखावा मात्र हैं। अतः धर्म की समस्त आचार व क्रियाओं का सार इसी में है कि हमारे कषायों का शमन हो।

क्रोध स्वास्थ्य का सबसे बड़ा दुश्मन है। यह सर्व विदित है कि क्रोध से अनेक बीमारियाँ होती हैं और क्रोधी व्यक्ति का स्वास्थ्य कभी ठीक नहीं हो सकता, चाहे वह कितनी ही दवा ले ले। तप दो प्रकार का है- 1. बाह्य तप और 2. आभ्यन्तर तप। बाह्य तप भी छः प्रकार का होता है और आभ्यन्तर तप भी छः प्रकार का होता है।

बाह्य तप के भेद- बाह्य तप छः प्रकार का होता है- 1. अनशन, 2. ऊणोदरी, 3. भिक्षाचरी, 4. रसपरित्याग, 5. कायक्लेश, 6. प्रतिसंलीनता।

अनशन तप का अर्थ है एक दिन, दो दिन अथवा लम्बे समय तक भोजन का त्याग। उपवास, बेला, तेला, अठाई, मास-क्षपण आदि नाम से ये तप मशहूर हैं और वर्षाकालीन चातुर्मास में श्रावक, श्राविकाएँ, बाल, युवा सबमें तपस्या की होड़ लगी रहती है। इसी तप की श्रेणी में अन्य तप भी चलते हैं यथा वर्षीतप, आयम्बिल-तप, नीवी, एकासन, बिआसना आदि। ये सब तप भोजन को कम करने व भोजन से विरक्ति के लिये हैं। ऊणोदरी व रसपरित्याग तप का उद्देश्य भी भोजन में कमी करने व भोजन में रस न लेने के उद्देश्य से है। भूख से एक ग्रास भी कम खाए तो ऊणोदरी तप कहलाता है। भिक्षाचरी तप अहं को कम करने तथा जो मिले उसमें संतोष करने के लिये है। भिक्षाचरी में भोजन एक ही घर से नहीं लेना है, न ही पूर्व में सूचना करना है। भोजन मिल भी सकता है और नहीं भी। दोनों स्थितियों में समता बनाये रखनी है। कायक्लेश तप शरीर को आराम की स्थिति में न रखकर प्रतिकूल परिस्थिति में रखने व समता में बने रहने की आदत डालने के लिये है। प्रतिसंलीनता तप बाहरी शोरगुल से हटकर स्व में स्थित होने के लिये है।

शारीरिक स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से भोजन कम करना या माह में एक या दो बार उपवास करना अत्यन्त लाभप्रद है, जिससे पेट को कुछ समय आराम मिल सके व शरीर में संचित वसा (fat) व अन्य अनावश्यक तत्त्वों का निःसरण किया जा सके। मोटापे की स्थिति में डॉक्टर लोग डाइटिंग (dieting) की सलाह देते हैं। डॉक्टर से नुस्खा लेकर उपचार करने की बजाय नैसर्गिक रूप से धर्माचरण से स्वास्थ्य का सुधार हो जाता है। उच्च रक्तचाप (High blood pressure) व अधिक कोलेस्ट्रॉल (Cholesterol) की स्थिति में बिना या कम नमक तथा बिना तेल और घी के भोजन निर्धारित किया जाता है। आयम्बिल और नीवी तप में यही प्रावधान है। इस तप के द्वारा कोलेस्ट्रॉल व उच्च रक्तचाप पर नियंत्रण पाया जा सकता है। इन तपों में भोजन बिना नमक, तेल व घी के बनता है। नीवी में केवल छाछ से लूखी रोटी खाई जाती है। रस परित्याग में विभिन्न रसों पर नियंत्रण किया

जाता है। मुख्य रूप से विगय (पाँच विगय- घी, दूध, दही, शक्कर व तेल) पर नियंत्रण करने की प्रेरणा की जाती है। मधुमेह (डायबिटीज), उच्च रक्तचाप, उच्च कोलेस्ट्रॉल आदि की बीमारियों में ये पाँचों विगय निषिद्ध होते हैं। अतः इन रसों पर नियंत्रण करने से बीमारियों पर स्वतः नियंत्रण हो जाता है। रस परित्याग में यह भी निर्देश दिया जाता है कि कितने द्रव्य या रस काम में ले रहे हैं, इसकी गिनती पर ध्यान दें। कुछ लोग एक दिन में उपयोग में लेने के लिये 11, 15 अथवा 21 द्रव्यों की सीमा रख लेते हैं। इस प्रकार की सीमा होने से खाने में जागरूकता रहती है और जो भी सामने आया, खा नहीं लेते। इस प्रकार खाने पर स्वतः नियंत्रण हो जाता है, भोजन के प्रति लालसा भी धीरे-धीरे कम होने लगती है और जीवन में जागरूकता बढ़ती है। भोजन में आसक्ति घटने से शरीर चुस्त और तंदुरूस्त रहता है। स्वस्थ शरीर से मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य में भी वृद्धि होती है।

आभ्यन्तर तप और स्वास्थ्य

आभ्यन्तर तप के निम्न छः प्रकार हैं- 1. प्रायश्चित्त, 2. विनय, 3. वैयावृत्त्य, 4. स्वाध्याय, 5. ध्यान, 6. कायोत्सर्ग या व्युत्सर्ग। ये तप अध्यात्म से जुड़े हैं और अध्यात्म का शारीरिक स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्ध है। यदि आंतरिक रूप से हम स्वस्थ नहीं हैं तो शरीर भी अस्वस्थ हो जायेगा। शरीर, मन व आत्मा एक दूसरे से जुड़े हैं और उन्हें अलग नहीं कर सकते। हम बाहरी रूप से शरीर पर पूरा ध्यान देते हैं, परन्तु यह खयाल नहीं करते कि यदि आत्मा व मन स्वस्थ नहीं है तो शरीर स्वस्थ नहीं रह सकता। अतः आत्मिक स्वास्थ्य के लिये आंतरिक तप का महत्त्व है।

समय-समय पर स्व का अवलोकन करना, त्रुटि हो गई हो तो उसका प्रायश्चित करना तथा जिसके साथ कटु व्यवहार हुआ है उससे क्षमा याचना करना अपने आपको दोष मुक्त करने व आत्मा को शल्य रहित करने में सहायक है। जीवन में जागृति के अतिरिक्त हल्कापन भी महसूस होता है। प्रायश्चित्त का अर्थ पछतावा या अपराध बोध नहीं है। त्रुटि को त्रुटि मानकर भूल सुधार करना तथा जिसके साथ अपराध या त्रुटि हुई है उससे क्षमा याचना करना ही प्रायश्चित्त है।

विनय को धर्म का मूल बताया है। अहं से मुक्त होना सबसे बड़ा तप है, क्योंकि सब पापों का मूल अभिमान है। तुलसीदासजी ने भी कहा है-''**दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान**''। जैन साहित्य में भी कहा है-

विणओ सासणे मूलं, विणीओ संजओ भवे।
विणयाओ विप्पमुक्कस्स, कओ धम्मो कओ तवो?

-उपदेशमाला-1.341

अर्थात् विनय धर्म का मूल है और विनीत व्यक्ति संयम युक्त होता है। यदि विनय नहीं है तो क्या धर्म और क्या तप? अर्थात् विनय बिना न तप संभव है और न धर्म।

विनय शिष्टाचार ही नहीं, अध्यात्म का गुण है और यह अहं को गलाये बिना प्राप्त नहीं हो सकता। यदि तप और संयम का अहं है तो वह आडम्बर होगा न कि धर्म। दस लक्षण धर्म में आर्जव व मार्दव को बहुत महत्त्व दिया गया है और यह ऋजुता अथवा सरलता का द्योतक है। जिसमें सरलता है वह विनयी है और वह सत्य मार्ग पर है। अहं कुटिलता और आडम्बर को जन्म देता है। इसलिये अहं को त्याग कर विनय को प्राप्त करना स्वयं में एक तप है।

वैयावृत्त्य का अर्थ है 'सेवा-शुश्रूषा।' बीमार, वृद्ध, विकलांग की सेवा वैयावृत्त्य कहलाती है। परम्परा से वरिष्ठ, वृद्ध एवं बीमार साधु, संत-सती की सेवा को ही वैयावृत्त्य की परिभाषा में लेते हैं, परन्तु इसे इस प्रकार सीमित करना उचित नहीं है। साधुओं के परिप्रेक्ष्य में यह अर्थ कदाचित् उपयुक्त हो, लेकिन सामूहिक रूप से जन सामान्य के लिये किसी भी वृद्ध, बीमार की सेवा वैयावच्च में शामिल है। सेवा एक गहन आंतरिक तप है जो हमारे अहं को गलाने में सहायक है। सेवा जीवन को अर्थ प्रदान करती है। अपने लिये जीये तो क्या जीये? हमारे जीवन का लाभ अन्य प्राणियों को मिले और वे सुखी अनुभव करें तो हमारे जीवन की सार्थकता है। हम जीयें और दूसरों को जीने में सहयोग दें यह हमारे जीवन का लक्ष्य रहे तो न केवल हमारा जीवन सुन्दर व सफल होगा, अपितु पूर्ण समाज सुन्दर और सरस बनेगा। सिर्फ अपने लिए न जीकर एक दूसरे के लिये जीयें तो यह धरती ही स्वर्ग बन जायेगी और यदि हम स्वार्थपूर्ण तरीके से स्वयं के लिये ही जीने का प्रयत्न करेंगे तो यह धरती नरक बन जायेगी। सेवा-तप हमारे जीवन को कुंदन की तरह चमका देता है। अतः यह गहन आभ्यन्तर तप कहलाता है।

स्वाध्याय के दो अर्थ किये गये हैं। स्व+अध्याय से बना है 'स्वाध्याय' शब्द। जिसका अर्थ होता है खुद का अध्ययन। स्वयं को जानना, स्वयं का निरीक्षण करना स्वाध्याय कहलाता है। दूसरा अर्थ है पढ़ना, लिखना, पूछना, पुनः स्मरण करना, वार्ता करना आदि। आत्मा के हित में जो भी साहित्य है जैसे आगम, संतों की वाणी आदि को पढ़ना, सुनना, पृच्छा और वाचना करना आदि सब स्वाध्याय की श्रेणी में आते हैं। सुसाहित्य पढ़ना एक सुन्दर मानसिक व्यायाम है और इससे मानसिक व आत्मिक स्वास्थ्य अच्छा बना रहता है। कुसाहित्य पढ़ने पर मानसिक सन्तुलन बिगड़ जाता है। मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होने पर शारीरिक स्वास्थ्य भी अच्छा रहेगा, यह सब मनोवैज्ञानिक मानते हैं। मानसिक रूप से सक्रिय व स्वस्थ रहनें पर भूलने (dementia) व अल्ज़मैर की बीमारी (Alzheimer's

disease), जिसमें आदमी स्वयं को ही भूल जाता है, होने की संभावना कम हो जाती है। स्वाध्याय से स्व को जानकर हम स्व में स्थित हो सकते हैं और यही 'स्वस्थ' होना कहलाता है। स्व के बारे में जानना, मनन करना, गहराई में जाना, पुनःपुनः चिन्तन, आंतरिक अनुभूति प्राप्त करना आदि स्वाध्याय के अंग बनते हैं और यही ध्यान व कायोत्सर्ग का आधार बनते हैं।

ध्यान से प्रज्ञा या विवेक जगता है और अज्ञान दूर होता है। बहिर्मुखी स्वभाव और वासनाओं में चित्त के लिप्त होने से व अज्ञानवश भौतिक संसार को नित्य व चाह की वस्तु मानने से मन चंचल, बिखरा हुआ और कमजोर होता है। संकल्प-विकल्प से युक्त होने पर तथा संकल्प पूर्ति न होने से व्यक्ति दुःखी, उद्विग्न और चिंतायुक्त रहता है। यही मानव के दुःख और अस्वस्थता का मूल कारण है। चिंता और दुःख से मुक्ति पाने और समाधि प्राप्त करने के लिए बहिर्मुखी से अंतर्मुखी बन ध्यान-साधना में लगना आवश्यक है, जिससे चित्त निराकुल, निर्विकार, अनुद्विग्न, निर्विकल्प और समत्वयुक्त बनता है।

ध्यान का अर्थ है चित्त का निरोध एवं एकाग्रता। महर्षि पतंजलि ने ''चित्तवृत्ति निरोध'' को योग कहा है। जब चित्त बाहर घूमता है, स्व-रूप से परे होता है और दुःखी व अशांत होता है तब चित्तवृत्ति को अंतर्मुखी बनाकर शरीर के किसी भाग पर एकाग्र करना और लगातार उसी वृत्ति का चलना ध्यान है। इसी ध्यान में कुशलता प्राप्त कर स्व का ज्ञान प्राप्त कर स्व-रूप में स्थित होना समाधि है। स्व में स्थित होते ही स्वस्थ हो जाते हैं। यही स्वास्थ्य का राज है।

कायोत्सर्ग का अर्थ है शरीर से ममता का भाव हटाना, तनाव-मुक्त होना तथा देह में रहते देहातीत हो जाना। कायोत्सर्ग का शाब्दिक अर्थ है काया का उत्सर्ग या त्याग, जिसका वास्तविक अर्थ है शरीर के प्रति ममता या चिपकाव का त्याग। इससे शरीर व इन्द्रियों के सुख के साधनों के प्रति ममत्व हटाना होता है और इसी से शरीर के प्रति भी ममत्व कम हो जाता है। कायोत्सर्ग में न केवल शरीर, अपितु मन की गहराइयों तक जाकर निरीक्षण कर देह और मन से परे जाने, देहातीत होने का प्रयास किया जाता है। ऐसा साधक देह को तटस्थ भाव से जानता है और मन ऐसी स्थिति में आ जाता है कि वह यह अनुभव करने लगता है कि जैसे शरीर पर जो भी घटित हो रहा है वह किसी बाहरी शरीर पर हो रहा है अतः वह न दुःख का अनुभव करता है न सुख का। मात्र द्रष्टा भाव में स्थित हो जाता है। वह राग और द्वेष से ऊपर उठकर समत्व भाव में स्थित हो जाता है। देह के सुख-दुःख को भोक्ता भाव से भोगने से मुक्ति पाकर द्रष्टा भाव में स्थित होने को ही काया के ममत्व से ऊपर उठना और कायोत्सर्ग में स्थित होना कहते हैं। यह देह और मन की उच्चतम स्थिति है

और यही जीवन-मुक्त अवस्था भी कहलाती है। अब दैहिक मृत्यु मात्र एक घटना है, क्योंकि भावना से तो वह शरीर से पहले ही परे और मुक्त हो चुका है।

उपसंहार

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि स्वास्थ्य शब्द शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक पक्षों के समन्वित स्वास्थ्य के लिए उपयोग में लिया गया है और आध्यात्मिक व मानसिक स्वास्थ्य का शारीरिक स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्ध है। शरीर के रोग मात्र दवाओं से ठीक नहीं होते। यदि मानसिक व आध्यात्मिक पक्ष सबल और स्वस्थ है तो शारीरिक पक्ष स्वतः ही स्वस्थ व सबल होगा। शरीर का चिपकाव और शरीर के सुख के प्रति आसक्ति हमें रोग की ओर आकर्षित करती है और इसके विपरीत शरीर के सुखों के प्रति विरक्ति हमें चिंतामुक्त, समतावान बनाकर सुखी और स्वस्थ बनाती है। ध्यान और कायोत्सर्ग से स्व में स्थित होने पर मन, शरीर और आत्मा सब एकीकृत रूप से स्वस्थ और समाधि को प्राप्त हो जाते हैं। जैन साधना व आचार वैज्ञानिक रूप से हमारे शरीर व आत्मा के कल्याण के लिए है और इस पर आचरण करने से सबकी मुक्ति होती है।

-सी-1701, लेक प्रिम रोज, लेक होम्स, फेज-IV, पवई, मुम्बई-400076 (महा.)

इंसान भी क्या चीज़ है

श्री शशि कुमार बोहरा

गरीब मीलों चलता है, भोजन पाने के लिए।
अमीर मीलों चलता है, उसे पचाने के लिए।
किसी के पास खाने के लिये, एक वक्त की रोटी नहीं।
किसी के पास एक रोटी खाने के लिए वक्त नहीं।
कोई अपनों के लिए रोटी छोड़ देता है।
और कोई रोटी के लिए अपनों को छोड़ देता है।
"इंसान भी क्या चीज़ है"
दौलत बचाने के लिए सेहत खो देता है,
और सेहत को वापिस पाने के लिए दौलत खो देता है।
जीता ऐसे है जैसे कभी मरेगा ही नहीं।
और मर ऐसे जाता है जैसे कभी जीया ही नहीं।
एक मिनट में जिंदगी नहीं बदलती,
पर एक मिनट में लिया गया फैसला ज़िंदगी बदल देता है।।

-608, महावीर नगर, टोंक रोड़, जयपुर-302018 (राज.)

तत्त्व-चर्चा

जिज्ञासा-समाधान

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.

जिज्ञासा- कायोत्सर्ग में आर्त्तध्यान-रौद्रध्यान ध्याया हो, धर्मध्यान, शुक्लध्यान न ध्याया हो, क्या यह बोलना उचित है?

समाधान- कायोत्सर्ग व ध्यान दोनों तप अलग-अलग ही हैं और एक में दूसरे का समावेश नहीं हो सकता। स्थूल जगत् में ऐसा व्यवहार है। प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्त्य, स्वाध्याय और व्युत्सर्ग (कायोत्सर्ग) इन पाँचों ही आभ्यन्तर तप के साथ धर्मध्यान और शुक्लध्यान भी हो सकते हैं। बाहरी छः ही तपों के साथ धर्मध्यान होने पर वे विशिष्ट महत्त्वशाली बनते हैं। ध्यान शतक की अंतिम 105 वीं गाथा में सैद्धान्तिक अभिप्राय के समर्थ प्रवक्ता श्री जिनभद्र गणि क्षमाश्रमण ने स्पष्ट उद्घोषणा कर दी की ध्यान के बिना जिनमत (साधु) की कोई भी क्रिया महत्त्वशाली है ही नहीं। कायोत्सर्ग में तीनों विकल्प मिलने का सूचन करते हुए द्रव्य और भाव के भेद से निम्न नौ विकल्पों का उल्लेख आवश्यक निर्युक्ति और उसकी हारिभद्रीय टीका गाथा नं. 1459,1460,1461 तथा 1479,1496 में हुआ है।

	द्रव्य से	भाव से	अभिप्राय
1.	उत्थित	उत्थित	द्रव्य से खड़ा है भाव से धर्मध्यान शुक्लध्यान कर रहा है।
2.	उत्थित	निषण्ण	द्रव्य से खड़ा है, भाव से कोई भी ध्यान नहीं कर रहा है। (6 लेश्या में से किसी के अन्तर्गत चिंतन-मनन कर रहा है)
3.	उत्थित	निवण्ण	द्रव्य से खड़ा है और भाव से लेटा है अर्थात् आर्त्त ध्यान, रौद्रध्यान कर रहा है।
4.	निषण्ण	उत्थित	द्रव्य से बैठा है भाव से धर्मध्यान-शुक्लध्यान कर रहा है।
5.	निषण्ण	निषण्ण	द्रव्य से बैठा है भाव से भी बैठा है, कोई भी ध्यान नहीं कर रहा है।
6.	निषण्ण	निवण्ण	द्रव्य से बैठा है भाव से लेटा है अर्थात् आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान कर रहा है।

7. निवण्ण	उत्थित	द्रव्य से लेटा है भाव से धर्मध्यान, शुक्लध्यान कर रहा है।
8. निवण्ण	निषण्ण	द्रव्य से लेटा है, भाव से बैठा है।
9. निवण्ण	निवण्ण	द्रव्य से लेटा है, भाव से भी लेटा है अर्थात् आर्त्तध्यान-रौद्रध्यान कर रहा है।

इन गाथाओं से बिल्कुल स्पष्ट है कि कायोत्सर्ग में साधक की तीन प्रकार की स्थितियाँ बन सकती हैं।

1. साधक धर्मध्यान या शुक्लध्यान स्वरूप प्रशस्तध्यान के द्वारा विपुल कर्मों की निर्जरा कर सकता है। उत्तराध्ययन के 29 वें अध्ययन की 12 वीं पृच्छा में भी आया- **काउसग्गेणं भंते ... पसत्थझाणोवगए** प्रशस्त ध्यान से युक्त होता है।
2. ध्यान की गहराई में नहीं पहुँचने पर सार्थक चिंतन चल सकता है, जिसे उत्तराध्ययन के 26 वें अध्याय में 'किं तवं पडिवज्जामि एवं तत्थ विचिंतए। काउसग्गं तु पारित्ता करिज्जा जिणसंथवं।।51।। तप का चिंतन करें। 'इच्छामि णं भंते' में 'देवसिय णाण-दंसण-चरिताचरित तव अइयार चिंतणत्थं करेमि काउसग्गं' ज्ञान, दर्शन, चारित्ताचरित्र तप के अतिचारों का चिंतन करने के लिए कायोत्सर्ग करता हूँ। कभी-कभी खराब चिंतन भी रह सकता है। जिसे दुव्विचिंतिओ से कहा गया। इन सबमें चित्त की चंचलता रहती है।
3. दुर्ध्यान या अप्रशस्त ध्यान के रूप में कर्मबंधन कारक आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान हो सकता है।

आवश्यक निर्युक्ति के पाठ को पूर्वाचार्यों ने हिन्दी भाषा में सार रूप में व्यवस्थित कर कह दिया "कायोत्सर्ग में आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान ध्याया हो धर्मध्यान शुक्लध्यान न ध्याया हो।" (*तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी महाराज द्वारा कृत समाधान श्री त्रिलोकचन्द जी जैन, जयपुर द्वारा प्रेषित*)

मित्र और मित्रता

- "जो तुम्हें बुराई से बचाता है, नेक राह पर चलाता है और मुसीबत के समय तुम्हारा साथ देता है, बस वही मित्र है।" - *तिरुवल्लुवर*
- सच्ची मित्रता में उत्तम बोध की सी निपुणता और परख होती है। अच्छी से अच्छी माता का धैर्य और कोमलता होती है। ऐसी ही मित्रता करने का प्रयत्न प्रत्येक को करना चाहिए।" - *आचार्य रामचन्द्र*

-संकलन : श्री अभयकुमार जैन, 'तृप्ति' बंदा रोड़, भवानी मण्डी (राज.)

प्रासंगिक

आत्मशोधन का पर्व : पर्वाधिराज पर्युषण

प्रो. सुमेरचन्द जैन

अध्यात्म मानव-जीवन का अभिन्न अंग है। आध्यात्मिकता के प्रचार-प्रसार में मानव सदैव आगे रहा है। देश में समय-समय पर मनाए जाने वाले विभिन्न धार्मिक पर्व इस बात के प्रमाण हैं कि यदि ये पर्व न होते तो पता नहीं मानव जीवन का विकास कौन करता? भारतीय संस्कृति में पर्व जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है, जिसकी यहाँ कोई उपेक्षा नहीं कर सकता। आज मानव जीवन का प्रवाह इन धार्मिक पर्वों के कारण ही बना हुआ है। इसी क्रम में देखा जाए तो पता चलेगा कि कुछ पर्व मानव मस्तिष्क पटल पर खुशी का संचार करते हैं तो कुछ पर्व मानव जीवन को परिष्कृत कर देते हैं। ये पर्व आदि काल से चले आ रहे हैं। श्रमण संस्कृति का पर्व पर्युषण धार्मिकता से परिपूर्ण है। यह परिष्कार का महापर्व है।

पर्युषण पर्व मानव मन को सांसारिक प्रपंचों में न पड़ने व उज्ज्वल विचारों की ओर बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। यह एक मात्र आत्मशुद्धि का प्रेरक पर्व है, इसीलिए यह पर्व ही नहीं पर्वाधिराज है। जैन समुदाय का सर्वमान्य विशिष्टतम पर्व है। यह पर्व जप, तप, साधना, आराधना, उपासना, अनुप्रेक्षा आदि अनेक प्रकार के अनुष्ठानों का अवसर है।

जैन धर्म में श्वेताम्बर और दिगम्बर दो परम्पराएँ हैं। उनमें श्वेताम्बर परम्परा जिसमें स्थानकवासी, मूर्तिपूजक, तेरापंथी आते हैं, वे सभी आठ दिन का पर्युषण पर्व मनाते हैं। दिगम्बर आम्नाय में धर्म के दस भेदों के आधार पर दशलक्षण पर्व मनाते हैं जो श्वेताम्बर समाज की संवत्सरी के दिन से शुरु होकर अनन्तचतुर्दशी को सम्पन्न होता है। अनन्त-चतुर्दशी को दिगम्बर समाज संवत्सरी की तरह मनाता है। यदि श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों परम्पराओं के पर्युषण पर्व के दिनों को मिलाकर देखा जाए तो यह सतरह दिन का पर्व हो जाता है।

पर्युषण पर्व के दिनों में श्वेताम्बर दिगम्बर अपनी आम्नाय अनुसार विभिन्न धर्मचर्याएँ साधते हैं। उपवास, पौषध, त्याग, प्रत्याख्यान, प्रतिक्रमण, आत्मालोचन आदि धर्म क्रियाएँ तो बड़ी संख्या में होती ही हैं, वहीं आजकल पर्युषण पर्व में विविध आध्यात्मिक, धार्मिक, सामाजिक एवं जैन धर्म शिक्षा-सम्बन्धी अनेक शिविरों एवं प्रतियोगिताओं के आयोजन किए जाने लगे हैं। इनसे बच्चों, युवकों, महिलाओं एवं अन्य श्रावक-श्राविकाओं की

धार्मिक कार्यों में भागीदारी हो जाती है।

पर्युषण महापर्व का उद्देश्य– पर्युषण पर्व अध्यात्म का प्रतिनिधि पर्व है। यह एक मात्र आत्मालोचन व आत्म-निरीक्षण का प्रतीक है। इसका उद्देश्य बिल्कुल परम है, जिसके अनुसार आकांक्षाओं, आशाओं से विरत होकर आत्मस्थ होना है, अपने स्वरूप तक पहुँचना है, अपने स्वभाव को पाना है। यही मनुष्य की अन्तिम मंजिल है, यही जीवन का चरम एवं सर्वोत्तम साध्य है।

मनुष्य सभी सम्बन्धों से गुजर चुका है। जीवन के सभी स्वादों का आस्वाद ले चुका है, पर जीवन खाली का खाली रह गया। सब कुछ तो फीका पड़ा है, कहीं कोई मिठास पैदा नहीं हुई, हो भी नहीं सकती। मनुष्य ने जिसमें जो नहीं है, उसमें से उसे पाने का असफल प्रयास किया। वह जल मन्थन से नवनीत और बालू कणों से तेल पाने का निरर्थक परिश्रम करता रहा, किन्तु असत् से सत् की उत्पत्ति नहीं हो सकती।

पर्युषण महापर्व स्व में ही सर्वस्व और परमानन्द होने की अविचल आस्था उत्पन्न करता है और उसे प्राप्त करने की उत्कण्ठा जगाता है। इसका ज्योतिर्मय संदेश है- गहरे में उतर जाओ। निर्भय बनकर, निस्पृह और निष्कम्प बनकर मनुष्य साध्यनिष्ठ बन जाए तो ऊपर के समस्त झंझट समाप्त हो जाते हैं। झाड़-झंखाड़ तो इसलिए दिखते हैं कि मनुष्य लक्ष्यबद्ध नहीं हुआ है। स्व में स्थित होने के बाद पर-भाव ही कहाँ होता है?

बड़ा मार्मिक प्रसंग है। एक बार एक महिला रात के अंधेरे में अपने प्रेमी के आवास पर जा रही थी। अपने प्रेमी में डूबी हुई, प्रेम में सर्वथा सरोबार थी। अचानक उसका पैर ईश्वर-उपासना में संलग्न एक व्यक्ति पर पड़ा। वह चीखा। अरे! तुम कौन हो? कैसे चलती हो? मैं भगवान की आराधना में लगा हूँ। प्रार्थना की मुद्रा में झुका बैठा हूँ। वह औरत जरा सहमी और विस्मित होकर बोली- "मैं एक सामान्य पुरुष के प्रेम में भी तुम्हें देख नहीं पायी। कुछ नज़र ही नहीं आया। तन-मन में एक ही रम गया है। इतनी तदात्मक बन गयी हूँ। तुम तो परमात्मा की भक्ति कर रहे थे। उनकी अभ्यर्थना में लगे हो। मैं तुम्हें नज़र कैसे आयी? लगता है भगवान तुम्हारे मन में उतरा नहीं। तन्मय को पर बोध हो ही कैसे सकता है? पर्युषण हमें इतना ही गहरा आत्मस्थ होने का बोध देता है।

महापर्व की आराधना– पर्युषण पर्व के दिनों में जैन सात्त्विक जीवन जीते हैं। ब्रह्मचर्य व्रत की आराधना के साथ खान-पान और अन्य व्यवहार भी जैनों का कुछ विलक्षण हो जाता है। जैन धर्मानुसार वनस्पति और पानी में भी जीव है। इनके अनावश्यक प्रयोग को जैन शास्त्रों में पाप माना जाता है। आवश्यकतानुसार प्रयोग में पर्युषण के दिनों में जैन इनकी हिंसा से अधिक से अधिक बचने का प्रयास करते हैं।

पर्युषण के दिनों में प्रत्येक जैन कुछ दिन उपवास में व्यतीत करते हैं। पर्युषण का प्रारम्भ होता है, उस दिन अधिकतर जैन उपवास रखते हैं। संवत्सरी महापर्व पर्युषण का अन्तिम दिन होता है। संवत्सरी को सभी जैन अनिवार्यतः उपवास रखते हैं। प्रतिक्रमण की आराधना करते हैं। पौषध, आत्म-आलोचना आदि धर्म क्रियाएँ कर पूरा दिन धर्म-साधना में व्यतीत करते हैं। मोटे रूप में पर्युषण महापर्व की आराधना के तीन सूत्र हैं-

1. **समता**- भगवान महावीर ने समता को परम धर्म कहा है- **'समयाधम्ममुदाहरे मुणी'**। हर परिस्थिति में निर्लेप रहना- समचित्त रहना समता है। प्रिय के प्रति मोह, अप्रिय के प्रति विद्वेष, अनुकूलता में खिलना, प्रतिकूलता में मुरझाना, लाभ में फूलना और अलाभ में सिकुड़ना, निन्दा में व्यथित होना और प्रशंसा में प्रसन्न होना- ये सब विषम चित्त की विसंगतियाँ हैं। संतुलित चित्त में कभी कोई विक्षेप नहीं होता। पर्युषण पर्व का प्रथम सूत्र समता है।

2. **क्षमा**-जीवन सदैव सीधे सपाट मार्ग से नहीं चलता है, बड़े ऊबड़-खाबड़ रास्ते से गुजरना होता है। यह निरपेक्ष नहीं है, बड़ा सापेक्ष है। विभिन्न प्रकृति के विभिन्न लोगों से सम्पर्क होता है। समझ न हो तो टकराव और उलझने की बड़ी सम्भावना रहती है। मिनटों में बोलचाल और अनबन हो जाती है। दूसरों से नहीं अपनों से भी बड़ा मनमुटाव और वैमनस्य हो जाता है। पर्युषण पर्व का संदेश है- भूलो, बड़े से बड़े अपराधी को भी क्षमा दो। **'क्षमा वीरस्य भूषणं'** क्षमा वीर का भूषण है। क्षमा मांग भी लो, अकड़ कर मत रहो। झुक जाओ। झुकने में बड़ा फायदा है। टूटने से बच जाओगे, आगमवाणी को जीवन में उतार लो। **'मित्ती मे सव्व भूएसु वेरं मज्झं ण केणई'**- मेरी छोटे-बड़े सभी प्राणियों से मैत्री है। किसी के साथ वैर नहीं। मैं सभी से क्षमा मांगता हूँ। मुझे सब क्षमा दें। निर्वैर भाव दशा को पाना पर्युषण आराधना का दूसरा सूत्र है।

3. **संयम**- पर्युषण आराधना का तीसरा सूत्र है- संयम की साधना। संयम चरित्र का संस्कारक तत्त्व है। अशोधित चरित्र घानी से निकले खल की तरह व्यर्थ है। संयम के द्वारा हम आत्मशोध के लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं। संकल्प, वचन और कार्य की एकरूपता के निरन्तर अभ्यास का नाम मोटे तौर पर संयम है। संयम की उपलब्धि के लिए सबसे पहले जीभ और उसके बाद आँख को पकड़ना चाहिए। इन दोनों से मन विकारी बनता है। असंयमित व्यवहार से अशुचिता बढ़ती है। मन संयम से ही शुद्ध-बुद्ध बनता है।

-10, इंडस्ट्रियल एरिया, रानी बाजार, बीकानेर-334001 (राज.)

English-Section

An Analysis of the term - *Micchāmi dukkaḍaṃ*

Prof. Jagat Ram Bhattacharyya

The term *micchāmi dukkaḍaṃ* is very popular among the Jains from the bygone era to the present day society in the context of seeking apologies for or repentance against any misconduct or misbehavior to others through mind, speech and body. Physical and vocal actions are the reproduction of the inner source, that is, the mind. So physical actions, including the vocal actions is the outcome of the inner actions. Purification of soul is the pivotal point in Jainism in terms of desire of emancipation. Bondage of karma particles represents both merit (puṇya) and demerit (pāpa), attachment (rāga) and aversion (dveṣa) and so on. So the purified soul is not only free from the karma blended with sinful act, it also prohibits the entry of virtuous act.

Āvaśyakasūtra is a treatise that dealing with the ethical code of conduct which is strictly meant for a mendicant but is applied for a householder also obeying twelve types of small vows. Normally the meaning of the word āvaśyaka is 'essential duty' and these essential duties are performed by an ascetic striving for emancipation. The Āvaśyakasūtra contains six chapters, broadly known as six essential duties or major disciplines, such as, sāmāyika (penance for being impartial), caturviṃśati-stava (praising of the 24 Tīrthaṅkaras), vandana (eulogy to the Master), pratikramaṅa (confession for evil deeds), kāyotsarga (being free from attachment of body) and pratyākhyāna (relinquishing of worldly affairs).

Jainism prescribes confession for five types and these are daivasika (in the evening), rātrika (in the dawn), pākṣika (fortnightly), cāturmāsika (at the end of the cluster of four months) and sāmvatsarika (yearly). So in each time of confession the words 'micchāmi dukkaḍaṃ' come repeatedly. Sāmāyika, the first āvaśyaka holds pratikramaṇa in a concised form and first introduces the term micchāmi dukkaḍaṃ - इच्छामि ठामि काउस्सग्गं जो मे देवसिओ अइयारो कओ ....समणाणं जोगाणं जं खंडियं जं विराहियं तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

The same is repeated in many places, such as, iriyāpathikasūtra (prescription on careful walking) and in the sūtra meant for transgression of knowledge. The main chapter on pratikramaṇa holds enough amount of the reading तस्स मिच्छा मि दुक्कडं। Starting from the very first sūtra, śayyāsūtra and then bhikṣādoṣa-nivṛtti-sūtra and so on, there are ample examples of the term तस्स मिच्छा मिदुक्कडं। The term तस्स मिच्छा मि दुक्कडं or मिच्छामि दुक्कडं / मिच्छा मि दुक्कडं in short, are used in the meaning of begging pardon for any action that causes harm to others. And it is specially used at the time of paryuṣaṇa parvan every year in the Jain communities.

The meaning of मिच्छामि दुक्कडं / मिच्छा मि दुक्कडं which is in vogue in the present day society is - I am falsifying (my) evil deeds as if Sanskrit equivalent is (अहं)*मिथ्यामि दुष्कृतम्। And the term मिच्छा मि दुक्कडं denotes - Let my evil deed (be) false, in Sanskrit it may be read as मिथ्या मे दुष्कृतम्। The problem may be treated grammatically and linguistically. Here the word मिथ्या is an indeclinable and not a verb. The Sanskrit word मिथ्या is changed into मिच्छा by the sūtra ह्रस्वात् थ्य-श्च-त्स-प्सामनिश्चले (Hemacandra 8.2.21). Linguistically, this change occurs due to mutual assimilation. Dissimilar conjuncts are not used in Prakrit and that is why through mutual assimilation dental थ is changed into palatal छ by the influence of the palatal sound य as this sound being weak and hence, is elided making the aspirate sound छ as doubled. And the initial छ of the conjunct छ्छ is changed into non-aspirated form as च. So the term मिथ्या is changed into मिच्छा. And the suffix मि cannot be added as a form of first person singular as this is not denoting a verb. In the second explanation where Sanskrit genitive singular of the word अस्मद् (I) is turned as मे in the meaning of 'my' into मि in Prakrit also does not correspond with the syntax of the whole sentence starting with तस्स which is again conjectured as Sanskrit genitive form of तद् (He / that etc.) as तस्य. The word तस्य may be changed as तस्स by applying linguistic and grammatical rules where after elision of य by progressive assimilation the remaining स becomes doubled (cf. Hemacandra ङसः स्स; 8.3.10). Now the meaning of the sentence does not

stand on the syntactical measurement. So instead of falsifying someone's evil deed the meaning would be more appropriate if we take the meaning as 'I am closely inspecting my bad deeds' and relating with this statement the outcome of the meaning broadly may be as 'I beg your pardon (for any bad deed that causes harm to you)'. The Prakrit sentence - तस्स मिच्छामि दुक्कडं should be read as तस्समिच्छामि दुक्कडं, Sanskrit equivalent would be as तत् समीक्षे दुष्कृतम् . The root ईक्ष् denotes 'close inspection or careful watching' and the prefix सम् applied in the meaning of 'perfectly'. The root ईक्ष् in Sanskrit is applied as middle (आत्मनेपद) and not active (परस्मैपद). Interestingly, Prakrit generally tends to active almost always irrespective of the root being active or middle or both in Sanskrit. The root ईक्ष् is formed as ईक्षे in the indicative, present tense, first person singular form which in Prakrit may be read as *ईक्षामि › *ईच्छामि (see Hemacandra - क्षः खः क्वचित्तु छ-झौ; 8.2.3) › इच्छामि (ई becoming इ due to being preceded by a conjunct, Hemacandra - ह्रस्वः संयोगे; 8.1.84). And addition with prefix सम्, it becomes समीक्षे and the Prakrit equivalent is समिच्छामि. So the meaning of समीक्षे is '(I am) perfectly and carefully watching or closely inspecting'. And the meaning of the sentence तस्समिच्छामि दुक्कडं (Sanskrit तत् समीक्षे दुष्कृतम्) is - (I am) perfectly and carefully watching (समीक्षे) that (तत्) evil deed (दुष्कृतम्).The meaning broadly comes to as 'I beg your pardon (for the bad deeds performed by me)'. So मिच्छामि दुक्कडं / मिच्छा मि दुक्कडं does not hold any meaning unless it is said तस्समिच्छामि दुक्कडं or shortly समिच्छामि दुक्कडं.

Books consulted -

1. Aṃgasuttāṇi (vol.3) - Synod Chief Ācārya Tulsī, Ed. Yuvācārya Mahāprajña, Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun, 1992
2. Āvaśyakasūtram - Ed. Yuvācārya Śrī Miśrīmaljī Madhukar, Shree Agam Prakashan Samiti, Beawar, 1985.
3. Āvaśyaka Niryukti (vol.1) - Ed. Samaṇī Kusumprajñā, Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun, 2001
4. Jain darśan: manan aur mīmāṃsā - Ācārya Mahāprajña, Adarsh Sahitya Sangh, 210, Deen Dayal Upadhyay Marg, New Delhi - 110002, revised version, 2010.
5. Siddha-Hema-śabdānuśāsanam - Ed. P.L. Vaidya, BORI, Pune, 1980

-Department of Sanskrit, Pali and Prakrit Bhasa Bhavana, Vishva Bharati University Shantiniketan-731235 (W.B.)

तत्त्वज्ञान प्रश्नोत्तरी (क्रमशः88)

आओ मिलकर ज्ञान बढ़ाएँ

श्री धर्मचन्द जैन

(गमा का थोकड़ा, मई अंक से आगे)

जिज्ञासा- सन्नी मनुष्य पहली नारकी के घर में कौन-कौन से गमों से आकर उत्पन्न होते हैं?

समाधान- सन्नी मनुष्य अर्थात् गर्भज मनुष्य दो प्रकार के होते हैं- 1. संख्यात वर्ष की आयु वाले कर्मभूमिज मनुष्य और 2. असंख्यात वर्ष की आयु वाले अकर्मभूमिज मनुष्य।

संख्यात वर्ष से यहाँ तात्पर्य एक कोटि पूर्व वर्ष तक की आयु वाले गर्भज मनुष्यों से समझना चाहिए। असंख्यात वर्ष की आयु से तात्पर्य करोड़ पूर्व वर्ष से अन्तर्मुहूर्त अधिक से लेकर तीन पल्लोयम तक की स्थिति वाले युगलिक मनुष्यों से है।

प्रज्ञापना सूत्र के छठे पद के आधार से यह कहा जा सकता है कि संख्यात वर्ष की आयु वाले सन्नी मनुष्य ही नारकी में आते हैं। असंख्यात वर्ष की आयु वाले सन्नी मनुष्य (युगलिक) तो मरकर देवगति में ही उत्पन्न होते हैं।

संख्यात वर्ष की आयु वालों में भी कम से कम पृथक्त्व मास की स्थिति वाले मनुष्य ही पहली नारकी में आकर उत्पन्न होते हैं। पृथक्त्व मास से कम स्थिति वाले सन्नी मनुष्य नारकी-देवता में आकर उत्पन्न हो ही नहीं सकते।

कम से कम पृथक्त्व मास (प्रायः दो से नौ मास तक) की स्थिति वालों से लेकर अधिक से अधिक एक करोड़ पूर्व वर्ष की स्थिति वाले सन्नी मनुष्य पहली नारकी में नौ ही गमों से आकर उत्पन्न हो सकते हैं।

नौ गमों का विवेचन मई-2014 के जिनवाणी अंक में पेज संख्या 44 से 47 तक में उल्लिखित सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय के पहली नारकी में आकर उत्पन्न होने के समान समझना चाहिए। अन्तर इतना अवश्य है कि सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय तो अन्तर्मुहूर्त की स्थिति वाला पर्याप्त भी पहली नारकी में आकर उत्पन्न हो जाता है, किन्तु सन्नी मनुष्य कम से

कम पृथक्त्व मास की स्थिति वाले ही आते हैं। अतः जघन्य स्थिति में अन्तर्मुहूर्त के स्थान पर पृथक्त्व मास तथा 4 अन्तर्मुहूर्त के स्थान पर 4 पृथक्त्व मास का उल्लेख करना चाहिए।

जिज्ञासा– संख्यात वर्ष की आयु वाले गर्भज मनुष्य जो पहली नारकी में आकर उत्पन्न होते हैं, उनकी क्या-क्या प्रमुख विशेषताएँ होती हैं?

समाधान– पहली नारकी में आकर उत्पन्न होने वाले संख्यात वर्ष की आयु वाले सन्नी मनुष्य में निम्नांकित प्रमुख विशेषताएँ होती हैं–

1. संख्यात वर्ष वाले सन्नी मनुष्य की मनुष्य भव में अवगाहना कम से कम पृथक्त्व अंगुल (प्रायः 2 से 9 अंगुल) से लेकर अधिक से अधिक 500 धनुष तक की हो सकती है।
2. छह संहननों में से कोई भी संहनन के धारक संख्यात वर्ष की स्थिति वाले सन्नी मनुष्य पहली नारकी में आ सकते हैं।
3. छह संस्थानों में से कोई भी संस्थान के धारक संख्यात वर्ष की स्थिति वाले सन्नी मनुष्य पहली नारकी में आ सकते हैं।
4. मति आदि 4 ज्ञान तथा 3 अज्ञान वाले, 3 वेद में से कोई भी वेद वाले, छह लेश्याओं में से किसी भी लेश्या वाले संख्यात वर्षायुष्क सन्नी मनुष्य, पहली नारकी में आकर उत्पन्न हो सकते हैं।
5. एक समय में 1,2,3 यावत् संख्याता मनुष्य आकर पहली नारकी में उत्पन्न हो सकते हैं।
6. शुभ तथा अशुभ दोनों प्रकार के अध्यवसाय वाले मनुष्य आकर पहली नारकी में उत्पन्न हो सकते हैं। यहाँ इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि जघन्य गमों से आने वाले मनुष्य में अध्यवसाय अशुभ ही होंगे, जबकि औघिक व उत्कृष्ट गमों से आने वाले मनुष्य में अध्यवसाय शुभ-अशुभ दोनों हो सकते हैं।
7. संख्यात वर्ष की स्थिति वाले मनुष्य और पहली नारकी इन दोनों में मिलाकर भवों की संख्या कम से कम 2 तथा अधिक से अधिक 8 हो सकती है। दो भव से तात्पर्य एक भव मनुष्य का तथा एक भव पहली नारकी का लेना चाहिए। 8 भव से तात्पर्य 4 भव मनुष्य के तथा 4 भव पहली नारकी के लेना चाहिए। मनुष्य, पहली नारकी, मनुष्य, पहली नारकी इस क्रम से 8 भव समझने चाहिए। **(क्रमशः)**

–रजिस्ट्रार, अ.भा.श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर (राज.)

गीत

उत्तराध्ययन को खोलो

मधुर व्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा.

(तर्जः- गुण सौरभ से रहे महकता, ऐसा अपना घर हो)

वीर प्रभु की अन्तिम वाणी, उत्तराध्ययन को खोलो,
जय जिनवाणी बोलो......।।टेर।।

गजेन्द्र गुरु को वन्दन करके, सुयदेवाणं ध्याऊँ,
उत्तराध्ययन की महिमा गाने, शुभाशीष को चाहूँ,
मंगल हो सबका मंगल हो, भाव हृदय में घोलो,
जय जिनवाणी बोलो......।।1।।

मंगलकारी भव भय हारी, जिनवाणी है शरणा,
जिसके आराधन से निश्चित, मिटता जन्मना मरणा,
पाप कर्म को छोड़ के अब तो, जिनवाणी के हो लो,
जय जिनवाणी बोलो......।।2।।

जिनवाणी का हर अक्षर ही, अक्षय आनन्द दाता,
शब्द शब्द में सत्य धर्म का, संदेशा मिल जाता,
हर वाक्य में वैराग्य की, गूंज हृदय की ढालो,
जय जिनवाणी बोलो......।।3।।

छलक रही है हर एक पद में, तीर्थंकर की करुणा,
जिससे जिनशासन जय पाता, आगम बलिया समणा,
हम भी जीवन पावन करलें, इधर उधर मत डोलो,
जय जिनवाणी बोलो......।।4।।

जिससे होता तीर्थ का पोषण, जो है साधक शाला,
हेय, ज्ञेय और उपादेय का, मिलता बोध निराला,
तीर्थंकर की श्रेष्ठ निशानी, जिनवाणी के हो लो,
जय जिनवाणी बोलो......।।5।।

(प्रथम अध्ययन)

सेवा श्रद्धा क्षमा गुणों की, महक विनय से बढ़ती,
संयम फलता ज्ञान भी बढ़ता, वीतरागता जगती,
विनयवान की महिमा सुनकर, अन्तर आज टटोलो,
जय जिनवाणी बोलो......।।6।।

अनुज भ्रातों को कैसे झुकूँ में, बाहुबली मन आया,
भूख प्यास से खूब तपे पर, केवलज्ञान न पाया,
बहनों की शिक्षा से जागे, अहंकार मत पालो,
जय जिनवाणी बोलो......।।7।।

किसका अहं करे तू मनवा, एक दिन सब छूटेगा,
धन वैभव और मान प्रतिष्ठा, सब सपना टूटेगा,
दूर करो भ्रम जनम-जनम का, प्रभु वचनों पर चालो,
जय जिनवाणी बोलो......।।8।।

धर्म का मूल विनय समझाकर, पहला पाठ पढ़ाया,
मिला उसी को मुक्ति का फल, जिसने भी अपनाया,
सब कदमों को मिले सफलता, अहंकार को टालो,
जय जिनवाणी बोलो......।।9।।

(द्वितीय अध्ययन)

भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी या मच्छर खूब सताये,
संयम पथ पर डटा रहे पर, दीन भाव नहीं लाए,
परीषह से होती है निर्जरा, अपना मन समझालो,
जय जिनवाणी बोलो......।।10।।

सुख दुःख तो कर्मों का फल है, हर्ष शोक क्या करना,
कर्म कर्ज से मुक्ति पाने, हरपल समता रखना,
आगम की शिक्षा जीवन में, समता रस को घोलो।
जय जिनवाणी बोलो.......।।11।।

घबराये उस अरणक मुनि को, माँ ने दी वो शिक्षा,
मर मिट जा संयम पथ पर तू, दे दे आज परीक्षा,

दृढ़ चेता उस महामुनि की, सीख हृदय में तोलो।
जय जिनवाणी बोलो.......।।12।।

कष्ट परीषह आये जब भी, साधक चिन्तन करता,
देह विनाशी मैं अविनाशी, मेरा धर्म है समता,
कर्मोदय में अविचल बनकर, द्रष्टा भाव जगालो।
जय जिनवाणी बोलो.......।।13।।

(तृतीय अध्ययन)

मोक्ष सहायक चार अंग दुर्लभ, है जग में पाना,
माणुसत्तं सुई सद्धा, संयम सत्त्व जगाना,
पाये दुर्लभ चार अंग तो, जीवन साज सजालो।
जय जिनवाणी बोलो.......।।14।।

कर्माधीन बना यह प्राणी, कहाँ-कहाँ नहीं भटका,
आर्त रौद्र और भोग बुद्धिवश, चारों गति में अटका,
हलुकर्मी ही नर तन पाता, कौडी संगत मत तोलो।
जय जिनवाणी बोलो.......।।15।।

मानव भव क्यों चूक रहे हो, दुर्लभ धर्म श्रवण है,
श्रद्धा परम दुल्हा समझो, क्यों मन में उलझन है,
संयम में पुरुषार्थ जगाकर, सिद्धि पद को पालो।।
जय जिनवाणी बोलो.......।।16।।

अन्तर हृदय सरल है जिसका, धर्म वहीं टिक पाता,
निर्मल निश्छल अनासक्त बन, लक्ष्य पे बढ़ जाता,
दुर्लभ अंग का लाभ उठाकर, जीवन सफल बनालो।।
जय जिनवाणी बोलो.......।।17।।

(क्रमशः)

संकलनकर्ता-
नवरतन डागा, पूर्व महामंत्री, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ,
'लक्ष्य' 76, नेहरुपार्क, बख्तसागर स्कीम, जोधपुर-342003 (राज)

धारावाहिक

लग्न की वेला (6)

आचार्य श्री उमेशमुनि जी 'अणु'

लोगों की बातें

सार्थवाह गुणसुन्दर ने जब से वैद्यराज की बात सुनी, तबसे उनके मन में यही भाव उठने लगे कि आचार्य महाराज यहीं विराज जाएँ तो कितना अच्छा? आज एक प्रसंग से उनका यह भाव और दृढ़ हो गया।

गुणसुन्दर अभी नाम के सार्थवाह थे। वे सार्थ लेकर शायद ही कभी परदेश गये हों। वस्तुतः सार्थवाह तो उनके पिता थे। वे सार्थ लेकर कई बार विदेश गये थे, जिससे कइयों को अच्छा सहयोग मिला था। आज के कई प्रमुख सम्पन्न श्रेष्ठी उन्हीं के सार्थ की देन थे। गुणसुन्दर सार्थ की इस विशेषता से परिचित थे। इस बहाने धनार्जन के साथ ही सेवा का सुन्दर अवसर प्राप्त होता था। अतः उनका मन भी सार्थ लेकर परदेश जाने का होता था और उस समय उनका यह भाव और तीव्र हो जाता था, जब आवश्यकता वाला कोई परिचित पूछ बैठता था कि आप कब विदेश पधार रहे हैं? परन्तु उनका यह भाव दिल में ही रह जाता, क्योंकि परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं थीं। लम्बे समय तक वे घर से बाहर नहीं रह सकते थे।

आज जनपद का एक बन्धु उनकी दुकान पर आवश्यक सामग्री का क्रय करने के लिये आया। दोनों के पूर्वजों में परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध था। अतः वे भी थोड़ी-सी प्रीति पाल लेते थे। अभी उस बन्धु का हाथ कुछ तंग चल रहा था। वह परदेश जाकर, अपना भाग्य आजमाना चाहता था, पर किसी के सहयोग या साथ के अभाव में यह हो नहीं सकता था। अतः उसने सहज में ही गुणसुन्दर से पूछ लिया- "सेठ! क्या विदेश जाने की इच्छा है?"

"बन्धु! इच्छा तो होती है, परन्तु ऐसा होना सम्भव हो तब न!"- गुणसुन्दर मानो स्वप्न देख रहे हों इस प्रकार बोले- "पिताजी के समय की बातें पिताजी के साथ गयी।" वह भाई बोला- "बन्धु! ऐसी क्या कठिनाई है?"

"पारिवारिक झंझटें तो हैं ही। कई नागरिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्व भी हैं। इधर अभी गुरुदेव पधारे हैं। वे वृद्ध हैं। उनका सत्संग छोड़कर भी कहीं बाहर जाने का मन नहीं होता है।"

"कौन गुरुदेव?" "पूज्यवर मुनिचन्द्राचार्यजी।"

"ग्राम में मैंने भी सुना था कि आचार्य महाराज यहाँ विराजमान हैं। ऐसा भी सुना था-

उनका जंघाबल क्षीण हो गया है।'' उसके कथन का आशय यह था कि आचार्यदेव यहीं स्थिरवास विराज गये हैं। किन्तु अभी ऐसी बात थी नहीं। अतः गुणसुन्दर को इस बात को स्पष्ट करना आवश्यक प्रतीत हुआ। वे बोले- ''नहीं, एकदम ऐसी बात तो नहीं है, किन्तु वृद्धावस्था का प्रभाव तो है ही।''

''मुझे भी उनके दर्शन करना है। वे परम शान्त-स्वरूप हैं। उनके दर्शन से ही मन शीतल हो जाता है। उनके दर्शन सदैव होते रहें तो कितना अच्छा। क्योंकि हम जनपदियों को विशेष लाभ नहीं मिल पाता है। यदि वे योग्य केन्द्र स्थल में स्थिरता करें तो हम जैसों को भी आते-जाते लाभ मिल सकता है।'' वह बात की थाह लेना चाहता था, इसलिए बोला- ''आचार्य भगवान यहाँ कब तक विराजेंगे?''

''गुरुदेव के विषय में आपका कथन बिल्कुल ठीक है। पर वे यहाँ कब तक विराजेंगे- इसका क्या पता? बहते पानी और रमते जोगी का क्या ठिकाना?'' गुणसुन्दर ने कहने को तो यह बात कह दी, परन्तु इस बात के समाप्त होते ही उनके हृदय में उथल-पुथल मच गयी। वे सोच रहे थे-''यह देहाती भी कैसी मर्म की बात कह गया? इसी प्रकार आस-पास के कई छोटे ग्रामों के लोगों की दृष्टि ऐसी ही होगी। परन्तु हमारा कुशस्थलपुर का संघ क्या चिन्तन कर रहा है?.....

वह बन्धु अपना कार्य करके चला गया, परन्तु एक प्रश्न छोड़ गया, जो गुणसुन्दर के मुनीमों के हृदय में भी गूँज रहा था। उनके अधिकांश मुनीम जैनेतर थे, परन्तु उनमें से कई आचार्यश्री से प्रभावित ही नहीं पूरी तरह आकर्षित थे। उनमें कई स्वतः बिना किसी प्रेरणा के आचार्यश्री के दर्शन कर आते थे। उनके दो-चार शब्द ही, अरे! कभी-कभी तो उनकी मौन मंगलमुद्रा ही उन्हें आनन्द से तरंगित कर देती थी। यद्यपि वे जैनमुनियों की आचार-संहिता से परिचित नहीं थे, तथापि उन्होंने सुन रखा था कि जैनमुनि चातुर्मास के सिवाय अन्य समय कहीं भी उनतीस दिन से अधिक नहीं रह सकते हैं। आचार्यश्री के दर्शन के बाद इस विषय में उनके मन में कई प्रश्न उठ रहे थे। सेठ और देहाती की अन्तिम बात सुनकर उनके मन के प्रश्न तीव्रता से उभर गये। मुख्य मुनीमजी बोल उठे- ''सेठ साहब! क्या जैनमुनि चातुर्मास के सिवाय शेष समय कहीं भी एक मास से ज्यादा नहीं रह सकते?''

''हाँ, मुनीमजी!''- सेठ ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

''यह तो शरीर है। कभी कोई बीमार हो जाय तो?''

''यह विवशता है। इसका क्या उपाय?''

''अच्छा, तो इसका यह अर्थ हुआ''- मुनीमजी ने बात का निष्कर्ष खींचते हुए कहा- ''कि कारण उपस्थित होने पर उन्हें अधिक रुकना पड़ता है।''

"हाँ, यही बात है। चलने की स्थिति ही न हो तो कैसे चलेंगे?"

"कदाचित् साधु वृद्ध हो जाय तो?"

"मुनीमजी! वृद्धावस्था शरीर का ही एक धर्म है। समय पर वह आती ही है। तब वे कहीं योग्य स्थान देखकर स्थित हो जाते हैं। इसी को स्थिरवास कहते हैं।"

"क्या यह कुशस्थलपुर योग्य क्षेत्र नहीं है?"

"है, क्यों नहीं है?" आप अभी फरमा रहे थे कि आचार्य महाराज रमते जोगी हैं। क्या उन्हें यहाँ से जाने देना चाहिये? वे वृद्ध हो गये हैं। पैर भी थक गये हैं। शरीर की शक्ति क्षीण होती जा रही है। क्या भक्त लोगों को उन्हें यहाँ रुकने के लिये प्रार्थना नहीं करनी चाहिये?"

"धन्यवाद है, मुनीमजी! तुम्हें!"- गुणसुन्दर ने कहा- "जिधर हमारी दृष्टि नहीं पहुँची, वहाँ आपकी दृष्टि पहुँच गयी। आपने हमें अपने कर्त्तव्य का स्मरण करवाया। आपकी बात से मुझे प्रसन्नता हुई। क्या आपने आचार्य महाराज के दर्शन का लाभ लिया है?"

"उन पुण्यमूर्ति के दर्शन-लाभ बड़े पुण्य की बात है, सेठजी! हममें से कई जनों को यह पुण्य-लाभ प्राप्त होता है।"

दैवसिक प्रतिक्रमण के बाद रात्रि के समय नगरश्रेष्ठी और गुणसुन्दर का उपाश्रय के बाह्य भाग में वार्तालाप हो रहा था। सार्थवाह ने कहा- "श्रेष्ठीजी! आपको वैद्यराजजी की बात ज्ञात ही है। उनके कहने का आशय यह है कि गुरुदेव को अब विश्राम करना चाहिये।" नगरश्रेष्ठी ने उनकी बात का अनुमोदन करते हुए कहा- "सार्थवाहजी! मैं आपसे इस विषय पर पिछले दो दिनों से बात करना चाह रहा था। पर वह प्रसंग नहीं आया। मेरे मन में ये भाव आये हैं कि अपना नगर आचार्यश्री के स्थिरवास के लिए सभी प्रकार से योग्य है। यदि गुरुदेव यहाँ विराजें, तो उन्हें यहाँ सभी प्रकार से साता रहेगी।"

"श्रेष्ठीजी! हमें गुरु भगवान् से प्रार्थना करना चाहिये।"

"ठीक है। हम संघ के प्रमुखजनों से विचार-विमर्श कर लें। यदि सबकी एक राय हो तो गुरुदेव से स्थिरवास की विनति करें।"

"इस विषय में कौन विरोध करेगा? सभी गुरुदेव के ही तो उपासक हैं। यदि आपकी राय हुई तो सभी की राय हुई ही समझिये। मैं आपके साथ हूँ ही। आप प्रयास करें"- सार्थवाह ने दृढ़ता से कहा।

"धन्यवाद! मैं यही चाहता था। दो वहाँ सौ। अब सभी सहमत हो जायेंगे। फिर भी सबको यही प्रतीत होना चाहिये कि हमारी राय से कार्य हो रहा है। संघ से सम्बन्धित कार्य में संघ के प्रत्येक सदस्य का सहभाग उत्तम परिणाम लाता है।"

उधर गाथापति संघदास उपाश्रय से अपने घर पहुँचे। उनकी पत्नी अर्हद्दासी श्राविका-

संघ की प्रमुखा थी। अतः समय-समय पर उपासिकाएँ उनके घर पर इकट्ठी होकर, विचार-विनिमय करती रहती थीं। आज भी श्राविका-उपाश्रय से लौटती हुई कई बहिनें वहाँ रुक गयी थीं और उनमें परस्पर विचार-चर्चा चल रही थी। नगर-श्रेष्ठी की पत्नी सिद्धिदेवी, सार्थवाह की पत्नी मेरुसुन्दरी, शाह समरादित्य की पत्नी रतिमाला, भवदत्त की पत्नी सत्यबाला आदि श्राविकाएँ वहाँ उपस्थित थीं।

जब गाथापति ने घर में प्रवेश किया, तब कुछ तत्त्वचर्चा चल रही थी, परन्तु ऐसा लगा कि तत्त्वचर्चा तो समय प्रसार के लिये थी। वस्तुतः वे संघदास के आगमन की प्रतीक्षा कर रही थीं। गाथापति के आते ही उनकी पत्नी ने कहा- ''ये सब आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं।'' बात यह थी कि श्राविकाओं को कोई विशिष्ट कार्य होता या श्रावक-संघ से कुछ अपेक्षा होती तो वे गाथापति के माध्यम से ही संघ में बात पहुँचाती थीं। गाथापति ने पूछा- ''कहो, क्या बात है?''

अर्हद्दासी ने कहा- ''हम सबका यह विचार है कि आचार्यदेव यहाँ स्थिरवास विराजें तो कितना अच्छा हो?''

''बहुत बढ़िया''- यह कहकर गाथापति मौन हो गये।

संघ की अन्य प्रमुख श्राविका मधुप्रिया को यह बात न सुहायी। अतः वह बोली- ''बहुत बढ़िया कहने मात्र से कार्य हो जायेगा क्या? आप तो इस प्रकार फरमा रहे हैं कि इस विषय में आपकी कोई चाह ही न हो, फिर आप इसके लिये क्या उद्यम करेंगे?''

यह बात सीधी गाथापति पर प्रहार जैसी थी, परन्तु वे ऐसी बातों को सुनने के अभ्यस्त थे। उन पर इस बात का कुछ भी असर नहीं हुआ। वे शान्ति से बोले- ''इस विषय में किसी एक की इच्छा-अनिच्छा से क्या होना-जाना है, क्योंकि यह किसी व्यक्ति-विशेष का काम नहीं है। यह तो सारे संघ का काम है। संघ के प्रमुखजनों की राय एक होनी ही चाहिये। अतः उन्हें पूछना होगा।''

''संघ पर ऐसा क्या बोझ आने वाला है?''

''संतों का क्या बोझ? फिर भी आगे-पीछे की कई बातें सोचनी होती हैं। जोगी का मन रखना सरल नहीं है।'' सिद्धिदेवी बोली- ''क्या सोचना है बहनोई साहब! क्या साधारण जोगी और जैन साधु समान हैं और आचार्यदेव जैसी शान्तमूर्ति अन्यत्र कहाँ है?''

''देवीजी! अकेले गुरुदेव ही यहाँ नहीं रहेंगे। अन्य साधु भी उनकी सेवा में रहेंगे और साधु कोई भी हो, आखिर साधु ही है। उपदेश देना उनका काम है। यदि ये उपदेश दें, और किसी को वैराग्य आ जाय तो फिर क्या होगा? मान लो कोई युवक ही तैयार हो गये तो उनके माता-पिता नाराज़ होने लगेंगे। उस समय गुरु भगवान कड़वे ज़हर जैसे लगेंगे और

गुरु भगवान न रहकर जोगड़े रह जायेंगे। लोगों में तूफान खड़ा नहीं हो जाएगा?''

गाथापति ने यह बात इस ढंग से कही कि वहाँ पर बैठी हुई सभी बहिनें हँस पड़ी। सिद्धिदेवी भी हँसती हुई बोली-''बहनोईसा'' आप कैसी बात करते हो? ऐसा कौन निर्भागी होगा, जो ऐसी परम सौभाग्य की बात के लिये ऐसा तूफान खड़ा करेगा?''

''हूँ! ऐसी बात सभी के मन में हो तो कहना ही क्या? संघ में अनेक तरह के मनुष्य होते हैं। सबके मन समान नहीं हो सकते! ऐसी बात होने पर संघ में दरार पड़ सकती है।''

''मुझे तो आपकी बात समझ में नहीं आती? एक तरफ तो नमो लोए सव्वसाहूणं का जाप करें और दूसरी ओर साधु बनने-बनानेवाले का विरोध करें- यह भी कोई न्याय है?''

''बाईसा! तत्त्व की बात करना सरल है, परन्तु उसे व्यवहार में लाना बड़ा कठिन है। समय आता है तभी श्रद्धा की गहराई का पता चलता है।''

मेरुसुन्दरी से अब नहीं रहा गया। वह बोल उठी-''सेठसा'' आप भी कैसी बात करते हैं? कोई कपड़े की निन्दा करे तो कपड़ा ही नहीं पहनना क्या? भविष्य की बात भविष्य के गर्भ में है। श्रावक कुल में कोई भारी कर्मा जनमा हो तो आप कहें ऐसा भी हो सकता है, परन्तु इस किञ्चित् आशंका से क्या हम अपना कर्त्तव्य भी चूक जायें?''

उनकी पत्नी ने भी उसकी बात का समर्थन करते हुए कहा- ''बहिन! तुम्हारी बात सही है। पर अति चतुर मनुष्यों का चिन्तन प्रत्येक सम्भव विघ्न की गणना करता ही रहता है। वस्तुतः सच्चा चतुर मनुष्य तो वह है कि जो सम्भावित विघ्न को देखकर, उसके शमन का उपाय खोज कर रखे, परन्तु विघ्न-भय के कारण कार्य से विरत न हो।''

अपनी पत्नी की यह टिप्पणी सुनकर, गाथापति कुछ विचार में पड़ गये। वे समझ गये कि अर्धाङ्गना की यह टिप्पणी नहीं है, परन्तु मेरी बात से इस समय जो भ्रम उत्पन्न हुआ है, उसके निराकरण करने का संकेत है। वे धीरे-धीरे शान्ति से बोले- ''लगता है कि मेरी बातों से आप सभी कुछ अन्यथा समझ गयी हैं। मेरा यह आशय कदापि नहीं है कि मैं गुरुदेव के स्थिरवास की विनति के विरुद्ध हूँ।''

''मैं अविरुद्ध हूँ- मात्र इतना ही नहीं''- सिद्धिदेवी ने बात पक्की करने के लिये कहा- ''मैं सहमत हूँ- यह कहिये और इसके लिये योग्य उद्यम करने हेतु जुट जाइये।''

''हाँ! मुझे स्वीकार है।''

यह बात सुनकर सभी प्रसन्न होती हुई अपने-अपने घरों की ओर रवाना हो गयीं।

नगर में कई स्थानों पर ऐसी बातें चल रही थीं।

(क्रमशः)

प्रेरक-प्रसंग

खमत-खामणा

प्रो. पारसमल संकलेचा

संवत्सरी महापर्व का स्वागत है। हम पर्व तो मनाते हैं, किन्तु लक्ष्य की ओर हमारे कदम बढ़ेंगे तो ही परिणाम शुभ होंगे।

कार्य करने से पहले कार्य का उद्देश्य, स्वरूप एवं अर्थ समझना आवश्यक है। एक बार दोपहर के समय एक युवक अपने मित्र के घर पहुँचा और उससे कहने लगा- ''भैया! शाम 6 बजे हमें महेश के घर बर्थ-डे पार्टी में जाना है।'' किन्तु वह देखता है कि दोस्त के मौजों (सॉक्स) से तो भयंकर बदबू आ रही है। ये मौजे पहनकर यह पार्टी में आता है तो पार्टी का मजा किरकिरा हो जाएगा। दुर्गंध के कारण कोई भोजन नहीं कर पाएगा। युवक अपने मित्र को मॉल में ले गया, उसे 300 रुपये के नये मौजे दिलवाये और कहा- ''भैया! पार्टी में नये मौजे पहनकर आना।'' पार्टी शुरु हुई, सभी आमंत्रित पहुँच गये। वह दोस्त भी पहुँच गया, पर उसके बदन से भयंकर बदबू आ रही थी। युवक गुस्सा होकर अपने दोस्त से कहने लगा- ''मैंने तुम्हें नये मौजे पहनकर आने को कहा था ना?'' दोस्त ने कहा- ''नये ही तो पहनकर आया हूँ।'' युवक ने पूछा- ''पुराने मौजे कहाँ हैं?'' दोस्त- ''पुराने भी जेब में रखकर लाया हूँ ना!'' दोस्त ने नये मौजे का उद्देश्य नहीं समझा। यही हाल हमारा है।

संवत्सरी-प्रतिक्रमण में हम 84 लाख जीवयोनि से क्षमा-याचना करते हैं, किन्तु भीतर की मलिनता को साथ लिए रहते हैं, तो शुद्धि कैसे होगी? खमत-खामणा के दिन क्षमा-याचना करते समय हम बड़ा विनयभाव दिखाते हैं, वाणी में मिश्री सी मधुरता होती है, पर भीतर कषायों की भट्टी जल रही है, तो यह कैसी क्षमायाचना?

जिनके साथ स्नेह संबंध है, जिसके प्रति हमने कभी सपने में भी बुरा नहीं सोचा, उनसे चार-चार बार खमत-खामणा करते हैं और चार साल से मेरा भाई मुझसे नाराज़ है, उसकी क्षमा-याचना का विचार सपने में भी नहीं आता। कहाँ जा रहे हैं हम लोग! एक बार स्नेही से, रिश्तेदार से खमत-खामणा नहीं किया तो चलेगा, पर जिसके साथ हमारी अनबन है, वैर है, उसके चरणों में गिर जाओ, उससे क्षमा की याचना करो, पर प्रायः ऐसा होता नहीं है। झूठी प्रतिष्ठा, मान-अहंकार हमें यह करने से रोकता है।

बाहुबली जी की मिसाल हमारे समक्ष है। सोचा, 'ऋषभदेव भगवान को वंदन करने गया तो मेरे 98 भाइयों को भी वंदना करनी पड़ेगी, वे तो उम्र में छोटे हैं उन्हें कैसे वंदन करूँ?' अतः कठिन साधना करने पर भी केवलज्ञान नहीं हुआ। ब्राह्मी-सुंदरीजी के

समझाने पर अहंकार के हाथी से नीचे उतरे, चिंतन किया, अध्यवसाय शुभ हुए, आलोचना की, भाव-प्रतिक्रमण किया। प्रत्यक्ष वंदना करने नहीं गये, स्थान से ही भगवान को एवं अपने भाइयों को वंदन किया, क्षमा-याचना की और केवलज्ञान प्राप्त हो गया। इसे कहते हैं प्रतिक्रमण, यह है क्षमा-याचना।

क्षमा-याचना में छोटा-बड़ा, अमीर-गरीब, मालिक-नौकर किसी भी प्रकार का भेद नहीं होता।

-शिरपुर (महा.)

संवत्सरी

श्री पुखराज मोहनोत

संवत्सरी आई है, संदेशा यह लाई है।
हिलमिल आओ रे, महापर्व यह मनाओ रे।।
सभी से खमाओ रे।।
संवत्सरी 'दिवाली' है, बही खाता खाली है।
आंकड़ा मिलाओ रे, कर्जा चुकाओ रे।।1।।
संवत्सरी 'होली' है, धर्म की रंगोली है।
कर्म खपाओ रे, तप में जलाओ रे।।2।।
संवत्सरी है 'दशहरा', करने हैं दुर्गुण स्वाहा।
रावण जलाओ रे, राम ने जगाओ रे।।3।।
संवत्सरी 'राखड़ी', रत्नत्रय से यह जड़ी।
बांधो और बंधाओ रे, आत्मा बचाओ रे।।4।।
किसी को सताया हो, दिल जो दुःखाया हो।
उनके यहाँ जाओ रे, गले से लगाओ रे।।5।।
किसी ने कटु कहा, शूल मन में रहा।
उसे भूल जाओ रे, प्रेम सरसाओ रे।।6।।
हाथ जोड़, मान मोड़, मांगो माफी दौड़-दौड़।
नम-नम जाओ रे, आनन्द पाओ रे।।7।।
श्रेष्ठतम पर्व यह, मन! प्राण!! सर्व यह।
अंतर में बसाओ रे, मोक्ष गति पाओ रे।।8।।
मन शुद्ध राखजो, हितमित भाखजो।
फिर न फिराओ रे, चौरासी में न आओ रे।।9।।

-10/567, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड, जोधपुर-342008 (राज.)

कविता

खमत-खामणा को हृदय में धार लीजिए

श्री देवेन्द्रनाथ मोदी

अभिमान के दंश को
जीवन में लगी ठेस को
अपमान के घूंट को
अमृत मान पी लीजिए।
स्वार्थ के लिए अब तक खूब जी लिए हम
मानवता के लिए अब मर मिटें हम।
सुखमय जीवन की
चिन्ताओं में जीए अब तक
चिन्ताओं को अब
दफ़न कर दीजिए।
ठोकर लगेगी पाँव में
काँटे भी चुभेंगे
लेकिन मंजिल मिलेगी जरूर हमें
अपनी बनाई नेक राह पर चलते रहिए।
कहीं क्रोध, कहीं लोभ,
कहीं घृणा का तांडव देख
खमत-खामणा को तब
हृदय में धार लीजिए।
माचिस निकाल कर
लगा दी आग जहाँ चाहे
उन लपटों को स्नेह-वर्षा की
धार से बुझा अब दीजिए।
सूरज की धूप में
झुलस रहे पथिक के प्राण को
बादलों की शीतल छाँह
मिलती रहे ऐसा नेक काम कीजिए।

मन चाहों को सहारा
दे दिया तो क्या हुआ
अनचाहों को सम्हाल
मुस्कुराहट उन्हें दे दीजिए।

-"हुक्म", 5-ए/1, सुभाष नगर, पाल रोड़, जोधपुर-342008 (राज.)

मोक्ष की यात्रा

श्रीमती वन्दना भण्डारी

ट्रेन का नाम	-	संयम एक्सप्रेस
ट्रेन की टिकिट	-	समकित
ट्रेन का ड्राइवर	-	अरिहंत भगवान/ निर्ग्रंथ गुरु
ट्रेन का गार्ड	-	निर्ग्रंथ गुरु
प्रस्थान का स्टेशन	-	अढ़ाई द्वीप क्षेत्र
पहुँचने का स्टेशन	-	सिद्ध क्षेत्र
स्टेशन का नाप	-	45 लाख योजन
मुख्य जंक्शन	-	मनुष्य भव
प्लेटफार्म नम्बर	-	15 कर्मभूमि
साथ क्या ले जाओगे?	-	केवलज्ञान, केवलदर्शन
कब शुरु होती है?	-	तीसरे-चौथे आरे में
टूर कहाँ तक की?	-	लोकाग्र तक
टाइम पास	-	स्वाध्याय
सहयात्री	-	अष्ट प्रवचन माता
सीट नम्बर	-	गुणस्थान 6 से 14 (11 वां वर्ज्य)
तैयारी किसकी?	-	रत्नत्रयी आराधना
सावधानी?	-	कर्मबन्ध से बचने की
रास्ते में रुकना	-	नॉन स्टॉप
पहुँचने का समय	-	1 समय
वहाँ कितने रुकोगे?	-	हमेशा, अनंतकाल

तो फिर आइये सभी संयम एक्सप्रेस में सवार होकर मोक्षपुरी की यात्रा करने चलते हैं।

-दुबई

प्रासंगिक

भारतीय कानून में जैन अल्पसंख्यकता के मायने

श्री अरिहन्त चौपड़ा

भारत सरकार ने 27 जनवरी, 2014 को एक ऐतिहासिक फैसला लेते हुए जैन समाज को राजपत्र में अल्पसंख्यक घोषित कर दिया है। कानूनन तौर पर जैन समुदाय को कौन-कौन से लाभ एवं अधिकार प्राप्त हुए हैं? इस सम्बन्ध में जानकारी निम्नानुसार है-

केन्द्र सरकार द्वारा जैन समुदाय को अल्पसंख्यक घोषित किये जाने के बाद हमें अपने धर्म के अस्तित्व एवं धर्मस्थलों को सम्मानपूर्वक एवं श्रद्धापूर्वक बनाए रखने की संवैधानिक सुरक्षा प्राप्त होगी।

संविधान में अल्पसंख्यकों को अनुच्छेद 29 और 30 में विशेष अधिकार दिए गए हैं-

1. अनुच्छेद 29 (1) के अन्तर्गत अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा, लिपि एवं संस्कृति को संरक्षित करने का पूरा अधिकार है। यह प्रावधान जनप्रतिनिधित्व कानून 1951 के तहत है।
2. अनुच्छेद 30 (1) के अन्तर्गत सभी अल्पसंख्यकों को धर्म या भाषा के आधार पर अपनी इच्छानुसार शैक्षिक संस्था स्थापित करने का अधिकार है।
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में समानता और सामाजिक न्याय के हित में शैक्षणिक रूप से पिछड़े अल्पसंख्यकों की शिक्षा पर विशेष गहन क्षेत्रीय कार्यक्रम चलाने एवं आधुनिकीकरण की बात कही गई है।
4. राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षिक संस्था आयोग का गठन 2004 में किया गया, जिसके तहत अल्पसंख्यक संस्थाएँ अनुसूचित (लिस्टेड) विश्वविद्यालय से स्वयं को संबद्ध कर सकती हैं। वर्तमान में दिल्ली विश्वविद्यालय, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, असम विश्वविद्यालय, नागालैंड विश्वविद्यालय और मिजोरम विश्वविद्यालय इस सूची में सम्मिलित हैं।
5. शिक्षा के क्षेत्र में जैन धर्म की नैतिक शिक्षा का अध्ययन कराने का जैन शैक्षणिक संस्थाओं को अधिकार होगा। जैन कॉलेजों में जैन छात्र-छात्राओं के लिए 50 प्रतिशत सीटें आरक्षित होगी। कम ब्याज पर शैक्षिक ऋण व्यवसायिक व तकनीकी शिक्षा हेतु उपलब्ध होगा
6. प्रतिभावान अल्पसंख्यक विद्यार्थी जिले के उत्कृष्ट विद्यालयों में प्रवेश पाते हैं तो

गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले विद्यार्थियों के लिए 9 वीं, 12 वीं का शिक्षण शुल्क व अन्य शुल्क पूर्णतः माफ कर दिया जायेगा।

7. शैक्षणिक एवं अन्य संस्थाओं को स्थापित करने और उनके संचालन में सरकारी हस्तक्षेप कम हो जायेगा।
8. विश्वविद्यालयों द्वारा संचालित कोचिंग संस्थानों में अल्पसंख्यक समुदाय के विद्यार्थियों को निःशुल्क शिक्षा दी जाएगी।
9. सरकार द्वारा अल्पसंख्यक समुदाय को स्कूल, कॉलेज, छात्रावास, शोध या प्रशिक्षण संस्थान खोलने हेतु सभी सुविधायें एवं रियायती दर पर जमीन उपलब्ध करवायी जायेगी एवं अन्य कानूनी कार्यवाहियों में शिथिलता बरती जाएगी।
10. जैन समुदाय के विद्यार्थियों को प्रशासनिक सेवाओं और व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के प्रशिक्षण पर अनुदान मिलेगा। स्कूल एवं कॉलेज स्तर की सभी कक्षाओं के जैन विद्यार्थियों को जिनके परिवार की आय 2.5 लाख रुपये से अधिक नहीं है तथा पूर्व की कक्षा में 50 प्रतिशत से कम प्राप्तांक नहीं हैं तो प्रोत्साहन छात्रवृत्ति दी जाएगी।
11. जैन विद्यार्थियों के प्रशासनिक सेवाओं की प्रारम्भिक, मुख्य या अन्तिम परीक्षा में चयन होने पर सभी स्तरों के लिए छात्रवृत्ति के रूप में 'अनुप्रति योजना' के अन्तर्गत सभी राज्य सरकारों द्वारा अनुदान राशि दी जाएगी।
12. जैन समुदाय द्वारा संचालित जिन संस्थाओं पर कानून की आड़ में बहुसंख्यकों ने कब्जा जमा रखा है, उनसे मुक्ति मिलेगी। जैन धर्मावलम्बी को बहुसंख्यक समुदाय द्वारा प्रताड़ित किए जाने पर सरकार द्वारा जैन धर्मावलम्बी का संरक्षण किया जाएगा।
13. जैन धर्मावलम्बी द्वारा पुण्यार्थ, प्राणिसेवार्थ, शिक्षा आदि के लिए प्रदत्त दान आयकर अधिनियम के अन्तर्गत कर-मुक्त होगा।
14. उपासना स्थल (विशेष उपबंध) अधिनियम, 1919 (42 ऑफ 18.9.1991) के अन्तर्गत जैन धर्म के उपासना स्थलों की सुरक्षा की जाएगी तथा निर्देशों का उल्लंघन करने पर धारा 6(3) के अधीन वह दंडनीय अपराध होगा।
15. अब जैन पुरातन स्थलों एवं पुरातन धरोहरों को सुरक्षित रखना सन् 1958 के अधिनियम की धारा 19 एवं 20 के तहत संविधान के प्रावधान अनुसार सुरक्षित है।
16. जैन धर्मावलम्बियों के धार्मिक स्थलों, संस्थाओं, मन्दिरों, तीर्थ क्षेत्रों एवं ट्रस्टों का सरकारीकरण या अधिग्रहण आदि नहीं किया जा सकेगा अपितु धार्मिक स्थलों का समुचित विकास एवं सुरक्षा के व्यापक प्रबन्ध शासन द्वारा किए जाएंगे।

17. जैन समुदाय द्वारा संचालित ट्रस्टों की सम्पत्ति को "किराया नियन्त्रण अधिनियम" से भी मुक्त रखा जायेगा, जिससे किरायेदार से सम्पत्ति को आसानी से खाली करवाया जा सकता है।
18. अल्पसंख्यक युवा वर्ग को खेलकूद व अन्य सांस्कृतिक गतिविधियों में प्रोत्साहन हेतु अनुदान एवं छात्रवृत्तियों में विशेष प्रावधानों का लाभ मिल सकेगा, ताकि गरीबी रेखा से नीचे आने वाले या आर्थिक स्थिति से कमजोर वर्ग का शैक्षणिक, सामाजिक एवं आर्थिक विकास हो सके।
19. अल्पसंख्यक समुदाय के लिए कराए गए आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक स्थिति के सर्वेक्षण के आधार पर रोजगार मूलक योजनाओं का लाभ मिलेगा।

राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग से शिकायत–

आयोग को कानूनन सिविल अदालत की निम्नांकित शक्तियाँ प्राप्त हैं–

1. किसी भी व्यक्ति द्वारा अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए आयोग से शिकायत की जा सकती है।
2. शिकायत अध्यक्ष या सचिव के नाम से संबोधित होनी चाहिए।
3. शिकायत दर्ज करवाने का कोई शुल्क देय नहीं है।
4. शिकायत लिखित में होनी चाहिए जो व्यक्तिशः या डाक द्वारा प्रेषित की जा सकती है।
5. राजस्थान में टोल फ्री नम्बर 18001806127 पर भी राज्य अल्पसंख्यक आयोग से अल्पसंख्यकों के अधिकारों की क्षति होने पर शिकायत की जा सकती है।
6. अल्पसंख्यक अधिकारों के संरक्षण के लिए आयोग के समक्ष अल्पसंख्यक स्वयं अपनी पैरवी कर सकता है।

–5 डी-11, न्यू हाउसिंग बोर्ड, पाली-306401 (राज.)

वाक्यामृत

श्री नितेश नागोता जैन

1. धर्म और संस्कार ही जीवन की असली पूंजी हैं।
2. अच्छे संस्कार ही मनुष्य के भावी जीवन की आधारशिला हैं।
3. जो जैसा करेगा वो वैसा ही पायेगा।
4. अपनी गरीबी एवं कठिनाई के दिन कभी मत भूलिये।
5. हमारे विचार ही हमें शत्रु और मित्र बनाते हैं।

कविता

जीवन-बोध क्षणिकाएँ

श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.

गुरु-शिष्य

क्या गुरु को शिष्य चाहिए?
नहीं, शिष्य को गुरु चाहिए।
क्या 'गुरु' शिष्य बनाता है?
नहीं, शिष्य ही गुरु को स्वीकारता है।
गुरु तो भव-सिन्धु को पार
करती हुई नाव है,
जो भी रख देता सश्रद्धा उसमें पाँव है
उसको पहुँचा देती मुक्ति पड़ाव है।
गुरु तो तारक है अधम के उद्धारक हैं
बनना मुझे ही लायक है।

भिन्न-अभिन्न भाव

आत्म-विकास हेतु दोनों भाव
चाहिए- भिन्न और अभिन्न भाव।
देह और देही में कर्म और आत्मा में
भिन्न-भाव हो, तथा प्राणि-मात्र में
अभिन्न भाव हो, आत्मीय भाव हो,
यह सत्य तथ्य है कि जब भिन्न भाव
आ जाएगा तो अभिन्न भाव-सहज ही
आ जाएगा, स्वतः ही प्रकट हो
जाएगा, और इसी विधि से जीव
शाश्वत निधि को पाएगा।

मतकर रोष

मत देख किसी के दोष,
दिख भी जाय तो मत कर रोष।

यहाँ से

जो यहाँ से शुरु करेगा
वह वहाँ अवश्य पहुँचेगा, अन्यथा
पता नहीं कहाँ-कहाँ भटकेगा।
(यहाँ से- सम्यग्दर्शन से, वहाँ- सिद्धि में,
कहाँ- चार गति)

चतुराई

चेत जा चेतन इसी में है चतुराई,
वरना तैयार खड़ी है चतुर्गति की खाई।

अन्दर

जो जायेगा अन्दर,
वो पार करेगा संसार समन्दर।

बुराई न करें

अगर चाहता है अपने
जीवन में करना सद्गुणों की चुनाई,
तो पहले छोड़ दे करना
दूसरों की बुराई।

अध्यात्म

मत सुनो, मत करो
किसी की निन्दा,
वरना नहीं रहेगा
तुम्हारा अध्यात्म जिन्दा।

शूर

जो नहीं सोचता किसी का बुरा
वही है सच्चा शूरा।

-संकलित

प्रवचनांश

जीवनोपयोगी बोल, हैं बड़े अनमोल

श्रद्धेय श्री लोकचन्द्र मुनिजी म.सा.

1. आत्मलक्षी हो साधना हमारी, सिद्धलक्षी हो व्रताराधन।
2. संसार के प्रत्येक कार्य में भय रहा हुआ है, वैराग्यदशा में अभय रहता है।
3. 'स्वानुभूति' होने पर ही सच्ची 'सहानुभूति' होती है।
4. ग्रन्थियों से अतीत होने पर ही, अभयभाव की प्रतीति होती है।
5. बुद्धि की सीमा के आगे श्रद्धा की सीमा प्रारम्भ होती है।
6. अनुभूति के दो उपाय- बाह्य प्रवृत्ति से विरक्ति, अन्तर प्रवृत्ति से अनुरक्ति।
7. जो हमारा है ही नहीं उसे क्या छोड़ना? वह तो छूटा हुआ ही है।
8. कहना जितना सरल है, करना उससे भी सरल हो जाय इसका नाम है- 'साधना'।
9. न भगवान बड़ा होता है, न भक्त। बड़ी तो भक्ति होती है।
10. छूटने वाली चीजों को छूटने से पहले छोड़ दें, यह सम्यक्त्व का लक्षण है।
11. मेरापन का भाव पर के साथ जुड़ा है, इसीलिए वह परभाव है।
12. वचन-सिद्धि के पूर्व वचन-शुद्धि आवश्यक है। अनावश्यक नहीं बोलना मौन है, अनावश्यक नहीं सोचना ध्यान है और अनावश्यक नहीं करना संयम है।
13. सेवा और त्याग के लिए सभी अपने हैं, अपने लिए अपना कोई नहीं।
14. अपना किसी को बनाना नहीं, पराया किसी को मानना नहीं।
15. हर घटना में प्रतिबोध निहित है।
16. अनहोनी-अनदेखी घटना पर ज्यादा विचार न करें। जो होने वाला है उसे होने दें।
17. सत्य वह है जो नित्य है, शाश्वत है, ध्रुव है। नश्वर के साथ सम्बन्ध जोड़ना सत्य नहीं है।
18. हम कभी भी संसार की परिस्थिति से आकुल-व्याकुल न हों।
19. आत्मा का सतत संरक्षण करें, आत्मभावों का प्रतिक्षण परीक्षण करें।
20. सब कुछ छोड़ने के बाद भी छोड़ने का अहंकार शेष रह जाता है।
21. कोई दिल में उतर जाता है, कोई दिल से उतर जाता है।
22. वैर का सम्बन्ध मिथ्यात्व से होता है और मैत्री का सम्बन्ध सम्यक्त्व से।
23. देख के चलो और चल के देखो।

-संकलनकर्त्ता- नौरतनमल मेहता, सह-सम्पादक जिनवाणी मासिक पत्रिका

कविता

अमन चैन का नाम नहीं है

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

विषमताओं से भरी ज़िंदगी, अमन चैन का नाम नहीं है,
अपनी चारदीवारी में भी, मानव को आराम नहीं है।
कोई ताना देता उसको, कोई उपेक्षा करता है,
मुखिया की कोई बात सुने ना, मुँह फेर सब लेते हैं।।1।।

महा विडम्बना है जीवन की, बदल गया इंसान है,
आत्मकेन्द्रित बना आदमी, नहीं प्रेम का नाम है।
स्नेह, समर्पण और सेवा की, बातें हुई पुरानी हैं,
मर्यादाओं की उड़ी धज्जियाँ, घर-घर यही कहानी है।।2।।

रोको, रोको इस आंधी को, वरना गज़ब हो जाएगा,
गौरव गाथाएँ मिट जाएंगी, कोई बचा नहीं पाएगा।
हाहाकार होगा जीवन में, साधन काटने दौड़ेंगे,
सब कुछ लुट जाएगा अपना, अपने सिर को फोड़ेंगे।।3।।

नैतिकता के उन मूल्यों को, याद करो जो पहले थे,
मिलजुल कर के सब लोगों ने, अपने संकट झेले थे।
संयुक्त परिवारों में रहकर के, प्रेम के गीत गुंजाते थे,
साधन भले ही थोड़े थे, पर आनन्द खूब उठाते थे।।4।।

आज साधनों की बहुतायत, मगर तनाव में जीते हैं,
नफ़रत दिन-दिन बढ़ रही है, घट प्रेम के रीते हैं।
वैभवमय यहाँ बनी ज़िंदगी, मगर अंतर में ज्वाला है,
किसको कितना दर्द यहाँ पर, नहीं पूछने वाला है।।5।।

महावीर के बेटों तुमने, क्यों मारी पैर कुल्हाड़ी है,
इतना ऊँचा धर्म मिला है, मति गई क्यों मारी है।
महावीर के उपदेशों की, क्यों मज़ाक उड़ाते हो,
भूल गये उनकी राहों को, तभी कष्ट तुम पाते हो।।6।।

अब भी जागो मेरे साथी, वक्त की यही पुकार है,
जैनत्व को तुम अपनाओ, इसमें जीवन का सार है।
प्रभु वीर ने तो हमको, जीने की कला बताई है,
प्रेम, प्यार से रहने में ही, अपनी पूर्ण भलाई है।।7।।

-जनता साड़ी सेण्टर, स्टेशन रोड़, दुर्ग-491001 (छत्तीसगढ़)

अनुभव

गूंगे का गुड़

श्रीमती मधु चौरडिया

अपूर्व, अद्भुत, अद्वितीय, अनमोल, अविस्मरणीय, आनन्ददायक रहा जयपुर में जून माह में आयोजित वीतराग ध्यान साधना शिविर।

गूंगे को गुड़ खिलाकर कोई पूछे कि स्वाद कैसा है? तो गूंगा क्या कहेगा? परन्तु ये गूंगा भी कम नहीं, बोलना नहीं जानता तो भी ऊं ऊं करके शोर मचा-मचा कर बता रहा है कि यह वस्तु मीठी, स्वादिष्ट एवं गुणकारी है। वैसे तो मैंने अपने अब तक के जीवन में लगभग 50 शिविर कर लिये होंगे। गेम्स, स्काउट-गाईड, एन.सी.सी. के शिविर, कई धार्मिक शिविर, ग्रीष्मकालीन, सायंकालीन, संस्कार एवं ध्यान शिविर कर चुकी हूँ। पर जीवन में पहली बार अनुभव में आया है कि कुछ मिला है। जो यहाँ मिला वह सबसे अलग मिला। यहीं नहीं अपने हाथ से सजाई बगिया में भी वह सूकून नहीं मिल पाया जो यहाँ मिला। बगिया और शिविर में जो कुछ अन्तर मिला वह मैं अभिव्यक्त कर रही हूँ-

शिविर में	परिवार की बगिया में
1. असीम शान्ति	1. अशान्ति
2. चार बजे ब्रह्म बेला में जागरण	2. चार बजे शयन (अनिद्रा रोग)
3. दस दिन तक पूर्ण मौन	3. दस मिनिट भी चुप नहीं रह पाती।
4. लगभग 14-15 सामायिक भी मजे में	4. एक सामायिक भी भागते-दौड़ते।
5. कोई झंझट-झमेला नहीं	5. सारे झमेले (T.V.,Telephone, Mobile) कभी दूध वाला, अनेक प्रकार की घन्टी
6. सारा दिन सार्थक	6. सारा दिन बेकार के कामों की उलझन
7. निरोगी काया	7. केवल रोग, भोग
8. बिना ए.सी. एवं कूलर के भी ठण्डक	8. ए.सी., कूलर में भी भयंकर गर्मी का अहसास।

-धर्मपत्नी श्री विरेन्द्र जी चौरडिया,
प्लॉट नं. 502, महावीर नगर, राम मंदिर के पास, टोंक रोड़, जयपुर (राज.)

बाल-स्तम्भ

दगा किसी का सगा नहीं

डॉ. दिलीप धींग

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित इस रचना को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 20 वर्ष की आयु तक के पाठक 15 सितम्बर 2014 तक जिनवाणी संपादकीय कार्यालय, सामायिक-स्वाध्याय भवन, कुम्हार छात्रावास के सामने, प्लॉट नं. 2, नेहरु पार्क, जोधपुर-342003(राज.) के पते पर प्रेषित करें। **उत्तर के साथ अपनी आयु तथा पूर्ण पते का भी उल्लेख करें।** श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरुणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-500 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-300 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 200 रुपये तथा 150 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार।

धर्म-साधना से क्या होगा ?
सरल भाव तो जगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।

मन का काँटा कहलाता यह,
छल-कपट और मायाचार।
इस काँटे को तुरत निकालो,
हल्का होगा मन का भार।
उसका मन सुमन है जिसने,
कभी किसी को ठगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।1।।

कुछ कहते, हम सच्चे-अच्छे,
उच्च क्रिया के पालनहार।
लेकिन माया से हो जाते,
सारे धरम-करम बेकार।

छल-कपट से भरे हृदय में,
फूल सत्य का उगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।2।।

कथनी-करनी में अन्तर है,
छल के साथ पनपता झूठ।
मैत्रीभाव तिरोहित होता,
और भरोसा जाता टूट।
तो फिर कैसे मिले सफलता,
भाव प्रेम का जगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।3।।

ना चलता है, ना सुख देता,
धोखे का कोई व्यापार।
इसकी टोपी, उसके सिर पर -
रखते, करते बण्टाढार।

राम बचाएँ इन छलियों से,
इनका कोई सगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।4।।

मायावी मानी भी होता,
और कभी लोभी-गुस्सैल।
नाटक करता और दिखाता,
माया के मायावी खेल।
छलमय जीवन ज्ञान-ध्यान के -
दीपों से जगमगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।5।।

कुटिल-जटिल जो होते करते,
विविध भाँति दुराव-छिपाव।
उनके मन के बाँकेपन से,
पैदा होते कष्ट-तनाव।
उन कष्टों को वो क्या जाने,
जिसको धोखा लगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।6।।

दान-पुण्य का फल कम होता,
भक्ति होती नामंजूर।
मायाचारी के जीवन से,
अपने भी हो जाते दूर।
प्रभु-साम्राज्य मिलेगा उनको,
जिनके दिल में दगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।7।।

जंगल में चालाक लोमड़ी,
चालाकी से दुःख पाती है।
सौ-सौ चूहे खाकर बिल्ली,
तीरथ करने को जाती है।
चालाकी करने वालों का,
सोया किस्मत जगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।8।।

देखो, छोटे-छोटे बच्चे,
कितने प्यारे कितने अच्छे।
सबके मन को हर्षित करते,
क्योंकि मन के होते सच्चे।
सीधे-सच्चे सरल चित्त में,
पेड़ पाप का उगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।9।।

जहाँ सरलता, वहाँ धर्म है।
अरे! सरलता स्वयं धर्म है।
सद्गुण-अर्जन का साधन यह,
आत्म-शुद्धि का मूल मर्म है।
जोड़-तोड़ करने वालों का,
चित्त धर्म में लगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।10।।

जो निश्छल है, वो प्रांजल है,
कलकल बहता नदिया नीर।
प्राची में अरुणोदय जैसे,
उनके मन प्रकटे महावीर।

जागो! वक्त की चिड़िया ने भी,
खेत अभी तक चुगा नहीं है।
जीवन में सच्चाई रक्खो,
दगा किसी का सगा नहीं है।।11।।

-निदेशक : अंतरराष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन व शोध केन्द्र,
18, रामानुजा अय्यर स्ट्रीट, साहुकारपेट, चेन्नई-600001

प्रश्न:-

1. धर्म साधना से कैसे भाव जगते हैं?
2. सत्य का फूल कैसे हृदय में उगता है?
3. चित्त धर्म में क्यों नहीं लगता है?
4. "दगा किसी का सगा नहीं" - का अभिप्राय बताइये।
5. "जागो! वक्त की चिड़िया ने भी खेत अभी तक चुगा नहीं है" - का भावार्थ बताइये।
6. दगा के दो पर्यायवाची शब्द लिखिए, जो कविता में आए हों।

बाल-स्तम्भ [जून-2014] का परिणाम

जिनवाणी के जून-2014 के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत **'चोटी की कीमत'** कहानी के प्रश्नों के उत्तर 22 बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए। पूर्णांक 30 हैं।

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-500/-	अमीषा कोठारी-अजमेर(राज.)	21.5
द्वितीय पुरस्कार-300/-	शुभांकित पंकज लोढ़ा-नालासोपारा,थाना(महा.)	21
तृतीय पुरस्कार- 200/-	शुभम् जैन-रामगंजमण्डी, कोटा (राज.)	20.5
सान्त्वना पुरस्कार- 150/-	गुंजन चौपड़ा-जोधपुर (राज.)	20
	शिवांशु छाजेड़-जोधपुर (राज.)	20
	अर्पित जैन-जोधपुर (राज.)	19
	भूमि सिंघवी-जोधपुर (राज.)	19
	आयुषी आहूजा-जयपुर (राज.)	19

क्रोधनिग्रह

मेरे सामने दर्जी-समाज का एक आदमी आया और कहने लगा कि मुझे गुस्सा बहुत चढ़ता है, मैं क्या करूँ? मैंने कहा- "जब गुस्सा चढ़े तब उस स्थान से थोड़ी देर के लिये अलग हट जाओ। इसके बाद भी गुस्सा शान्त नहीं होता है तो 10 मिनट तक किसी से मत बोलो। इससे भी शान्त नहीं होता है तो गुस्सा आने पर प्रायश्चित्त में नमक, मिर्ची खाना छोड़ दो। इसको वश में करने के लिये कड़ा अनुशासन रखना चाहिये।"

-आचार्य श्री हस्ती

150 वीं जन्म-जयन्ती पर विशेष

समर्पित सांस्कृतिक दूत श्री वीरचंद राघवजी गांधी

डॉ. दिलीप धींग

जैन धर्म और समाज में हर कालखण्ड में अनेक सन्त, विचारक, विद्वान्, साहित्यकार, पत्रकार, कलाकार, शिक्षाविद्, वैज्ञानिक, वीर, दानवीर, शासक, प्रशासक, अर्थशास्त्री, उद्योगपति आदि विविध क्षेत्रों से जुड़े विशिष्टजन हुए हैं। इन विशिष्टजनों ने समाज, देश और दुनिया को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया। ऐसे ही प्रभावित करने वाले महानुभावों में जैन धर्म-दर्शन के विद्वान् श्री वीरचन्द राघवजी गांधी का भी नाम आता है।

25 अगस्त, 1864 में गुजरात के भावनगर जिले के महुवा में जन्मे श्री वीरचन्द बचपन से ही मेधावी थे। वीरचन्द ने कानून की शिक्षा अर्जित करने के साथ ही जैन दर्शन और अन्य भारतीय दर्शनों का अध्ययन किया। उन्होंने 14 भाषाएँ सीखीं। सितम्बर-1893 में शिकागो में विश्व धर्म संसद में दुनिया के विभिन्न धर्मों और देशों के लगभग 3000 प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। उसी धर्म संसद में स्वामी विवेकानन्द अपने बहुत ही प्रभावशाली व्याख्यान से इतिहास में अमर हो गये। उस विश्व धर्म संसद में जैन धर्म के प्रतिनिधि थे 29 वर्षीय युवा विद्वान् वीरचन्द राघवजी गांधी। आचार्य विजयानन्दसूरिजी (आत्मारामजी महाराज) ने वीरचन्द को इस धर्म संसद में अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजा था। धर्म संसद में विवेकानन्द के साथी वीरचन्द का व्याख्यान भी बहुत प्रभावशाली रहा। उनकी तारीफ सिर्फ उनकी वक्तृत्व-कला के कारण ही नहीं, अपितु उनकी विद्वत्ता तथा सिद्धान्तों की निष्पक्ष व प्रभावी प्रस्तुति के कारण भी हुई।

वे कुछ वर्षों तक अमेरिका में रहे और जैन धर्म, भारत और भारतीय संस्कृति पर अनेक व्याख्यान दिये। जैन धर्म, दर्शन, इतिहास तथा भारतीय संस्कृति के बारे में व्याप्त अनेक भ्रान्तियों का उन्होंने निराकरण किया। एक अमेरिकी सज्जन ने आश्चर्य करते हुए लिखा कि एक उपदेशक या मुनि नहीं होते हुए भी वीरचन्द की प्रस्तुति बेहद प्रभावशाली है। अमेरिका में वीरचन्द ने प्राच्यविद्या और जैनविद्या को समर्पित दो संस्थाएँ स्थापित कीं। अमेरिका के अलावा यूरोपीय देशों में भी उन्होंने व्याख्यान दिये। कहते हैं कि उन्होंने कुल 535 व्याख्यान दिये। उन्हें स्वर्ण पदक, रजत पदक और अन्य अनेक सम्मान प्राप्त हुए। शिकागो में आज भी वीरचन्द की प्रतिमा लगी हुई है।

शिकागो में वीरचन्द ने भारतीय महिलाओं की शिक्षा के लिए जो संस्था बनाई, उसकी

सचिव श्रीमती होवार्ड बनी। इस संस्था के माध्यम से अनेक भारतीय महिलाओं को अमेरिका में उच्च शिक्षा के अवसर मिले। इससे वीरचन्द का शिक्षा और नारी शिक्षा के प्रति लगाव व्यक्त होता है।

वीरचन्द को मानवसेवा, जीवदया और संस्कृति की रक्षा में बहुत रुचि थी। जब 1896-97 में भारत में भयंकर अकाल पड़ा तो वीरचन्द ने लोगों से सहयोग प्राप्त करके अमेरिका से चालीस हजार रुपये और एक जहाज भरकर अनाज भिजवाया। जब उन्हें पता चला कि सम्मेद शिखर में सुअर मारने का कत्लखाना खोला गया है तो वीरचन्द ने लोगों के सहयोग से कत्लखाना बन्द करवाया। इस कत्लखाने को बन्द करवाने में उनके कानूनी ज्ञान का भी उपयोग हुआ।

गुजरात के मुख्यमंत्री रहते हुए नरेन्द्र मोदी (अब भारत के प्रधानमंत्री) ने वीरचन्द राघवजी के सम्बन्ध में बोलते हुए कहा था कि वीरचन्द राघवजी बड़े विद्वान् थे। उन्होंने कई वर्षों तक अमेरिका में रहकर भारतीय संस्कृति का प्रचार किया। इतिहास के ऐसे पन्नों के उजागर होने से प्रेरणा मिलती है। श्री मोदी ने इसे दुःखद संयोग बताया कि स्वामी विवेकानन्द का मात्र 39 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया तो वीरचन्द राघवजी का मात्र 37 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया।

देश के इस महान सपूत के सम्मान में 8 नवम्बर 2009 को भारत सरकार ने पाँच रुपये मूल्यवर्ग का बहुरंगी डाक टिकट जारी किया। समाज यदि जैनविद्या के विकास, विद्वत्-निर्माण और विद्वानों के मान-मूल्यांकन पर कारगर कार्य कर सके तो श्री वीरचन्द राघवजी की सार्द्ध शताब्दी (150वीं जयन्ती) मनाना वास्तविक रूप से सार्थक हो पायेगा।

-निदेशक : अंतरराष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन व शोध केन्द्र,
18, रामानुजा अय्यर स्ट्रीट, साहुकारपेट, चेन्नई-600001

सूचना

1. जिनवाणी मासिक पत्रिका के पाठकों को सूचित किया जाता है कि जिन आजीवन सदस्यों का देहावसान हो जाता है, उनके नाम की जिनवाणी पत्रिका की सदस्यता नियमानुसार समाप्त हो जाती है। अतः जिन परिवारों में आजीवन सदस्यों का स्वर्गवास हो जाने के पश्चात् भी जिनवाणी आ रही हो तो वे कार्यालय को सूचित करें तथा नयी सदस्यता ग्रहण कर अनुगृहीत करें।
2. जिनवाणी पत्रिका सभी सदस्यों को एक साथ माह की 10 तारीख को प्रेषित की जाती है, जिन्हें किसी माह की जिनवाणी प्राप्त न हो तो वे कार्यालय को सूचित करें।

-मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर (राज.), फोन: 0141-2575997

युवा-स्तम्भ

समाज के विकास हेतु सोचें निरन्तर

डॉ. एन. के. खीचा (सेवानिवृत्त आर.ए.एस)

जैन समाज में अभी विकास की अपार संभावनाएँ हैं, यहाँ पर कतिपय सुझाव प्रस्तुत हैं-

1. प्रतिवर्ष त्यागी-तपस्वीजनों के स्वागत के साथ ही मेधावी लेखकों, कवियों एवं समाज सेवियों का भी सम्मान किया जाय।
2. प्रतिवर्ष समाजसेवी, प्रशासनिक अधिकारियों, डॉक्टरों, इंजीनियर आदि का सम्मान समारोह जैन आराधना भवनों में आयोजित किया जाय, ताकि नई पीढ़ी इस ओर अग्रसर हो सके।
3. जहाँ-जहाँ स्वाध्याय केन्द्र नहीं है वहाँ-वहाँ स्वाध्याय केन्द्र के नाम पर न्यूनतम 1500 वर्गगज भूमि का आवंटन जिला कलेक्टर अथवा नगरपालिका/ग्राम पंचायत से कराया जाए।
4. हर जिले में छात्रों एवं छात्राओं के लिए अलग-अलग न्यूनतम एक छात्रावास हो, जिसके लिए भूमि का आवंटन जिला कलेक्टर से कराएँ। छात्रावास में ई-लायब्रेरी की सुविधा भी हो। छात्रावास अधीक्षक भी अच्छे पढ़े-लिखे एवं सकारात्मक सोच के होने चाहिए।
5. मेधावी बच्चों हेतु RAS/IAS/CA/CS/ICWA की प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी के लिए हर संभागीय मुख्यालय पर निःशुल्क कोचिंग केन्द्र खोले जायें। जैन समाज में प्रतिभाओं की कमी नहीं है, किन्तु उन्हें तलाशने एवं तराशने की आवश्यकता है।
6. हर उपासना-स्थल के साथ ही एक सन्दर्भ-कक्ष Knowledge Center के रूप में स्थापित करें, जहाँ कम्प्यूटर एवं इण्टरनेट सुविधा तथा पुस्तकालय एवं वाचनालय भी हों।
7. प्रति वर्ष चातुर्मास काल में बड़े स्थानों पर संगोष्ठी/सेमिनार मुनिराजों के सान्निध्य में आयोजित हों। संगोष्ठी का शीर्षक ज्वलंत समस्या पर हो, जिसमें विद्वानों को आमंत्रित किया जाय।
8. प्रति वर्ष चातुर्मास तथा होलीचातुर्मास के समय मुनिराजों के सान्निध्य में ध्यान शिविर (Meditation camp) का आयोजन किया जाय।
9. निर्धन बच्चों के लिए हर जिले में न्यूनतम एक बुक बैंक, दवा बैंक तथा ब्लड बैंक हों

तथा चातुर्मास काल में वितरण समारोह आयोजित किये जायें।

10. हर बड़े उपासना-स्थल की कार्यकारिणी में चार विद्वान्, प्रशासनिक एवं मेधावी अधिकारियों का पृथक् से मनोनयन किया जाय ताकि कार्यकारिणी का समुचित मार्गदर्शन कर वे Think Tank की भूमिका निभा सकें।

11. समाज में प्रतिवर्ष संभागीय मुख्यालय पर अथवा राज्य मुख्यालय पर राज्य भर के प्रतिनिधियों को बुलाकर जैन एकता स्थापित करने की दिशा में एक-दो दिवसीय शिविर आयोजित हों, जिसमें वर्ष भर में क्या-क्या नवीनतम कार्य प्रारम्भ किए गए हैं, का लेखा-जोखा प्रस्तुत हो।

12. हर वर्ष वर-वधू का परिचय सम्मेलन हो।

13. संभाग-स्तर पर सामूहिक विवाह को प्रोत्साहन दिया जाय। विवाह जैन पद्धति से आयोजित हों। व्यंजनों की संख्या सीमित हो तथा जहाँ तक हो सके विवाह का आयोजन दिन में हो।

14. बड़े उपासना-स्थल के साथ मानव मात्र के लिए चिकित्सा-केन्द्र भी स्थापित हों।

-544-ए, सिद्धार्थ नगर, जवाहर सर्किल के पीछे, जयपुर-302017 (राज.)

सुकरात की सहनशीलता

एक दिन जब महात्मा सुकरात अपने कुछ शिष्यों के साथ घर आए, तो उनकी पत्नी उन पर बरस पड़ी और उन्हें जली कटी सुनाने लगी। महात्मा सुकरात शांत बैठे सुनते रहे। इससे उनकी पत्नी मारे क्रोध के पागल हो उठी और उसने एक पात्र में कीचड़ भरकर सुकरात पर डाल दिया। महात्मा सुकरात के शिष्यों ने सोचा कि अब सुकरात अवश्य क्रोधित हो उठेंगे। लेकिन वे हंसकर बोले- "देवी, आज तो पुरानी कहावत झूठी हो गई। कहा जाता है कि गरजने वाले बरसते नहीं। आज देखा, जो गरजते हैं, वे बरसते भी हैं।" लेकिन उनके एक शिष्य को अपने गुरु का यह अपमान सहन न हुआ। वह क्रोध में चीखकर बोला- "यह स्त्री तो दुष्ट है, आपके योग्य नहीं।" महात्मा सुकरात बोले- "नहीं यह मेरे योग्य है। यह परीक्षा करती है कि सुकरात कच्चा है या पक्का? इसके बार- बार परीक्षण करने से मुझे पता लगता है कि मुझमें सहनशक्ति है या नहीं। मुझे तो इससे अद्भुत प्रेरणा मिलती रहती है।" मनुष्य जिस भी परिस्थिति में रहता है, वह परिस्थिति उसकी सहनशीलता की, उसके धैर्य की परीक्षा लेने के लिए होती है। आवश्यकता है कि जो भी परिस्थिति हो, उसके अनुसार स्वयं को ढाला जाए और जीवनयापन किया जाए। फिर दुःख में सुख की अनुभूति होगी।

-प्रेषक-जशकरण डागा, डागा सदन, संघपुरा, टोंक (राज.)

कविता

शरण मुझको दीजिए

श्री मगनचन्द जैन

हे मेरे गुरुदेव भगवन् शरण मुझको दीजिए।
कृपा-दृष्टि डालकर मेरा सुधार कीजिए।
मैं कुपथ पर चल रहा हूँ सुपथ मुझे दिखाइए।
मुझ पतित को दे सहारा कर पकड़ उठाइए।।

मैं कर रहा वन्दन-नमन अब प्रार्थना सुन लीजिए।
मुक्ति-पथ पर बढ़ सकूँ ऐसी कृपा अब कीजिए।
चित्त है चंचल मेरा प्रभुवर इसे सँवारिए।
धर्म-धारण कर सकूँ ऐसा विवेक जगाइए।।

कैसे चलूँ, पथ विकट है, अब आप ही दर्शाइए।
सन्मार्ग पर बढ़ता रहूँ साहस मेरा बढ़ाइए।
आत्मचिन्तन करता रहूँ वरदान ऐसा दीजिए।
दोष-दुर्गुण दूर हों सब उपाय वैसा बताइए।।

जिससे हृदय हो शुद्ध मेरा ऐसा मार्ग सुझाइए।
कर कृपा अब तो प्रभु सुप्त को जगाइए।
अन्तर-प्रकट हो ज्ञान ज्योति, शक्ति ऐसी दीजिए।
प्राप्त समकित कर सकूँ ऐसी विधि बताइए।।

मिथ्यात्व से मुख मोड़ लूँ सद्ज्ञान ऐसा दीजिए।
अन्तः-बाह्य तप कर सकूँ सद्बुद्धि वैसी बनाइए।
बन सकूँ पर का सहारा ऐसे भाव जगाइए।
डूबती नौका 'मगन' की भव से पार लगाइए।।

-सेवानिवृत्त अध्यापक, फाजिलाबाद, हिण्डौन सिटी, जिला-करौली (राज.)

नारी-स्तम्भ

कालचक्र ये चलता जाता है

श्रीमती नीलू डागा

अनादिकाल से चला आ रहा जो अनन्त काल तक चलता जाता है
ये कालचक्र है जो निरन्तर यूँ ही छलता जाता है
कभी सुख की झलक दिखाता, कभी दुःखों का कहर बरपाता है
जीवों के उत्थान-पतन में ये चक्र कभी न रुक पाता है....।

सुख-शान्ति से भरपूर समय, ये 'सुषम-सुषम' कहलाता है,
नहीं यहाँ परिश्रम की जरूरत, मनुष्य कल्पवृक्ष से सब पाता है,
स्वस्थ, सुन्दर मनुष्य के चहुँ ओर, सुख का वातावरण हर्षाता है,
छींक, जम्हाई से होती मृत्यु, फिर जीव देवगति को चला जाता है।।

'सुषम' नामक इस आरे में भी मनुज दुःख का अभाव ही पाता है,
दो दिन के अन्तर से जीव मात्र बेर प्रमाण ही खाता है,
सुषम-सुषम जैसा ये आरा, बस सुख थोड़ा कम हो जाता है,
सुखी-शांत-सरल मनुज को ये भी देवलोक ही ले जाता है।।

'सुषम के साथ जुड़कर दुषम', सुख-दुःख का अनुभव कराता है।
आदिनाथ के साथ ही इसमें धर्म का शंखनाद हो जाता है,
असि-मसि-कृषि के साथ मनुष्य को नया जीवन विज्ञान समझाता है,
युगलकाल का होता विच्छेद, नए परिवेश से परिचित कराता है।।

'दुषम-सुषम' की सुनो कहानी, सुख और भी कम हो जाता है,
तेईस तीर्थंकरों का जन्म समय ये, पावन प्रेरणा का पाठ सिखाता है
देव के साथ अब नरक, तिर्यंच, मनुष्य और सिद्धगति का भी द्वार खुल जाता है।
अनन्तकाल से भटकता मानव, कालचक्र में उलझता जाता है।।

'दुषम-सुषम' से हट गया 'सुषम', मात्र 'दुषम' ही रह जाता है,
संस्कारों का ह्रास जहाँ, देव-गुरु-धर्म का सत्कार कहाँ हो पाता है?
कषायों का फैलता विष-वृक्ष, सिद्ध गति का द्वार बंद हो जाता है।
स्वार्थ की ज्वाला से घिरा मनुष्य, सुख तो मात्र स्वप्न में ही पाता है।।
आरा 'दुषम-दुषम' आते ही, धर्म विलुप्त हो जाता है,

तन-मन से विकृत मनुष्य, खुद को बिलों में पाता है,
मर्यादाओं की मौत का तांडव, नरक का मेहमान बनाता है,
दुःखों का प्रलय कहर बरपाता, जीवन बद से बदतर बन जाता है।।

ये तो कालचक्र है, निरन्तर यूँ ही चलता जाता है,
उत्थान से पतन, पतन से संसार बढ़ता चला जाता है,
चारों गति में भटकता मानव, पल-पल छलता जाता है।
दुःख-सुख की भूलभूलैया में, स्वयं का भान कहाँ रह पाता है।।

उठो! जागो! कब ऐसा धर्म-श्रवण का मौका मिल पाता है,
जिनवाणी का आलम्बन ही सच्चे मार्ग से अवगत कराता,
इसके ही सोपानों पर चढ़कर जीव मुक्ति को पाता है।
अवसर ये भी गंवा दिया तो कालचक्र ये चलता जाता है।।

-'सौभाग्य', 7, सादुलगंज, बीकानेर (राज.)

लघु कविताएँ

डॉ. रमेश 'मयंक'

उदारता

उदारता का उत्कृष्ट भाव
दानशील-सहनशील
समन्वयशील-क्षमाशील बनाता है,
स्वहित से ऊपर उठकर
परहितार्थ प्राणियों को
दुःख-दर्द में जरूरतों की पूर्ति हेतु
सहयोग करने का
सामाजिक व्यवहार सिखाता है।

उपकार

उपकार की भावना
दूसरों को सहयोग कर
प्रसन्नता लाती है,
विपदा से पार उतारने हेतु
मानवता की राह दिखाती है।

करुणा

दूसरों द्वारा दर्शाई गई
करुणा को याद रख पाएँ
स्वयं के कष्ट को नहीं भूलें
और-उधार की तरह
समर्थ बनने पर
असमर्थों के प्रति
करुणायुक्त व्यवहार से
सामाजिकता का कर्ज चुकाएँ।

प्रसन्नता के सूत्र

देना चाहिए
जीवन में सदैव
स्वावलम्बन-श्रम को प्रोत्साहन
ताकि-
बालक-युवा-वृद्ध और
असहाय भी रह सके प्रसन्न।

-बी-8, मीरा नगर, चित्तौड़गढ़-312001 (राज.)

स्वास्थ्य-विज्ञान

अच्छी चिकित्सा पद्धति कौनसी?

डॉ. चंचलमल चोरडिया

अंग्रेजी चिकित्सा पद्धति की विशेषताएँ

अंग्रेजी चिकित्सा पद्धति में जन-साधारण को आकर्षित करने हेतु सशक्त तर्क, निदान व उपचारार्थ काम में लिये जाने वाले नवीनतम वैज्ञानिक उपकरणों की सुविधाएं तथा रोग को दबाकर शीघ्र राहत पहुँचाने की कला है। उसमें अपने प्रयोगों, परीक्षणों के परिणामों की सफलता एवं उपलब्धियों के आंकड़ों को व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुतीकरण करने का सम्बल है। प्रत्यक्ष को प्रमाण की क्या आवश्यकता? शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में तो वैज्ञानिकों ने अद्वितीय प्रगति की है, जिसके परिणाम स्वरूप आँखों की पुतलियों, गुर्दों, हृदय एवं शरीर के किसी भी खराब या अनुपयोगी अंगों का प्रत्यारोपण संभव हो सका है। कृत्रिम ढंग से शारीरिक क्षमताओं को बढ़ाने तथा प्रक्रियाओं के संचालन में भी उन्होंने आंशिक सफलता प्राप्त की है। जैसे चश्मों के उपयोग से देखने की क्षमता सुधारना, श्रवणयंत्रों से सुनने की ताकत बढ़ाना, डायलेसिस द्वारा रक्त का शुद्धीकरण, इंजेक्शन द्वारा शरीर में सीधे आवश्यक तत्त्व पहुँचाना, ऑक्सीजन द्वारा फेफड़ों के कार्यों में सहयोग देना, कृत्रिम दांत अथवा हाथ या पैर लगाना आदि सुविधाएँ हैं, जो अन्य चिकित्सा पद्धतियों में इतनी सरल नहीं। स्पष्ट है कि अंग्रेजी चिकित्सा पद्धतियों की उपलब्धियों को नकारा नहीं जा सकता।

अंग्रेजी चिकित्सा की पोषक सरकारी नीतियाँ

उपर्युक्त विशेषताओं के कारण ऐलोपेथिक चिकित्सा पद्धति भारत सहित अधिकांश देशों में सर्वमान्य हो रही है। उसे पूर्णत: वैज्ञानिक समझा जा रहा है। उन्हें सरकारी मान्यता, संरक्षण एवं पूर्ण सहयोग प्राप्त है। स्वास्थ्य मंत्रालय व चिकित्सा संबंधी नीति-निर्माता एवं संचार माध्यम उनके प्रति पूर्ण रुचि लेकर खुलकर प्रचार कर रहे हैं। दवा निर्माताओं के लुभावने, मायावी, भ्रामक विज्ञापनों एवं दबाव के कारण स्वास्थ्य मंत्रालय जन-साधारण के स्वास्थ्य की चिंता छोड़ ऐलोपेथिक चिकित्सा के हितों का पोषक बन कर रह गया है। स्वास्थ्य पर करोड़ों रुपये खर्च करने के बावजूद आज रोग और रोगियों की संख्या निरन्तर क्यों बढ़ रही है? इस समस्या की ओर उनका चिंतन सुषुप्त है। अंग्रेजी विदेशी चिकित्सा पद्धति को आवश्यक, उपयोगी, वैज्ञानिक, विकासोन्मुख, प्रभावशाली तथा पौराणिक

भारतीय चिकित्सा पद्धतियों को वैकल्पिक, अनावश्यक, अनुपयोगी, अवैज्ञानिक, अविकसित, सहयोगी चिकित्सा के रूप में बतलाने की साजिश हो रही है। अंग्रेजी चिकित्सा पद्धतियों की उपलब्धियों को बढ़ा चढ़ाकर प्रचारित किया जा रहा है तथा उसके दुष्प्रभावों को छिपाया जा रहा है। जो समस्यायें एवं नये-नये रोग अंग्रेजी चिकित्सा के दुष्प्रभावों से उत्पन्न हो रहे हैं, उनका समाधान उन्हीं से पूछा जा रहा है।

स्वास्थ्य हेतु जन-साधारण की सोच

ऐसी परिस्थितियों में जन-साधारण अन्य प्रभावशाली चिकित्सा पद्धतियों को संदेहास्पद समझे तो आश्चर्य नहीं। विज्ञान एवं विज्ञापनों की चकाचौंध में आज प्रायः मानव का आध्यात्मिक चिंतन सुषुप्त होता जा रहा है। चिकित्सक और दवा निर्माता रोग मिटाने के बड़े-बड़े दावे प्रस्तुत कर रहे हैं। फलतः जन साधारण की भीड़ उनसे भ्रमित हो, बिना सोचे समझे उनका अंधानुकरण करती है।

आज जन-साधारण को जितना चिकित्सक पर विश्वास है उतना अपनी अमूल्य क्षमताओं पर नहीं हो रहा है। वे प्रायः प्रत्येक सिद्धान्त, सत्य, तथ्य अनुभूति को तब तक स्वीकार नहीं करते, जब तक कि वे आधुनिक वैज्ञानिक मापदंडों पर खरा नहीं उतरते।

बहुत से व्यक्ति जो किन्हीं कारणों से ऐलोपेथी का उपचार लेना तो पसन्द नहीं करते, परन्तु निदान तो आधुनिक चिकित्सकों के परामर्श एवं निर्देशानुसार करवाना आवश्यक समझते हैं। रोग में राहत मिलने के बाद तथा रोग के लक्षणों के समाप्त हो जाने के पश्चात् भी जब तक ऐलोपेथिक डॉक्टर रोग की अनुपस्थिति की पुष्टि नहीं करते, तब तक उनमें अन्य उपचार की विश्वसनीयता पर संदेह बना रहता है। श्रद्धा और समर्पण के अभाव में उपचार की प्रभावशालिता तो वैसे ही कम हो जाती है। ऐसे रोगी अपनी मानसिकता के कारण अन्य चिकित्सा पद्धतियों का पूर्ण लाभ नहीं ले पाते। अन्य चिकित्सा के लम्बे-चौड़े दावे करने वाले बहुत से ऐसे चिकित्सक जिन्हें अपनी चिकित्सा के मौलिक सिद्धान्तों की जानकारी अथवा पूर्ण अनुभव नहीं होता, वे भी आत्मविश्वास एवं चिकित्सा की प्रभावशीलता पर पूर्ण विश्वास न होने से स्वयं रोगग्रस्त होने की स्थिति में अपनी चिकित्सा पद्धति से निदान अथवा उपचार करने के बजाय तात्कालिक राहत हेतु ऐलोपेथिक उपचार लेना पसंद करते हैं, तो उनके सारे दावे जन-साधारण को खोखले लगने लगते हैं। परिणाम स्वरूप जन-साधारण अन्य चिकित्सा-पद्धतियों के प्रति जल्दी आकर्षित नहीं होता।

प्रभावशाली अन्य चिकित्सा पद्धतियों पर चिंतन आवश्यक ?

कोई चिकित्सा पद्धति अपने आप में पूर्ण नहीं होती और न कोई भी चिकित्सा पद्धति ऐसी है जिसमें कोई विशेषता ही न हो। अर्थात् जो अंग्रेजी चिकित्सा पद्धति के सिद्धान्त,

मान्यताएँ, धारणाएँ हैं, वे ही संपूर्ण सत्य हों? बाकी सभी चिकित्सा पद्धतियों को अवैज्ञानिक, अविकसित, अनुपयोगी, अनावश्यक बतलाकर उपेक्षा करना कदापि उचित नहीं। हम किसी बात पर विश्वास न करें, परन्तु उस संबंध में बिना पूर्ण जानकारी अविश्वास करना भी उचित नहीं? ऐसे व्यक्तियों के चिंतन को वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता। जिस प्रकार यदि कोई गाँव का अशिक्षित व्यक्ति डॉक्टरों की भरी सभा में चिकित्सा विषयों पर अधिकारपूर्वक बोले तो उसकी बात का क्या महत्त्व, उसकी क्या सार्थकता? उसी प्रकार जिस विषय का ज्ञान न हो उस पर अभिमत देना नासमझी है। कारण चाहे जो हों, तथाकथित अच्छी प्रभावशाली स्वावलंबी मौलिक चिकित्सा पद्धतियाँ वर्तमान में सरकारी उपेक्षा की शिकार हैं। सरकार द्वारा न तो उन पर शोध को प्रोत्साहन दिया जा रहा है और न उनके प्रशिक्षण व उपचार व्यवस्था की तरफ उनका विशेष ध्यान ही जा रहा है। सरकारी मान्यता और सहयोग का तो प्रश्न ही नहीं। उनकी प्रभावशीलता, अच्छाइयों को बिना सोचे समझे, बिना अध्ययन किये नकारा जा रहा है। भले ही वे चिकित्सा के मापदंडों में सरकारी मान्यता प्राप्त वैज्ञानिक समझी जाने वाली आधुनिक अंग्रेजी चिकित्सा पद्धति से काफी आगे हो। परीक्षा में 25 अंक प्राप्त करने वालों को सर्वश्रेष्ठ तथा 60 से 70 अंक प्राप्त करने वालों को अयोग्य घोषित किया जा रहा है। मानो मैट्रिक पास व्यक्ति एम.ए. वालों को पढ़ाने की भूमिका निभा रहा हो। क्या स्वास्थ्य मंत्रालय से संबंधित नीति निर्माताओं ने उन पद्धतियों के विशेषज्ञों से परामर्श कर समझने का प्रयास किया? प्रकृति का यह मौलिक सिद्धान्त है कि रोग जिस स्थान, वातावरण एवं परिस्थितियों में उत्पन्न होता है, उसका उपचार उसी वातावरण, परिस्थितियों एवं धरती के अवयवों में समाहित होता है। अत: स्वावलम्बी चिकित्सा पद्धतियों के सिद्धान्त, उपचार का तरीका भारत की जलवायु, संस्कृति व वातावरण के ज्यादा अनुकूल है। जिस पर पूर्वाग्रह छोड़ अनेकान्त दृष्टि से वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पुन: शोध व व्यापक चिंतन आवश्यक है। आधुनिक चिकित्सकों को अन्य प्रभावशाली चिकित्सा पद्धतियों का सैद्धान्तिक ज्ञान कराया जाना चाहिये, जिससे चिकित्सकों का चिंतन बहुपक्षीय हो सके।

स्वास्थ्य विज्ञान का आधार क्या?

विज्ञान का आधार होता है सत्यदृष्टि, सनातनदृष्टि, अनेकांतदृष्टि, समग्रदृष्टि। इसके विपरीत जिसमें आग्रह है, दुराग्रह है, एकान्त मान्यताओं एवं धारणाओं का पोषण होता है, मायावी आचरण है, वहां कितना ही विज्ञापन क्यों न हो वह सोच विज्ञान का नहीं हो सकता। विज्ञान की पहली शर्त है "सच्चा सो मेरा न कि मेरा सो सच्चा।" प्राप्त सूचनाओं, प्रमाणों तथा प्रयोगों एवं परीक्षणों से उपलब्ध आंकड़ों का व्यवस्थित लिपिबद्ध

संकलन और प्रस्तुतीकरण विज्ञान का एक पक्ष है। जब तक धर्म, कर्म, नियति, स्वभाव व काल के प्रभावों को नकारा जाएगा, सत्य समझ में नहीं आयेगा। अध्यात्म के बिना विज्ञान अधूरा है, अपूर्ण है। विज्ञान के लिये सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् आचरण आवश्यक होता है।

आधुनिक चिकित्सा पद्धति की विसंगतियाँ

लम्बे चौड़े दावों के बावजूद दुःख जो रोग का मूल कारण होता है, तनाव, भय, निराशा, अधीरता नकारात्मक सोच जो रोग के कारणों के जनक होते हैं, उनको मापने, समझने और दूर करने का चिकित्सा के क्षेत्र में सर्वमान्य उपाय नहीं है। आधुनिक चिकित्सा में आत्मा, मन एवं भावों की उपेक्षा होने से निदान एवं उपचार आंशिक और अधूरा होता हैं। वहाँ प्रायः प्रत्येक अंग, उपांग, अवयव व इन्द्रियों आदि के अलग-अलग विशेषज्ञ होते हैं। परिणामस्वरूप उपचार शरीर को एक इकाई मान कर नहीं किया जाता है, जबकि शरीर के सभी तंत्रों में पूर्ण रूप से आपसी सहयोग होता है। प्रत्येक रोग का थोड़ा-ज्यादा, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष प्रभाव पूरे शरीर पर भी पड़ता है। टुकड़ों-टुकड़ों में शरीर का उपचार करने से उसका प्रभाव शारीरिक स्तर पर भी पूर्ण रूप से नहीं होता।

क्या उपचार हेतु सही निदान आवश्यक है?

1. आधुनिक चिकित्सा पद्धति रोग का मुख्य कारण शरीर में वायरस अथवा रोग के कीटाणुओं को मानती है। मानव में अनन्त शक्ति एवं क्षमता होती है। क्या लाखों चूहे मिलकर किसी शेर को परेशान कर सकते हैं? हाँ, यदि शेर को अपनी क्षमता का खयाल न हो, वह प्रमादी हो अथवा गहरी निद्रा में सोया हुआ हो, तो निश्चित रूप से उसे परेशानी हो सकती है। अन्यथा चूहे उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकते। ठीक उसी प्रकार यदि हमारी प्रतीकारात्मक शक्ति अच्छी हो तो वायरस और कीटाणु हमारा क्या बिगाड़ सकते हैं? गन्दी बस्तियों में रहने वाले, रोजाना पाखाना और गटर, नालियों की सफाई करने वाले तथा प्रतिदिन अस्पताल में असाध्य एवं संक्रामक रोगियों के बीच रह कर सेवायें देने वाले चिकित्सकों और नर्सेज आदि को तो इस मान्यतानुसार सदैव रोग ग्रस्त ही होना चाहिये। परन्तु इसमें कितनी वास्तविकता है, जन साधारण से छिपी नहीं है।

   मिथ्यात्व अर्थात् गलत सोच और मान्यताएं सभी समस्याओं का मूल कारण होती हैं। आधुनिक चिकित्सकों के इसी अवैज्ञानिक सोच के कारण कभी (Mad Cow) रोग के कारण लाखों निरपराध, गायों का कत्ल करवाया जाता है तो बर्ड फ्लू (Bird flue) रोग की आशंका के कारण कभी महाराष्ट्र में तो कभी पश्चिमी बंगाल में लाखों

बेजुबान, बेकसूर मुर्गियों की हत्या करवायी जाती है। प्रकृति के न्याय में देर भले ही हो, अन्धेर नहीं है। नित्य नये रोगों की नामावली जो आधुनिक चिकित्सक बता रहे हैं, वे सब उसी का दुष्परिणाम है। चिकनगुनियां, स्वाइन फ्लू, डेंगू, एड्स, एन्थ्रेक्स आदि रोग उनके ज्वलन्त प्रमाण हैं।

2. संसार की सारी गतिविधियां एक दूसरे के सहयोग एवं नियंत्रण से संचालित होती हैं। जैसे दिन-रात, अन्धेरा-प्रकाश, ऊपर-नीचे, आगे-पीछे, पति-पत्नी, ठण्डा-गरम, पोजेटिव-नेगेटिव, चुम्बक के उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव। जिस प्रकार गाड़ी की गति ब्रेक द्वारा नियंत्रित होती है, बिना अच्छे ब्रेक के वाहन का उपयोग नहीं किया जा सकता। ठीक उसी प्रकार शरीर में किसी भी अंग की कार्यप्रणाली पूर्णतया स्वतंत्र नहीं होती। प्रत्येक अंग का पूरक अथवा सहयोगी अंग अवश्य होता है और जब उन सहयोगी अंगों में असंतुलन हो जाता है तो रोग की स्थिति बनती है। परन्तु आधुनिक अंग्रेजी चिकित्सा में यिन यांग का यह सिद्धान्त गौण है। फलतः जो अंग रोगग्रस्त होता है उसी में उसका कारण ढूंढा जाता है तथा उसी अंग के उपचार को प्राथमिकता दी जाती है, जो सदैव सही नहीं होता।

3. दुनिया में जब दो व्यक्ति एक जैसे नहीं हो सकते, तब दो रोगियों और उनका निदान एक जैसा कैसे हो सकता है? वास्तव में आज लक्षणों के आधार पर जिन रोगों का नामकरण किया जाता है, वे अनेक रोगों के समूह के नेता की भांति होते हैं। जिन्हें सैकड़ों अप्रत्यक्ष रोगों का सहयोग प्राप्त होता है। जनतंत्र में नेता को हटाने का सरलतम उपाय है कि उसके सहयोगियों को उनसे अलग करना। सहयोगियों को अलग किये बिना नेता को हटाना सरल नहीं होता। ठीक उसी प्रकार निदान करते समय, यदि अप्रत्यक्ष रोगों की उपेक्षा करें तो, निदान और उस पर आधारित उपचार आंशिक अथवा अधूरा ही होता है।

4. किसी व्यक्ति को निद्रा में खर्राटे आते हैं तो किसी को डकारें, किसी को हिचकियां, किसी को छींकें, किसी को जम्हाइयाँ (उबासी) आदि अधिक आती हैं। शरीर में इन ध्वनियों के स्पन्दन स्वास्थ्य से संबंधित होते हैं। परन्तु निदान करते समय प्रायः उनकी समीक्षा न होने से निदान व उपचार अधूरा होता है।

5. किसी को लाल तो किसी को हरा, पीला, नीला, सफेद आदि रंग अच्छे या बुरे क्यों लगते हैं? क्या रंगों की पसंद या नापसन्द का स्वास्थ्य से कोई संबंध होता है? क्या रोग का निदान करते समय इस तथ्य की समीक्षा होती है?

6. किसी को खट्टा तो किसी को मीठा, नमकीन, चटपटा आदि में से कोई भी स्वाद

रुचिकर अथवा अरुचिकर लगता है। क्या इन स्वादों की पसन्द या अरुचि का स्वास्थ्य से कोई संबंध है? मधुमेह वालों को मिठाई और रक्तचाप के रोगियों को नमक छोड़ने की क्यों सलाह दी जाती है? शरीर में इन स्वादों का नियन्त्रण कौन करता है? क्या अपनी इच्छानुसार जब चाहे स्वादों के प्रति लगाव बदला जा सकता है? क्या स्वादों का रोग से संबंध होता है तथा निदान करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखा जाता है?

7. चंद व्यक्ति अत्यधिक सुगन्ध प्रिय होते हैं तो कुछ तनिक भी दुर्गन्ध सहन नहीं कर सकते। कुछ व्यक्तियों को दूर में कुछ भी जलने का सहज आभास हो जाता है तो कुछ को समीप में जलने का भी आभास नहीं होता। क्या शरीर से निकलने वाली तथा बाहर से आने वाली गन्धों के प्रति रुचि अथवा अरुचि के भाव का स्वास्थ्य से कोई संबंध होता है? क्या गन्ध के प्रति हमारी प्रकृति को दवा द्वारा मनचाहा बदलना संभव हैं? क्या गंध के प्रति रुचि या अरुचि निदान को प्रभावित करती है?

8. किसी व्यक्ति को बैठे-बैठे ही पसीना आता है तो अन्य को कठिन परिश्रम अथवा दौड़ने के बावजूद भी नहीं आता। ऐसा क्यों? किसी को आंखों में बिना कारण आंसू आ जाते हैं। किसी के थूक, कफ अथवा पसीना ज्यादा, तो वैसे ही अन्य लक्षणों वाले अन्य रोगी को कभी-कभी कम भी आता है? क्या हम जैसा चाहें, जितना चाहें, जिस मार्ग से चाहें तरल विजातीय पदार्थों का विसर्जन अपनी इच्छानुसार कर सकते हैं? क्या विजातीय तरल विभिन्न द्रवों के विसर्जन तरीकों का आपसी संबंध होता है? क्या पेथालोजिकल अथवा अन्य परीक्षणों द्वारा इनके कारणों का पूर्ण निदान संभव होता है?

9. कोई व्यक्ति दयालु तो कोई क्रूर हिंसक क्यों? कोई निराश, बेचैन अधीर तो कोई धैर्यवान क्यों? कोई लोभी, लालची तो कोई संतोषी क्यों? कोई क्रोधी, चिड़चिड़ा तो दूसरा शान्त और मधुरवक्ता क्यों? कोई मायावी, कपटी, दगेबाज तो दूसरा सहज, सरल क्यों? कोई घमण्डी तो कोई विनम्र क्यों? कोई भयभीत, तनावग्रस्त, दु:खी तो कोई निर्भय, तनावमुक्त और सुखी क्यों? क्या ये संस्कार स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं? क्या आधुनिक चिकित्सा पद्धतियां निदान में इन तथ्यों को महत्त्व देती हैं? क्या बाह्य लक्षणों के साथ इनका कोई संबंध है? क्या समान लक्षण वालों का स्वभाव एक जैसा होना जरूरी है?

रोग के ऐसे अनेक मूल कारणों की उपेक्षा होने से तथा मात्र बाह्य प्रकट होने वाले समान लक्षणों के आधार पर होने वाले निदान एवं उपचार का लक्ष्य रोगी को राहत दिलाने तक ही सीमित होता है। दवाइयों का दुष्प्रभाव भी पड़ता है। रोग के कारण बने रहते हैं।

आधुनिक चिकित्सा पद्धति का प्रायः जीवन पद्धति से संबंध नहीं होता। चिकित्सक भी प्रायः रोग की ही चिकित्सा करते हैं, रोग न होने की नहीं। उस ओर उनका ध्यान ही नहीं जाता। आधुनिक चिकित्सा पद्धति में निदान को प्रभावित करने वाले उपर्युक्त एवं ऐसे अनेक तथ्य उपेक्षित होते हैं, फलतः निदान समग्र दृष्टिकोण से नहीं होता। जब तक रोग का कारण मौजूद रहता है, तब तक उपचार स्थायी और प्रभावशाली नहीं हो सकता।

क्या अंग्रेजी चिकित्सा ही प्रभावशाली होती है?

प्रायः ऐसा प्रचारित किया जाता है कि आधुनिक समझी जाने वाली ऐलोपेथी चिकित्सा पद्धति ही वैज्ञानिक, मौलिक एवं अत्यधिक प्रभावशाली है तथा अन्य चिकित्सा पद्धतियाँ अवैज्ञानिक, अमौलिक या वैकल्पिक हैं। क्या ऐसा कथन सत्य पर आधारित है? अगर एलोपेथिक चिकित्सा प्रभावशाली होती तो दवा लेते ही रोग का निदान हो जाता। रोगियों को लम्बे समय तक अस्पतालों और डॉक्टरों के चक्कर नहीं काटने पड़ते। रोगियों की संख्या में दिनों दिन तीव्र गति से वृद्धि नहीं होती। बहुत से रोगों में जिन्दगी भर दवायें खाने की आवश्यकता नहीं रहती। उपचार के दुष्प्रभाव नहीं पड़ते। कैंसर, एड्स, एन्थ्रेक्स, चिकनगुनिया, डेंगू, स्वाइन फ्लू जैसे नवीन रोगों का जन्म नहीं होता।

क्या उपचार में राहत ही पूर्ण चिकित्सा हो सकती है?

आधुनिक चिकित्सा पद्धति का उद्देश्य एवं प्राथमिकताएं तात्कालिक परिणामों पर आधारित होने से प्रायः उपचार का कार्य राहत प्रदान करने तक ही सीमित होता है। उपचार के कारण भविष्य में पड़ने वाले दवाओं के दुष्प्रभावों की उपेक्षा होती है। संक्रामक और असाध्य रोगों में दवा जीवन पर्यन्त आवश्यक बन जाती है। क्या राहत को ही पूर्ण उपचार मानने वाली चिकित्सा पद्धति स्वयं को वैज्ञानिक तथा अन्य प्रभावशाली चिकित्सा पद्धतियों को वैकल्पिक कहने का दावा कर सकती है?

स्वास्थ्य के प्रति सच्चा दृष्टिकोण क्या है?

अतः जब तक चिकित्सक का दृष्टिकोण शरीर को स्वस्थ करने के साथ मन और आत्मा को स्वस्थ बनाने का नहीं होगा, उपचार अधूरा होगा। जो स्वयं अपूर्ण है, वह पूर्णता की बात करने का दावा कैसे कर सकता है? उससे विरोध होगा। जहां विरोध होगा, वहां नुकसान की संभावना रहेगी। हमें हमारा विवेक जागृत रखना है। हानि-लाभ, उपयोगी-अनुपयोगी, करणीय-अकरणीय की प्राथमिकताओं के आधार पर चिंतन कर स्वयं का आचरण करना होगा। विकार रोग है। अतः जो उपचार शरीर, मन, वाणी एवं आत्मा के विकारों को जितना जल्दी एवं स्थायी रूप से दूर करने में सक्षम होगा, वही चिकित्सा-पद्धति सर्वश्रेष्ठ एवं वैज्ञानिक कहलाने का दावा कर सकती है। स्वास्थ्य के प्रति यही सच्चा

और वैज्ञानिक दृष्टिकोण होता है।

वैकल्पिक चिकित्सा कौनसी ?

चिकित्सा पद्धति कैसी हो ? स्वावलम्बी या परावलम्बी ? सहज अथवा दुर्लभ ? सरल अथवा कठिन, सस्ती अथवा महंगी ? प्रकृति के सनातन सिद्धान्तों पर आधारित प्राकृतिक या नित्य बदलते मापदण्डों वाली अप्राकृतिक ? अहिंसक अथवा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हिंसा, निर्दयता, क्रूरता को बढ़ावा देने वाली ? दुष्प्रभावों से रहित अथवा दुष्प्रभावों वाली ? शरीर की प्रतीकारात्मक क्षमता बढ़ाने वाली या कम करने वाली ? रोग का स्थायी निदान करने वाली अथवा राहत पहुंचाने वाली ? सारे शरीर को एक इकाई मानकर उपचार करने वाली अथवा शरीर का टुकड़ों-टुकड़ों के सिद्धान्त पर उपचार करने वाली ?

उपर्युक्त मापदण्डों के आधार पर हम स्वयं निर्णय करें कि कौनसी चिकित्सा मौलिक है और कौनसी वैकल्पिक ? मौलिकता का मापदण्ड भ्रामक विज्ञापन अथवा संख्याबल नहीं होता। करोड़ों व्यक्तियों के कहने से दो और दो पांच नहीं हो जाते। दो और दो तो चार ही होते हैं। अत: हमें स्वीकारना होगा कि स्वावलम्बी चिकित्सा पद्धतियाँ मौलिक चिकित्सा पद्धतियाँ हैं, वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियां नहीं हैं।

किसी बात को बिना सोचे समझे स्वीकार करना यदि मूर्खता है तो अनुभूत सत्य को बिना सम्यक् चिन्तन एवं तर्क की कसौटी पर कसे, प्रचार-प्रसार के अभाव में पूर्वग्रसित गलत धारणाओं के कारण अस्वीकार करने वालों को कैसे बुद्धिमान कहा जा सकता है ?

अच्छी चिकित्सा पद्धति कौनसी ?

अच्छी चिकित्सा पद्धति के लिए आवश्यक होता है, रोग के मूल कारणों का प्रारम्भिक अवस्था में ही सही निदान, तुरन्त दुष्प्रभावों से रहित प्रभावशाली स्थायी उपचार। जो पद्धति सहज, सरल, सस्ती, स्वावलंबी एवं अहिंसक होने के साथ-साथ शरीर, मन, वाणी, भाव और आत्मा के विकारों को कम करने में सक्षम हो, वह पद्धति श्रेष्ठ है। जिन चिकित्सा पद्धतियों में करणीय-अकरणीय, भक्ष्य-अभक्ष्य, अहिंसा-हिंसा, न्याय-अन्याय, वर्जित-अवर्जित का विवेक हो, वे ही चिकित्सा पद्धतियां अपने आपको वैज्ञानिक एवं सर्वश्रेष्ठ होने का दावा कर सकती हैं।

-चोरडिया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-342003 (राज.)

E-mail: cmchordia.jodhpur@gmail.com, Website: www.chordiahealthzone.in

स्वास्थ्य-आलेख प्रश्नोत्तर प्रतियोगिता

जिनवाणी के इस अंक में प्रकाशित 'स्वास्थ्य-विज्ञान' स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित उपर्युक्त आलेख पर कुछ प्रश्न दिए जा रहे हैं, आप इनका उत्तर **15 सितम्बर 2014** तक श्री

चंचलमल जी चोरडिया के उपर्युक्त पते पर अपने फोन नं., ई-मेल एवं पते सहित सीधे प्रेषित कर सकते हैं। विलम्ब से प्राप्त उत्तरों को प्रतियोगिता में सम्मिलित नहीं किया जाएगा। इस प्रतियोगिता में किसी भी वय का व्यक्ति भाग ले सकता है। सर्वाधिक अंक प्राप्तकर्ताओं को प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार के अन्तर्गत 1000/-, 750/- एवं 500/- की राशि प्रेषित की जाएगी।

प्रश्नः-

1. वैकल्पिक चिकित्सा कौनसी श्रेष्ठ है?
2. निदान करते समय प्रायः किन-किन बातों की उपेक्षा होती है?
3. प्रभावशाली चिकित्सा हेतु क्या आवश्यक हैं?
4. क्या वर्तमान सरकारी नीतियाँ स्वास्थ्य के अनुकूल है?
5. प्रभावशाली चिकित्सा पद्धतियों पर चिन्तन क्यों आवश्यक है?
6. क्या अध्यात्म के बिना स्वास्थ्य विज्ञान पूर्ण हो सकता है?
7. क्या राहत ही पूर्ण उपचार होता है?

स्वास्थ्य-आलेख प्रश्नोत्तर प्रतियोगिता का परिणाम

जिनवाणी के जून-2014 के अंक में 'स्वास्थ्य-विज्ञान स्तम्भ' के अंतर्गत **'स्वास्थ्य का मूलाधार : अन्तस्रावी ग्रन्थियाँ'** के प्रश्नों के उत्तर 30 प्रतियोगियों से प्राप्त हुए। सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाले प्रतियोगियों के नाम इस प्रकार हैं-

पुरस्कार एवं राशि-	**नाम**	
प्रथम पुरस्कार (1000/-रु.)	श्रीमती विद्या संघवी-बदनावर, धार(म.प्र.)	(68/70)
द्वितीय पुरस्कार (750/-रु.)	श्री शुभम् जैन-बेल्लारी (कर्नाटक)	(67.5/70)
तृतीय पुरस्कार (500/-रु.)	श्रीमती विजयलक्ष्मी-अजमेर	(67/70)

अन्य प्रतियोगी अपने अंक मालूम करना चाहें तो चंचलमल जी चोरड़िया-94141-34606 (मो.) से सम्पर्क कर सकते हैं। प्रतियोगी अपना नाम व पूरा पता उत्तरपुस्तिका एवं लिफाफे पर अवश्य लिखें। पता नहीं लिखे जाने पर उसे प्रतियोगिता में शामिल नहीं किया जाएगा।

जैनत्व की पहचान

श्री राजकुमार नवलखा

जैन गरीबी से नहीं घबराता।
जैन वैभव पाकर नहीं अकड़ता।
जैन किसी से छल-कपट नहीं करता।
जैन सत्य के समर्थन में किसी से नहीं डरता।

-नवलखा भवन, आदित्य मार्ग, गुलाबबाड़ी, रामपुरा बाजार, कोटा-324006 (राज.)

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

डॉ. श्वेता जैन

प्राकृत भाषा विमर्श- प्रो. फूलचन्द जैन 'प्रेमी', ***प्रकाशक***- भोगीलाल लहेरचन्द इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी, विजय वल्लभ स्मारक जैन मन्दिर परिसर, जी.टी. करनाल रोड़, पोस्ट- अलीपुर, दिल्ली-110036, ***पृष्ठ***-143+12, ***मूल्य***-45 रुपये, सन्-2013

प्राचीन भारतीय जनमानस की प्रमुख जनभाषा 'प्राकृत' का महत्त्व आज भी पूर्ववत् है। यह भाषा अनेक वर्तमान भाषाओं की जननी है। अतः हिन्दी, बंगाली, उड़िया, असमिया, भोजपुरी, मैथिली, पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी आदि इन सभी भाषाओं के विकास क्रम को समझने में प्राकृत का ज्ञान और अनुसंधान आवश्यक है। प्राकृत भाषा में धर्म-दर्शन, तत्त्वज्ञान, अलंकार शास्त्र, सामाजिक विज्ञान, इतिहास-कला-संस्कृति, गणित, ज्योतिष, भूगोल-खगोल, वास्तुशास्त्र, मूर्तिकला एवं जीवनमूल्यों से सम्बन्धित अनेक विषयों तथा आगम एवं इनकी व्याख्या से सम्बन्धित साहित्य सर्जना समृद्ध रूप में होती आ रही है और यह क्रम आज भी प्रवर्तमान है। श्रमसाध्य इस कृति में लेखक ने सार रूप में प्राकृतभाषा के विमर्श को सुन्दर रीति से प्रस्तुत किया है। पालि, मागधी, अर्धमागधी, शौरसैनी, महाराष्ट्री, पैशाची, चूलिका पैशाची, अपभ्रंश भाषाओं के वैशिष्ट्य को उदाहरण सहित रेखांकित किया है, जो जिज्ञासुओं के लिए उपादेय है। प्राकृत निबन्ध, प्राकृत की प्रमुख सूक्तियाँ, प्राकृत-गिनती आदि का भी समावेश ग्रन्थ में किया गया है। यह पुस्तक प्राकृत भाषा के भेद-प्रभेद, प्राकृत-शिलालेख, संस्कृत नाटकों में प्राकृत, सट्टक प्राकृत नाटकों की एक विशिष्ट विधा, प्राकृत के प्रमुख व्याकरण आदि बिन्दुओं से समृद्ध विषय-सूची से युक्त है।

अमृतमयी निर्झर- अशोक गोयल, ***प्रकाशक***- सुलभ स्वास्थ्य इण्टरनेशनल, दुकान नं. 106, ब्लॉक से. 43, संजय प्लेस, आगरा, मोबाइल नं. 09319109553, ***पृष्ठ***-95, ***मूल्य***-50 रुपये

स्वमूत्र ईश्वर द्वारा मानव जाति को उसके तन-मन की सुरक्षा व देखभाल के लिए प्रदत्त की गई अमूल्य निधि है। इस निधि का उपयोग कैसे हो और किन-किन रोगों में यह लाभकारी होती है, इसका लोगों के आनुभविक दस्तावेजों के साथ प्रस्तुतीकरण हुआ है। शास्त्रों में शिवाम्बु पान को उपयोगी एवं जीवन का अमृत बताया गया है। अन्य चिकित्सा पद्धतियों के साथ इस चिकित्सा पद्धति को अपनाया जा सकता है।

समाचार-विविधा

आचार्यप्रवर हीरा का शिक्षानगरी कोटा में चातुर्मासार्थ मंगल-प्रवेश

दो प्रमुख अभियान : रात्रिभोजन-त्याग एवं संस्कारशाला

आगमज्ञ, प्रवचन-प्रभाकर, व्यसन मुक्ति के प्रबल प्रेरक आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. आदि ठाणा 7 का आषाढ़ शुक्ला, नवमी, सोमवार, 7 जुलाई 2014 को कोटा के रामपुरा बाजार स्थित स्थानक भवन में चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश हुआ।

कोटा सकल जैन समाज ने दो वर्षों के अथक प्रयास से आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. आदि मुनिपुंगवों का चातुर्मास प्राप्त किया। सकल जैन समाज ने सामूहिक भोज में रात्रि भोजन त्याग के प्रति अपनी सक्रियता-सजगता प्रदर्शित की। इस कारण जैनत्व का गौरव जगाने वाले गुरु हीरा ने साधु मर्यादा में रखने योग्य आगारों के साथ विक्रम संवत् 2071 का चातुर्मास कोटा के रामपुरा क्षेत्र में करने की घोषणा की एवं तभी से सकल जैन समाज आचार्यश्री के चातुर्मास का सुयोग मिलने पर प्रमुदित नज़र आया।

चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश बड़े तालाब स्थित समता भवन से हुआ। 7 जुलाई, 2014 को प्रातः आचार्यप्रवर प्रभृति मुनिपुंगव विहार की तैयारी कर रहे थे, कोटा सहित पोरवाल क्षेत्र के अनेक ग्राम-नगरों के श्रीसंघ व श्रद्धालुओं ने समता भवन पहुँच कर नमस्कार महामंत्र का जाप प्रारम्भ कर दिया।

आचार्यप्रवर ने लगभग 9 बज कर 10 मिनट पर विहार करने को कदम बढ़ाया, संत-मुनिराज संघनायक के पीछे-पीछे चलने को उद्यत हुए तो समता भवन में उपस्थित सैंकड़ों भक्तों के द्वारा जय-जयकार के जयनाद किए गए। देखते-ही-देखते श्रावक-श्राविकाओं की भागीदारी से विहार का विहंगम दृश्य अत्यन्त मनोरम हो गया। श्रमण भगवान महावीर, आचार्यप्रवर पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा., आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा., उपाध्याय पं. रत्न श्री मानचन्द्रजी म.सा., निर्ग्रन्थ संत-सतीवृन्द की जय-जयकार के साथ जन-जन की जिह्वा पर रचे-पचे नारे "गुरु हस्ती के दो फरमान, सामायिक-स्वाध्याय महान्, गुरु हीरा का है आह्वान, निर्व्यसनी हो हर इन्सान, जैन जगत् के दिव्य सितारे, हस्ती-हीरा-मान हमारे," जैसे नारों से विहार यात्रा की भव्यता और अधिक बढ़ गई। बहिनें मंगल गीत गा रही थीं तो बच्चे-बच्चियाँ पूरे उत्साह के साथ एक-दो-तीन-चार,

जैन धर्म की जय-जयकार के नारे गुंजायमान कर रहे थे।

विहार का मनोरम दृश्य देखकर कोटावासी आश्चर्यचकित थे कि सहस्राधिक भक्त स्वप्रेरित अनुशासन के साथ किस प्रकार भक्ति भावना प्रदर्शित करते हुए चल रहे हैं। विहार-यात्रा मुख्य सड़क मार्ग एवं बाजारों से होकर रामपुरा बाजार स्थित कोतवाली के सामने स्थानक वाली गली में ज्यों ही मुड़ी, हर कोई उत्साह से आगे बढ़ने को उतावला हो रहा था। लोगों की भारी भीड़ में रास्ता सुलभ होना संभव नहीं जानकर जिसे जहाँ जगह मिली, आगे-पीछे नजरें घुमा-घुमाकर नज़ारा देखने को बेताब नज़र आया।

आचार्यप्रवर मुनिवृन्द के साथ अनुमति लेकर स्थानक भवन में प्रविष्ट होकर मुख्य प्रवचन हॉल के ऊपर बने कमरों में पधारे तथा वस्त्र-पात्र-भण्डोपकरण यथास्थान रखकर मर्यादानुसार कायोत्सर्ग किया। तब तक जिसे जहाँ स्थान सुलभ हो सका श्रावक-श्राविकाओं ने अपनी जगह बैठकर और नीचे तक सैंकड़ों श्रद्धालुओं ने खड़े रहकर चातुर्मासिक मंगलप्रवेश पर संघनायक सहित वक्ताओं के हृदयोद्गार श्रवण करने का मानस बनाए रखा।

आचार्यश्री प्रवचन हॉल में दोनों ओर तीन-तीन संतों के मध्य सप्त ऋषिमण्डल की तरह पट्ट पर विराजमान थे। आचार्यप्रवर एवं संत-मुनिराजों को जनसमुदाय अपलक निहार रहा था, हर व्यक्ति गुरु हीरा के चातुर्मास के सुयोग को कोटा की पुण्यवानी मानकर सन्तुष्ट दिखाई दे रहा था। आचार्यप्रवर ने 'अरिहन्त जय-जय, सिद्ध प्रभु जय-जय' प्रार्थना की प्रथम पंक्ति का उच्चारण किया तो जनसमुदाय भी समवेत स्वर में प्रार्थना करने में तल्लीन हो गया।

प्रार्थना के अनन्तर स्थानीय संघ मंत्री श्री बुद्धिप्रकाश जी ने चातुर्मास को कोटाशहर की पुण्यवानी तथा करुणासागर की उदारता-विशालता का परिणाम बताया तथा आचार्य पदधारी सन्त के पहले चातुर्मास को सफल बनाने में सबके स्नेह पूर्ण सहयोग और भावना पूर्वक भागीदारी हेतु निवेदन किया।

स्थानीय बहिनों ने समवेत स्वर में 'स्वागतम्.....स्वागतम्......सुस्वागतम्' बोल में स्वागत-गीत की सुन्दर प्रस्तुति दी। 'वाणी है मधुर, गुरुवर की काया है चन्दन, माँ मोहिनी के नन्दन को शत-शत वन्दन' जैसे गीत के बोल में सबकी भावना समाहित थी, ऐसा प्रतीत हो रहा था।

साधुमार्गी जैन संघ के मंत्री श्री हनुमानमलजी दुगड़ ने आचार्यप्रवर की कृपा का उल्लेख करते हुए कहा-''हमारा समताभवन आचार्यश्री के कृपाप्रसाद से कृत्य-कृत्य हुआ है, आपश्री के उपकार को हम भूल नहीं सकते। आचार्यश्री ने सामूहिक भोज में रात्रि भोजन त्याग का जो अभियान चलाया है, हम उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं और मानते हैं कि

आचार्यश्री का अभियान जैनत्व का गौरव जगाने में सफल होगा और समाज को सही दिशा प्रदान करेगा।''

कोटा महिला मण्डल की श्राविकाओं ने सामूहिक भजन के माध्यम से संघनायक का स्वागत किया। महिला मण्डल की अध्यक्षा श्रीमती संजूजी मेहता, पोरवाल संघ के श्री अशोकजी जैन, विज्ञाननगर के श्री रमेशचन्दजी कनेरिया ने अपनी-अपनी विचाराभिव्यक्ति में आग्रह किया कि कोटा के इतिहास में आचार्यश्री के प्रथम चातुर्मास काल में ज्ञानाराधन, तपाराधन, धर्माराधन के साथ समाज-सुधार की दृष्टि भी रखें।

पोरवाल समाज के संघमंत्री श्री सुरेशजी जैन-कुशतला ने 'म्हारी श्रद्धा रा भगवान, थांने निश दिन ध्यावांजी' भजन से श्री सुभाषजी ने 'गुरु मेरे जीवन का इक सहारा' भजन से गुरु गुणगान किए। श्री पंकजजी मेहता ने ओजस्वी शब्दों में उपस्थित जनसमुदाय से परिवारजनों के साथ गुरुचरण सेवा में आने, संस्कारों की ज्योति जगाने और आडम्बरविहीन जीवन-शैली अपनाने हेतु प्रेरित किया। श्री पंकजजी ने कहा-इतनी विशाल जनमेदिनी अजूबा नहीं तो क्या है? न बैनर, न पोस्टर, न होर्डिंग्स, न स्वागत द्वार और न ही पत्र-पत्रिकाओं में विज्ञप्ति, फिर भी इतनी विशाल उपस्थिति आचार्यश्री के अतिशय का अनुपम उदाहरण है। हमें घर आई गंगा से लाभ लेना है। आचार्यश्री के सामूहिक रात्रि-भोजन-त्याग अभियान को सफल बनाएं।

संघमंत्री ने संत-मुनिराजों से अपने चिन्तन पूर्ण विचारों से लाभान्वित करने हेतु प्रार्थना की।

चातुर्मासिक मंगल-प्रवेश पर सन्तवृन्द द्वारा प्रदत्त उद्बोधन

श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. ने चातुर्मासिक मंगल-प्रवेश को प्रेरणा का सन्देश बताते कहा कि यह प्रवेश पाँच प्रकार का सन्देश देता है। **पहला सन्देश है**-बाहर से भीतर आना, भीतर में भक्ति जगाना। **दूसरा**- विहार पर विराम, वीतरागता की ओर प्रयाण। **तीसरा सन्देश**-स्थानक में स्थित होना, विराधना नहीं करना। **चौथा सन्देश**-महाराज को स्थानक पहुँचाना लक्ष्य नहीं है, लक्ष्य है महाराज के पास पहुँचना। **पाँचवा सन्देश** बताते मुनिश्री ने कहा-कचौरी छोड़-समोसा छोड़, हीरा गुरुवर की ओर दौड़।

मुनिश्री ने एक-एक सन्देश का हार्द समझाया तथा कहा कि प्रवेश छत्रधारियों का नहीं, छत्तीस गुणों के धारी महापुरुष का हुआ है। उनकी सन्निधि में होने वाले प्रवचन सुनने के लिए हैं, सीखने के लिए हैं और सुधरने के लिए हैं। मुनिश्री ने प्रेरणा की कि चातुर्मासिक काल में पच्चीस श्रावक दशवैकालिक सूत्र के चार अध्ययन कण्ठस्थ करें। 108 युवक सामायिक सूत्र सीखें। पच्चीस युवक प्रतिक्रमण सीखें। रात्रि भोजन त्याग अभियान में

संकल्प करें। दर्शन विशुद्धि के लिए कम से कम 36 श्रावक-श्राविकाएं प्रतिदिन 36 बार वन्दन करें। तपाराधन में मुनिश्री ने 51 अट्ठाई तप करने की प्रेरणा की।

श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. ने प्रवचन में कहा कि चम्बल के तट पर तीर्थंकर भगवन्तों का प्रतिनिधित्व करने वाले आचार्य भगवन्त का आगमन हुआ है। इस सुअवसर पर आपको अपने कर्त्तव्य के प्रति सजग होना है तथा आत्मा में रमण कर रामपुरा का नाम सार्थक करना है।

महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने कहा कि कोटा छोटा नहीं है, आज की यह उपस्थिति देखकर तो कहा जाएगा कोटा मोटा है। आप मोटा मन रखेंगे तो अन्तराय का ओटा दूर होते देर नहीं लगेगी। आज कोटा में मोटे आचार्य का चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश हो गया है, इसलिए सकल संघ में हर्ष है।

कोटा में हर वर्ष किन्हीं विद्वान् संतों का अथवा विदुषी महासती मण्डल का चातुर्मास होता आया है। लेकिन इस बार आपको आचार्यश्री का चातुर्मास मिला है। महान् अध्यवसायी मुनिश्री ने कहा-कोटा इन्द्रधनुषी शहर है। सात संघों ने मिलकर विनति रखी। आपकी दो वर्षों से विनति चल रही थी। आचार्यश्री ने सकलसंघ की विनति स्वीकार करते हुए चातुर्मास घोषित किया एवं गर्मी के भीषण परीषह में ग्रामानुग्राम विहार करते हुए यहाँ पधारे हैं। 25 साल पहले गुरुदेव के सान्निध्य में हम कोटा आये थे तब स्थानक का रंग-रूप ऐसा नहीं था। आज रंग-रूप कुछ बदला हुआ है। आप जानते हैं आज के दिन हस्ती के हनुमान का प्रवेश हुआ है। आप इन्हें शबरी के राम के रूप में कहें या मीरां के श्याम के रूप में कहें अथवा महावीर के गौतम के रूप में कहें या फिर सुधर्मा के जम्बू के रूप में कहें, आपकी इच्छा है। भक्तों के भगवान पधारें है ऐसा भी कह सकते हैं। आपको ज्ञात है आचार्यश्री के मन में समाज-व्यवस्था को लेकर कितना दर्द है ? समाज-सुधार के लिए आपश्री कैसी प्रेरणा करते आ रहे हैं, जैनत्व का गौरव जगे, इसके लिए पोरवाल क्षेत्र के हर गांव-नगर में आपश्री की प्रेरणा साकार हुई है। कोटा सकल संघ से भी सामूहिक भोज में रात्रि-भोजन-त्याग का अभियान आचार्यश्री ने चातुर्मास खोलने के पहले प्रस्तुत कर दिया था। आचार्यश्री ने चातुर्मास स्वीकार किया और वादे के अनुसार आज यहां प्रवेश कर लिया है। आपको अपना वादा निभाना है। आप वादा तो निभाएं ही, ज्ञान-ध्यान में, त्याग-तप में, साधना-आराधना में, व्रत-प्रत्याख्यानों में आगे बढ़ें। भाई पंकजजी ने मुनिश्री की प्रेरणा से सभा में खड़े होकर आचार्यश्री के मुखारविन्द से सामूहिक रात्रि भोजन-त्याग का नियम स्वीकार कर शुभ शुरुआत की। अभियान की सफलता में पोरवाल-ओसवाल पहले से सक्रिय हैं।

आचार्यश्री हीरा के हृदयोद्‌गार

आचार्यश्री ने अपने मंगलमय उद्‌बोधन में फरमाया कि कोटावासी सौभाग्यशाली हैं जिन्हें चम्बल के तट पर रहने का सौभाग्य मिला है। आप चम्बल के तट पर रहते हैं। पर पानी में मीन प्यासी रह जाय तो यह ताज्जुब की बात होगी। आपकी नहीं, हर व्यक्ति की आत्मा अनन्तज्ञानी सिद्धों जितना ज्ञान रखती है, पर कर्म से आबद्ध होने के कारण याचना करनी पड़ रही है। इस भटकन को मिटाने के लिए चातुर्मास है। वर्षावास में पानी बरसता है तो वाणी भी बरसती है। शेखेकाल में वाणी का ऐसा संयोग अधिक दिनों तक नहीं मिलता।

आचार्यश्री ने कोटावासियों को उनके उज्ज्वल अतीत का स्मरण कराते हुए कहा कि कभी आपका यह कोटा शहर धर्मनगरी था। यहाँ ज्ञान की गंगा बहती थी। चारित्र के चितेरे दिवाकर बनकर खड़े थे। जैसे लोकाशाह के समय लोका सम्प्रदाय विख्यात हुई ऐसे ही कोटा सम्प्रदाय का नाम विख्यात हुआ।

आचार्यश्री ने कहा-सम्प्रदाय चारित्र से चलती है। कोटा सम्प्रदाय चली, उसके पीछे महापुरुषों का चारित्र-बल रहा। वे चाहे जवाहराचार्य रहे या जैन दिवाकरजी महाराज। वि.सं. 2007 में वह सूर्य अस्त हो गया। फिर, कोटा उद्योगनगरी के रूप में प्रसिद्ध हुआ। उद्योग-धंधों के कारण यहां का व्यापार-व्यवसाय फला फूला। उद्योग-धंधों में जब मालिकों में और काम करने वालों में धर्म का सूर्य अस्त हुआ तो आपस में झगड़े हुए, फिर उद्योग नगरी के रूप में प्रसिद्ध कोटा शहर में शिक्षा का विस्तार चालू हुआ।

कोटावासियों ने तीन चरण पूरे किए। यह धर्मनगरी, उद्योगनगरी और शिक्षण नगरी के रूप में प्रसिद्ध हुआ। आज कोटा की पहचान शिक्षाहब के रूप में है, लेकिन केवल शिक्षण से संसार नहीं चलता। पढ़ा-लिखा व्यक्ति कभी गले की लड़ तोड़ सकता है, तो कभी कान के कुण्डल भी खींच सकता है। आज ये घटनाएं होती हैं। आप देखते हैं, पढ़ते हैं। कारण क्या?

आचार्यश्री ने अपने पूना प्रवास के अनुभव का सार सुनाते हुए कहा कि पूना शहर में सैंकड़ों बच्चे-बच्चियाँ पढ़ने जाते हैं। माँ-बाप सोचते हैं हमारे बच्चे-बच्चियाँ वहाँ पढ़ते हैं। पर कई बच्चे-बच्चियाँ शराब पीते व व्यभिचार करते पकड़े जाते हैं। मैं जब पूना गया, तब वहीं के सुज्ञजनों ने बताया कि शराब-जुए-व्यभिचार में बालक-बालिकाओं के अभिभावकों ने दो करोड़ रूपये खर्च करके उन्हें कटघरे में जाने से बचाया। पूना के श्रावकों ने बताया कि जितने भी लड़के-लड़कियाँ पकड़ी गई, उनमें पूना का कोई नहीं था। वे बच्चे-बच्चियाँ बाहर से आए हुए थे।

घर वाले पढ़ने को भेजते हैं। लेकिन बच्चे-बच्चियाँ वहाँ क्या-क्या करते हैं, उन्हें

मालूम नहीं पड़ता। आज अनेक नगरों में शिक्षण संस्थान हैं, लेकिन संस्कारशालाएं कहाँ-कहाँ है? इस बारे में किसी का चिन्तन नहीं।

आचार्यश्री ने कहा-साक्षर यदि संस्कारी नहीं होगा तो वह राक्षस बन सकता है। संस्कार के अभाव में पढ़ा-लिखा आदमी आतंकवादी, डाकू, हत्यारा बन जायेगा। संस्कारवान की कभी बुद्धि विपरीत भी हो जाय तो भी वह दुश्मन का बुरा नहीं करेगा।

मैं कोटा में संस्कारशाला खोलने आया हूँ। मेरा कोटावासियों से निवेदन है कि आप में से यहाँ कई ऐसे भक्त बैठे हैं, जिन्हें घर-परिवार के और व्यापार-व्यवसाय के काम करते हुए पचास-साठ साल हो गए, वे अब न केवल अपने लिए सोचें, बल्कि कुछ करें भी। वे धर्मस्थान में संवर करें, प्रवचन सुनें, प्रतिक्रमण करें। अपने घर का और समाज का काम वर्षों कर लिया, जरूरत है कुछ अपना करने की। मैं न केवल बुर्जुगों को, किन्तु युवकों को, माता-बहिनों को और बच्चे-बच्चियों, सबको कहना चाहता हूँ कि संस्कार सत्संग से आएंगे। आपको जितना समय मिले, सत्संग-सेवा में आने का, कुछ करने और सीखने का प्रयास करें। आपने हम संतों का प्रवेश तो करा दिया, लेकिन आपका क्या कर्त्तव्य है और उसकी पूर्ति में कितनी तैयारी है? अब आपके करने की बारी है।

आप स्वयं संस्कारवान बनें, घर-परिवार में और संघ-समाज में संस्कार की अमर- बेल बढ़ाएं। भगवान की वाणी जिसे हम जिनवाणी कहते हैं वह जीवन-निर्माण करने की खुराक देती है। प्रवचन का समय प्रात: 8-30 से 9-45 बजे के लगभग रहेगा। आज प्रवेश के कारण स्थानीय वक्ताओं को बोलने का समय देना जरूरी था, कल से प्रवचन के समय का अतिक्रमण नहीं होगा। दस बजे व्याख्यान पश्चात् आपको अपने काम पर जाने में रुकावट नहीं रहेगी। आपको यह अवसर मिला है, आप संस्कारशील बनकर अस्त हुए सूर्य को फिर से उदित करें तो कोटा में सद्गुणों का टोटा नहीं रहेगा। आप-सब सुज्ञ हैं, प्राप्त अवसर का उपयोग करें तो आपका चातुर्मास कराना और हमारा चातुर्मास करना सार्थक होगा।

आचार्यश्री के मंगल उद्बोधन पश्चात् संघमंत्री श्री बुद्धिप्रकाशजी जैन ने उपस्थित सभी संघों व श्रद्धालुओं का कोटा सकल संघ की ओर से पुन: स्वागत करते निवेदन किया कि आचार्यश्री से मंगल पाठ श्रवण करने के बाद आप सभी भोजनशाला में भोजन ग्रहण करके संघ को आतिथ्य-सेवा का लाभ प्रदान करें।

विचरण-विहार एवं चातुर्मास-प्रगति विवरण

ज्येष्ठ शुक्ला नवमी, 7 जून, 2014 को शिक्षानगरी कोटा में प्रवेश के पश्चात् संघशास्ता-संघनायक पूज्यश्री ने वहाँ के विभिन्न उपनगरों को फरसते हुए रिद्धि-सिद्धि कॉलोनी, वल्लभवाड़ी, विज्ञाननगर, केशवनगर, महावीरनगर, आर.के.पुरम्, बसन्त

विहार, शास्त्रीनगर, कोटा छावनी, तालाब किनारे स्थित समता भवन क्षेत्रों को पावन किया। 1 जुलाई को छावनी पधारे। यहाँ तीन दिन विराज कर 4 जुलाई को तालाब किनारे स्थित समता भवन विराजे। 8 जुलाई को वीर माता श्रीमती निर्मला जी हुण्डीवाल, श्री अभयजी, श्री नरेशजी, श्री नितिनजी हुण्डीवाल पूज्य गुरुदेव की सेवा में जलगांव से वीर भ्राता एवं वीर पिता श्री प्रकाशचन्द जी हुण्डीवाल के निधन के पश्चात् मांगलिक श्रवण करने हेतु पधारे।

11 जुलाई को समर्पित गुरुभक्त सुश्रावक श्री महावीरचन्द जी बाफना ने अपने सुपुत्र श्री जिनेन्द्र जी जैन का आज्ञापत्र गुरुचरणों में अर्पित किया। वीर पिता श्री चन्दनमल जी ढड्ढा के स्वर्गवास के पश्चात् 12 जुलाई को वीरमाता श्री मैनादेवीजी बीकानेर से परिवारजनों के साथ पूज्य गुरुदेव की सेवा में पधारे एवं मांगलिक श्रवण किया।

पूज्य आचार्यप्रवर के रामपुरा बाजार स्थित स्थानक में मंगल पदार्पण के साथ ही धर्मचक्र की आराधना प्रारम्भ हुई। यहाँ प्रातःकाल श्रद्धेय श्री आशीषमुनिजी म.सा. के द्वारा प्रार्थना कराने के पश्चात् श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. के द्वारा युवाओं के लिए विशेष कक्षा ली जा रही है। प्रत्येक माह के कृष्ण पक्ष में श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. एवं शुक्ल पक्ष में श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. तथा प्रतिदिन महान् अध्यवसायी, सरस व्याख्यानी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. द्वारा प्रवचन फरमाया जा रहा है। पूज्य आचार्यप्रवर प्रायः प्रत्येक रविवार, पर्व तिथि एवं वृहद् संघ के आगमन के अवसर पर मांगलिक एवं संक्षिप्त उद्बोधन से लाभान्वित कर रहे हैं। प्रवचन सभा का संचालन संघ मंत्री श्री बुद्धिप्रकाश जी द्वारा ओजस्वी शब्दों में धर्माराधन की प्रेरणा के साथ किया जा रहा है। प्रवचन के पश्चात् श्राविकाओं के लिए एक विशेष कक्षा आयोजित है, जिसमें बहिनों को 'महावीराष्टक' एवं 'पुच्छिंसु णं' कंठस्थ कराया जा रहा है। दोपहर में 2 से 3 बजे तक ज्ञानार्जन हेतु कक्षाएँ लगाई जा रही है, जिनमें सेवाभावी श्री नन्दीषेण मुनिजी म.सा. एवं श्री देवेन्द्रमुनिजी म.सा. अपनी सेवाएँ दे रहे हैं। दिन में 3 से 4 बजे तक आचार्यप्रवर के सान्निध्य में भगवती सूत्र की वाचनी की जा रही है। कृष्ण पक्ष में श्री योगेशमुनिजी म.सा. एवं शुक्ल पक्ष में श्री मनीषमुनिजी म.सा. वाचनी करते हैं। भावार्थ, विश्लेषण एवं व्याख्या श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. कर रहे हैं। सायंकालीन प्रतिक्रमण एवं ज्ञानचर्चा के कार्यक्रम भी विधिवत् चल रहे हैं।

चातुर्मास के प्रारम्भ से ही एकाशन, बियासन, नीवीं, आयंबिल, दया, उपवास एवं नौ दिवसीय तप की लड़ी की कड़ी चल रही है। अब तक 15,11,9,8 दिवसीय तप के साथ कुछ चोले, पचोले एवं लगभग 40 तेले की तपस्या पूर्ण हो चुकी है। संवर आराधना का क्रम

बराबर चल रहा है। 23 से 27 जुलाई तक भाइयों की एक एवं बहिनों की तीन पचरंगी सम्पन्न हुई है। कुछ बहिनें बड़ी तपस्या के लक्ष्य से स्वास्थ्य समाधि के साथ आगे बढ़ रही हैं।

पूज्य आचार्य भगवन्त के द्वारा सामूहिक भोज में रात्रिभोजन त्याग हेतु की जा रही प्रेरणा का प्रभाव कोटा वासियों पर दिखाई दिया है। यहाँ अब तक 485 पोरवाल बन्धुओं एवं 190 ओसवाल बन्धुओं ने संकल्प-पत्र भरें हैं। अभियान अभी जारी हैं।

22 जुलाई को जबलपुर से बाघमार परिवार के 50 से अधिक भाई-बहिनों ने गुरुदेव की सन्निधि का लाभ लिया तथा पूज्य प्रवर के मुखारविन्द से नियम प्रत्याख्यान ग्रहण किए। 27 जुलाई को संघ की एक विशेष बैठक रखी गई जिसमें रत्नसंघ के शीर्ष पदाधिकारियों एवं सदस्यों ने भाग लिया। स्वाध्याय संघ के निदेशक श्री राजेन्द्र जी लूंकड़-ईरोड ने बहिनों में सशक्तीकरण विषय पर प्रभावी अभिव्यक्ति से लाभान्वित किया। 29 जुलाई को सवाईमाधोपुर से श्राविका मण्डल की 55 बहनों ने दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण एवं धर्माराधना का लाभ लिया। पूर्व न्यायाधिपति श्री जसराज जी चौपड़ा ने बहनों को सहनशील रहने के गुर सिखाए। पूज्य आचार्यप्रवर की पावन सन्निधि में 3 दिवस की संवर साधना करने वाले श्रावक रहे- श्री गौतमचन्द जी हुण्डीवाल-चेन्नई, श्री नौरतनमल जी मेहता-जोधपुर, श्री केवलचन्द जी जैन-जयपुर, श्री महेन्द्र जी कांकरिया-चेन्नई, श्री राधेश्यामजी गोटेवाला, श्री बाबूलाल जी जैन-सवाईमाधोपुर, श्री सुधीर जी सुराणा-चेन्नई एवं श्री हस्तीमल जी गोलेछा-ब्यावर। कोटा नगर निगम की महापौर श्रीमती रतना जी जैन, खानपुर के पूर्व विधायक श्री अनिल कुमार जी जैन एवं सवाईमाधोपुर के पूर्व विधायक श्री हंसराज जी जैन ने पूज्य आचार्यप्रवर के दर्शन वन्दन का लाभ लिया। कोटा के अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक गुरुभक्त श्री पवनकुमार जी जैन भी यथासम्भव गुरु सन्निधि का लाभ ले रहे हैं।

दर्शनार्थियों का आवागमन निरन्तर बना हुआ है। चेन्नई एवं सवाईमाधोपुर के भक्तों की उपस्थिति प्रायः प्रतिदिन रहती है। मुम्बई, दिल्ली, बैंगलोर रतलाम, इन्दौर, सैलाना, बीजापुर, जोधपुर, जयपुर, अलीगढ़-रामपुरा, चोरु, कुश्तला, चौथ का बरवाड़ा, देई, सुमेरगंजमण्डी, इन्द्रगढ़, समीधी, जरखोदा, जलगांव, विजयनगर, अजमेर, मेड़तासिटी, पीपाड़सिटी, धुलिया, जामनेर, रायचूर, सोरापुर, हुबली, नांदरगांव, पूना, बड़गांव, कुम्भकोणम, पनरूट्टी, विल्लीपुरम्, भीलवाड़ा, बाबई, निमाज, ब्यावर, कटंगी, उमरगांव, हिण्डौन, गंगापुर, खेड़ली आदि क्षेत्रों से श्रद्धालु गुरुभक्तों ने आचार्यप्रवर एवं मुनिवृन्द की सन्निधि का लाभ लेकर धन्यता का अनुभव किया।

कोटा संघ द्वारा आगन्तुकों के अतिथि सत्कार के प्रति तत्परता प्रमोदजन्य है।

उपाध्यायप्रवर एवं शासनप्रभाविका जी के सान्निध्य में ज्ञानाराधन की ललक तथा तपाराधन की उमंग

जोधपुर- शान्त-दान्त-गम्भीर पूज्य उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.सा. आदि ठाणा 5 का आषाढ़ शुक्ला नवमी 07 जुलाई, 2014 को प्रातः 6.15 बजे मटकी चौराहा स्थित श्री मीठालाल जी गोगड़ के निवास से जय-जयकार करती जनमेदिनी के साथ सामायिक-स्वाध्याय भवन, छठी गली शक्तिनगर में मंगल प्रवेश हुआ। आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी एवं पक्खी को विशेष धर्माराधना हुई। महासती श्री सुव्रतप्रभाजी, महासती श्री उषाजी, महासती श्री विनीतप्रभाजी, व्याख्यात्री महासती श्री शान्तिप्रभाजी, शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. ने चातुर्मास की महत्ता पर प्रवचन दिया तथा चार माह ज्ञान-ध्यान, तपाराधन एवं दर्शन प्रवचन का लाभ लेने की प्रेरणा की। श्रद्धेय श्री जितेन्द्र मुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री दर्शनमुनिजी म.सा. ने भी सभा को धर्माराधना के लिए प्रेरित किया। मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.सा. ने अपने उद्बोधन में फरमाया कि पूज्य उपाध्यायप्रवर का चातुर्मास जोधपुर में ग्यारह वर्ष पश्चात् हो रहा है, अतः चातुर्मास को सार्थक बनाने के लिए 11 सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया जा रहा है-1. सूत्रविपाक सूत्र कंठस्थ, 2. पुच्छिंसु णं कंठस्थ, 3. दशवैकालिक चार अध्ययन कंठस्थ, 4. अष्टमी-चतुर्दशी को संवर, 5. रविवार को युवकों की धार्मिक संगोष्ठी, 6. चातुर्मास नियम परिपत्र के 21 नियमों का पालन, 7. इक्यावन नये स्वाध्यायी बनाना, 8. रात्रि-भोजन त्याग, 9. सामूहिक अठाई तप, 10. तेले की लड़ी, 11. सामूहिक भोज में जमीकंद का त्याग।

चातुर्मास के प्रारम्भ से ही तप-त्याग, ज्ञानाराधन एवं दया संवर की आराधना निरन्तर चल रही है। श्री लोकेश जी कुम्भट सुपुत्र श्री सुरेन्द्र जी कुम्भट, सुपौत्र श्री मांगीलाल जी कुम्भट के 21 तपस्या की तपस्या चल रही है। श्रीमती ताराबाई धर्मपत्नी श्री भंवरलाल जी गोगड़ के 17 की तपस्या के तथा श्रीमती शकुन्तला जी पुत्रवधू जी अजित जी कांकरिया के 12 की तपस्या के प्रत्याख्यान हुए हैं। तेले की लड़ी निरन्तर चल रही है। अठाई एवं उससे ऊपर की तपस्याएँ भी जारी हैं। 11 अठाई तप सम्पन्न हो चुके हैं। बहनों एवं भाइयों के दया-संवर की पचरंगी 22 से 26 जुलाई तक सम्पन्न हुई है। व्याख्यात्री महासती श्री चन्द्रकला जी म.सा. के चातुर्मास प्रारम्भ से बेले-बेले की तपस्या चल रही है। महासती श्री दर्शनलता जी म.सा के 29 जुलाई को 9 की तपस्या के प्रत्याख्यान हुए हैं आगे भी बढ़ने की सम्भावना है।

प्रत्येक रविवार को प्रातःकाल 6.30 से 7.30 बजे तक 'युवक धार्मिक संगोष्ठी' विगत 3 सप्ताह से चल रही है, जिसमें मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. एवं श्री लोकचन्द्र जी म.सा. मार्मिक उद्बोधन दे रहे हैं। 13 जुलाई को 'जैन सिद्धान्त एवं हमारी चर्या' विषय पर, 20 जुलाई को 'लक्ष्य बनायें, कदम बढ़ायें मंजिल पायें' विषय पर तथा 27 जुलाई को भी इसी विषय पर उद्बोधन दिया गया। युवक-युवतियाँ इस संगोष्ठी में उत्साह से उपस्थित हो रहे हैं। श्राविका मण्डल की ओर से 22, 24, 26 जुलाई को घातिकर्म, अघातिकर्म एवं एषणा समिति पर परीक्षाओं का आयोजन किया गया। युवक परिषद् के द्वारा रविवार को दिन में 1.30 से 2.00 बजे पच्चीस बोल पर परीक्षा का आयोजन किया जा रहा है। 20 जुलाई को आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा का आयोजन किया गया। 13 जुलाई 2014 को मुमुक्षु बहिन श्रीमती सरोजजी सुराणा एवं सुश्री आशा जी सुराणा का संघ के द्वारा अभिनन्दन किया गया। बहिनों द्वारा ज्ञानार्जन करने का कार्यक्रम निरन्तर चल रहा है। दिन में आगमवाचनी, प्रार्थना, प्रवचन, प्रतिक्रमण एवं ज्ञानचर्चा के कार्यक्रम विधिवत् चल रहे हैं। 24 जुलाई को जबलपुर संघ ने धर्माराधन एवं प्रवचन-श्रवण का लाभ लिया है। जोधपुर संघ आगन्तुक दर्शनार्थियों के आतिथ्य में तत्पर है।

जयपुर में तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. एवं महासती मण्डल के चातुर्मास

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. आदि ठाणा 5 का 7 जुलाई, 2014 को लालभवन, चौड़ा रास्ता में प्रातः 9.00 बजे मंगल प्रवेश हुआ। स्वास्थ्य लाभ के अनन्तर विहार में श्री अभयमुनिजी म.सा. पद यात्रा कर पधारे। यहाँ ज्ञान-ध्यान एवं तप-त्याग का अच्छा वातावरण बना हुआ है। प्रातःकाल कषायपाहुड का पठन होता है। प्रवचन पहले यशवन्तमुनिजी एवं फिर तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. फरमाते हैं। अष्टमी, चतुर्दशी एवं रविवार को प्रवचन में लालभवन भरा रहता है। मंदिरमार्गी श्रावक भी प्रवचन-श्रवण हेतु आते हैं। श्रोताओं की ऐसी उपस्थिति बहुत कम बार हुआ करती है। दिन में 2.00 बजे प्रश्नव्याकरण सूत्र की वाचनी होती है तथा लघुदण्डक एवं थोकड़े सिखाए जा रहे हैं। सायंकाल प्रतिक्रमण के पश्चात् ज्ञानचर्चा होती है। तत्त्वचिन्तक मुनिश्री के 9 की तपस्या का पारणक हुआ है तथा एकान्तर उपवास चल रहे हैं। श्री यशवन्त मुनिजी म.सा. ने 5 की तपस्या पूर्ण की है। श्री मोहनमुनिजी म.सा. बेले-बेले पारणा कर रहे हैं। महासती श्री विमलावती जी म.सा. के अठाई तप सम्पन्न हुआ है।

विदुषी व्याख्यात्री महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 5 का 7 जुलाई को महावीर नगर स्थित सामायिक स्वाध्याय भवन में मंगल प्रवेश हुआ। आपके

सान्निध्य में धर्माराधन, तपाराधन एवं ज्ञानाराधन का ठाट लगा हुआ है। **व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवरजी म.सा.** का मालवीयनगर की मौजी कॉलोनी से हरि मार्ग स्थित स्थानक में 7 जुलाई को प्रातः 6.30 बजे मंगल प्रवेश हुआ। **सेवाभावी महासती श्री विमलावती जी म.सा.** बारह गणगौर स्थित स्थानक में विराज रहे हैं। सर्वत्र ज्ञानाराधन एवं तपाराधन का क्रम बना हुआ है।

आदर्शनगर, अजमेर- व्याख्यात्री महासती श्री मनोहरकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 3 का आदर्शनगर स्थानक में 7 जुलाई को प्रातःकाल मंगल प्रवेश हुआ। इस अवसर पर शहर के सभी क्षेत्रों से स्वधर्मी बन्धु उपस्थित थे। जामोला, जावला, नसीराबाद, हटुंडी, माखुपुरा आदि स्थानों से स्वधर्मी बन्धुओं का पदार्पण हुआ। महासतीवर्या का चातुर्मास ज्ञानाराधन, धर्माराधन एवं तपराधन की दृष्टि से निरन्तर आगे बढ़ रहा है।

बैंगलोर- व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा., महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा 6 का प्रभावक चातुर्मास शूले, अशोकनगर, बैंगलुरु के महावीर भवन में 11 जुलाई, 2014 को मंगल प्रवेश के साथ प्रारम्भ हो गया। चातुर्मास के प्रारम्भिक दिवस से ही ज्ञान क्रियानिष्ठ अनुष्ठान 'चौबीस तीर्थंकर आराधना : बीस बोलों की साधना' का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ, जिसमें 99 साधक-साधिकाओं ने भाग लिया। यह कार्यक्रम चौबीस दिन चलेगा। 4 श्रावकों एवं 95 श्राविकाओं के द्वारा की जा रही इस सतत साधना से वातावरण आध्यात्मिक हो गया। प्रातः 8 से 9 बजे तक 'एक कदम धर्म की ओर' कक्षा में श्रावक-श्राविका, युवक-युवती एवं किशोर बड़े उत्साह से तन्मय होकर महासती भाग्यप्रभाजी के प्रभावशाली एवं मनोवैज्ञानिक प्रेरक उद्बोधनों का श्रवण करते हैं। कक्षा के अन्त में पूरे प्रवचन के प्रमुख अंशों की पुनरावृत्ति हेतु श्रोता स्वयं खड़े होकर प्रवचन के महत्त्वपूर्ण वाक्यों को सुनाते हैं। प्रार्थना, प्रवचन, प्रतिक्रमण, धर्म चर्चा आदि के सामान्य कार्यक्रमों के अतिरिक्त अनेक रुचि परक कार्यक्रमों से बैंगलोर के लोग हर्षित हैं। यहाँ पर 12 एवं 13 जुलाई को 15 वर्ष से अधिक उम्र की अविवाहित बालिकाओं का आस्था-अनुशास्ता कार्यक्रम आयोजित किया गया, जिसमें उन्हें भावी जीवन के लिए सजग किया गया। प्रत्येक रविवार को 15 स 25 वर्ष के अविवाहित युवक-युवतियों की एक कक्षा प्रातः 9.30 से 10.30 बजे तक महासती भाग्यप्रभा जी म.सा. के द्वारा ली जाती है। इस कक्षा को Right Step Program नाम दिया गया है। इस कक्षा के माध्यम से बच्चों के मन की अनेक शंकाओं का समाधान किया जाता है। प्रत्येक रविवार को प्रातः 8 से 10 बजे तक 7 से 13 वर्ष के बालक-बालिकाओं का शिविर अरिंहत शासन एकेडमी के नाम से संचालित होता है, जिसमें योग्य अध्यापकों द्वारा शिक्षण किया जाता है। 14 जुलाई से दिन

में 2 से 3.30 बजे तक सोमवार से शुक्रवार तक बैंगलोर के उपनगर/बाजारों के महिला मण्डलों का शिविर आयोजित किया जा रहा है, जिसमें आगम से सम्बन्धित जानकारी देने के साथ भजन गाने की कला सिखाई जाती है तथा अन्तगडसूत्र की वाचनी सिखाई जाती है। नियमित रूप से तेले की लड़ी चल रही है तथा आयंबिल, एकाशन, उपवास, नीवी आदि की साधना भी गतिशील है। 19-20 जुलाई को कर्नाटक जैन स्वाध्याय संघ के तत्त्वावधान में सूत्रकृतांगसूत्र स्वाध्याय शाला संगोष्ठी आयोजित की गई है।

कानपुर- व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा 4 का चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश 7 जुलाई को जैन स्थानक, आनन्दपुरी में हुआ। महासती जी की विहार यात्रा किदवई नगर से प्रारम्भ हुई। वरिष्ठ सुश्रावक श्री मनमोहनचन्द जी बाफना ने प्रवेश के पश्चात् अपने भजन 'आनन्द पुरी में आज आनन्द अपार है' को गाकर अपनी भावाभिव्यक्ति की। श्री लूणकरण जी लोढ़ा, संघ के महामंत्री श्री भीकमचन्द जी चोरडिया ने भी चातुर्मास को सफल बनाने हेतु प्रेरित किया। व्याख्यात्री महासती श्री मुक्ति प्रभा जी ने अपने संक्षिप्त उद्‌बोधन में कहा कि हम तो चार माह तक फ्री की दुकान लेकर बैठे हैं। इस धर्म रूपी फ्री की दुकान पर संवर, तप, ज्ञान, ध्यान रूपी वस्तुएँ उपलब्ध हैं। मंगल प्रवेश के अवसर पर श्री हिमांशु भाई एवं श्रीमती भारती बहन ने आजीवन ब्रह्मचर्य का नियम लेकर अच्छी शुरुआत की।

भीलवाड़ा- व्याख्यात्री महासती श्री रुचिता जी म.सा. आदि ठाणा 5 का चातुर्मासार्थ मंगल प्रवेश 7 जुलाई को संघ अध्यक्ष श्री दिनेश जी बम्ब के निवास स्थान से हुआ। विहार में सभी उपनगरों का जनसमूह स्वागत के लिए उमड़ पड़ा। सवाईमाधोपुर, कवलियास, जयपुर, अजमेर, खटवाड़ा के भाई-बहन भी विहार यात्रा में शामिल थे। प्रवेश बड़े उत्साह एवं उमंग के साथ हुआ। महासती मण्डल के द्वारा की गई प्रेरणा से वातावरण धर्ममय हो गया। चातुर्मास प्रारम्भ होने के दिन यहाँ 30 तेले, 22 बेले, एक चोला एवं 60-70 उपवास की तपस्या हुई। गुरुपूर्णिमा पर्व पर 22 तेले हुए, पचोला आदि की तपस्या चल रही है। प्रत्येक रविवार को बच्चों का संस्कार शिविर आयोजित किया जा रहा है। प्रतिदिन संवर, बियासन, एकाशन, आयम्बिल, उपवास एवं तेले की लड़ी चल रही है। महासती श्री विवेकप्रभाजी म.सा. प्रवचन में उत्तराध्ययन सूत्र का 29 वां अध्ययन समझा रहे हैं। महासती श्री रुचिता जी म.सा. भिन्न-भिन्न विषयों पर प्रवचन फरमाते हैं। प्रवचन के पश्चात् 'आओ सीखें कक्षा में' महासती श्री कृपाश्रीजी म.सा. तत्त्वज्ञान सिखा रही हैं। दिन में प्रतिक्रमण, 25 बोल, कर्मग्रन्थ, गति-आगति, भक्तामर स्तोत्र आदि सिखाने का कार्य चल रहा है। महासती जी का चातुर्मास अहिंसा भवन, शास्त्रीनगर में उल्लास एवं उमंग के साथ चल रहा है।

पाली- व्याख्यात्री महासती श्री निरंजना जी म.सा., महासती श्री पद्मप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा 4 का सुराणा मार्केट के सामायिक-स्वाध्याय भवन में मंगल प्रवेश 6 जुलाई को श्री केवलचन्द जी गुलेछा के निवास स्थान से हुआ। विहार में लगभग 150 की संख्या में श्रावक-श्राविकाओं का उत्साह झलक रहा था। पाली संघ की निरन्तर विनति को ध्यान में रखकर पूज्य आचार्यप्रवर के द्वारा यह चातुर्मास जून माह में ही घोषित किया गया। महासती श्री पद्मप्रभाजी म.सा. ने प्रवेश के पश्चात् सभा को अनवरत धर्म-साधना, तप-त्याग, एवं ज्ञान-ध्यान में रुचिपूर्वक आगे बढ़ते हुए इस चातुर्मास को सफल बनाने का प्रेरणा संदेश दिया। श्रद्धेय महासती जी ने फरमाया कि प्रत्येक माता-पिता को श्रवणकुमार जैसा सेवाभावी, राम जैसा आज्ञाकारी, कुणाल जैसा पितृभक्त पुत्र चाहिए। प्रत्येक गुरु को गौतम जैसा विनयी एवं गजसुकमाल जैसा सहनशील शिष्य चाहिए। हमें भी ऐसा संघ चाहिए जो धर्म-ध्यान, साधना-आराधना एवं तप-त्याग में समर्पित रूप से संलग्न रहे। महासती कान्ताजी, महासती पद्मप्रभा जी एवं महासती निरंजनाजी के ओजस्वी एवं प्रभावी व्याख्यानों से जन-जन प्रभावित हैं। व्याख्यान के पश्चात् "आओ कर्म प्रकृति का ज्ञान बढ़ायें" विषय पर प्रतिदिन 30 मिनट की कक्षा महासती श्री पद्मप्रभा जी म.सा. ले रहे हैं। महासती श्री ज्योतिजी म.सा. एवं महासती श्री कान्ता जी म.सा. प्रेरणाप्रद भजनों के साथ प्रार्थना को उच्चता प्रदान कर रहे हैं। दोपहर में बहिनें ज्ञान-ध्यान सीख रही हैं। सायंकाल प्रतिक्रमण भाइयों/बहिनों में पर्याप्त संख्या में हो रहे हैं। महासती श्री ज्योतिजी म.सा. ने 12 जुलाई को 'अंतिम यात्रा' के विषय पर अत्यन्त मार्मिक चित्रण किया। तेला, उपवास, आयंबिल, नीवीं एवं एकासन की लड़ियाँ चातुर्मास प्रारम्भ से ही निरन्तर चल रही हैं। पचरंगी तप की आराधना हो चुकी है।

संघ की बैठकों का आयोजन सितम्बर में

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की **संचालन समिति** व **कार्यकारिणी** की बैठक शनिवार, 13 सितम्बर, 2014 को कोटा में रखी गई है, जिसमें संचालन समिति तथा कार्यकारिणी के सभी सदस्यों की उपस्थिति सादर प्रार्थित है।

संघ एवं संघ की सहयोगी संस्थाओं की **वार्षिक साधारण सभा** रविवार, 14 सितम्बर, 2014 को मध्याह्न 12.00 बजे कोटा (राज.) में रखी गई है।

वार्षिक साधारण सभा में विचारणीय बिन्दुः-

1. गत बैठक की कार्यवाही का पठन
2. संचालन समिति/कार्यकारिणी की बैठक में लिए गये निर्णयों की जानकारी/अनुमोदन।

3. संघ व संघ की संस्थाओं की प्रगति की समीक्षा व सदस्यों से प्राप्त सुझावों पर विचार।
4. संघ व संघ की संस्थाओं की कार्यकारिणियों द्वारा स्वीकृत वर्ष 2013-2014 के वास्तविक आय-व्यय एवं वर्ष 2014-2015 के प्रस्तावित बजट का अनुमोदन।
5. अंकेक्षक की नियुक्ति।
6. अन्य विषय अध्यक्ष महोदय की आज्ञा से।

नोटः- कोटा पधारने पर आपको परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्यश्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. आदि ठाणा 7 के दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण का लाभ भी प्राप्त होगा।

संघ के सभी सदस्यों से विनम्र अनुरोध है कि संघहित में आप बैठक में कोई सुझाव रखना चाहें तो अपने सुझाव लिखित में संघ के प्रधान कार्यालय को 31 अगस्त, 2014 तक भेजने की कृपा करें। संघहित के उपयोगी सुझावों पर यथोचित विचार व निर्णय करने का हमारा प्रयास रहेगा। संघ सदस्यों को साधारण सभा में भाग लेने की आप अपने क्षेत्र में सूचना करें। - *आनन्द चौपड़ा, राष्ट्रीय महामंत्री*

संघ द्वारा सम्मानार्थ प्रविष्टियाँ आमन्त्रित

युवा प्रतिभा- शोध-सम्मान (45 वर्ष की आयु तक)-

1. **प्रशासनिक चयन-** राज्यस्तरीय व केन्द्रीय प्रशासनिक सेवा, न्यायाधिपति आदि विशिष्ट पदों पर चयन।
2. **प्रोफेशनल विशिष्ट-** डॉक्टर, इंजीनियर, चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट, कम्पनी सचिव व अन्य प्रोफेशनल कोर्स में योग्यता सूची में स्थान पाने पर।
3. **शोध-** वैज्ञानिक खोज (अहिंसा व जैन सिद्धान्तों को पुष्ट करने वाली)
4. **संघ-सेवा-** चतुर्विध संघ सेवा, विशेष धार्मिक अध्ययन, धार्मिक लेखन इत्यादि।

विशिष्ट स्वाध्यायी सम्मान (एक श्राविका, एक युवा, एक वरिष्ठ स्वाध्यायी)- कम से कम 10 वर्ष स्वाध्याय संघ, जोधपुर से स्वाध्यायी (पर्युषण पर्वाराधन) के रूप में सक्रिय सेवा। (युवा स्वाध्यायी के लिए आवश्यक होने पर सेवा वर्ष में छूट दी जा सकेगी।)

गुणी-अभिनन्दन-

1. **तपस्या-** कम से कम पाँच वर्ष तक एकान्तर, दीर्घ तपस्या, दीर्घ संवर-साधना या अन्य विशिष्ट तप।
2. **अन्य-** सेवा, साधना, संघ उन्नयन में योगदान, चतुर्विध संघ सेवा, विद्वान्।

नोटः- उक्त सम्मान हेतु अपनी प्रविष्टियाँ 31 अगस्त, 2014 तक संघ कार्यालय के पते

पर भिजवाएं।-आनन्द चौपड़ा, महामंत्री-अ.भा.श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001(राज.), फोनः 0291-2636763,Email-absjrhssangh @yahoo.com

आचार्य हस्ती-स्मृति-सम्मान 2014 हेतु प्रविष्टियाँ आमन्त्रित

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर के द्वारा प्रतिवर्ष जैन आगम, जैन धर्म-दर्शन, कला एवं संस्कृति तथा जैन जीवन-पद्धति के क्षेत्र में लेखन, शोध तथा जैन सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में विशिष्ट योगदान करने वाले विशिष्ट विद्वान् को 'आचार्य हस्ती-स्मृति-सम्मान' से सम्मानित किया जाता है। इस सम्मान हेतु लेखकों से सम्मान योग्य कृति की चार प्रतियाँ 31 अगस्त 2014 तक आमन्त्रित हैं। सम्मान हेतु कतिपय नियम इस प्रकार हैं-

1. अन्य संस्थाओं द्वारा पूर्व में पुरस्कृत कृति पर यह सम्मान नहीं दिया जाएगा।
2. विद्वान् की एक कृति अथवा उनके सम्पूर्ण योगदान के आधार पर भी सम्मानित किया जा सकेगा।
3. सम्मान हेतु प्रकाशित अथवा अप्रकाशित (टंकित) कृति की चार प्रतियाँ प्रेषित की जानी चाहिए। प्रकाशित कृति सन् 2009 से पूर्व की नहीं होनी चाहिए।
4. कृति का विशेषज्ञ विद्वानों से मूल्यांकन कराया जाएगा।
5. कृति के मौलिक एवं पूर्व में पुरस्कृत न होने का प्रमाण-पत्र संलग्न करना होगा।
6. सम्मान के रूप में 51 हजार की राशि प्रशस्ति-पत्र के साथ प्रदान की जाती है।

आवदेन-पत्र कृति की चार प्रतियों के साथ अपने बायोडेटा एवं सम्पर्क सूत्र के साथ निम्नांकित पते पर प्रेषित करें- **सम्पर्क सूत्रः**- महामंत्री, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राज.), फोन नं. 0291-2636763, Email-absjrhssangh@yahoo.com

न्यायमूर्ति श्री श्रीकृष्णमल लोढ़ा स्मृति युवा शिक्षा प्रतिभा सम्मान हेतु प्रविष्टियाँ आमन्त्रित

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर द्वारा संघ-संरक्षक न्यायमूर्ति श्री श्रीकृष्णमल लोढ़ा की स्मृति में संचालित युवा शिक्षा-प्रतिभा सम्मान हेतु प्रविष्टियाँ आमन्त्रित हैं। इसके अन्तर्गत उन छात्र-छात्राओं की प्रविष्टियाँ स्वीकार्य की जायेंगी, जिन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धि प्राप्त की हो। माध्यमिक शिक्षा बोर्ड,

विश्वविद्यालय आदि की परीक्षाओं में वरीयता सूची में विशिष्ट स्थान प्राप्त करने वाले श्रेष्ठ छात्र को 21 हजार रुपये की राशि से सम्मानित किया जाएगा। प्रतियोगी एवं प्रोफेशनल पाठ्यक्रमों में उच्च वरीयता प्राप्त छात्र-छात्रा को भी सम्मानित किया जा सकता है।

इच्छुक अभ्यर्थी आवेदन करते समय अंकतालिका की सत्यापित प्रतिलिपि संलग्न करें तथा सम्पर्क सूत्र सहित अपना बायोडेटा 31 अगस्त 2014 तक निम्नांकित सम्पर्क सूत्र पर प्रस्तुत करें। **सम्पर्क सूत्रः**-महामंत्री, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राज.), फोन नं. 0291-2636763, Email-absjrhssangh@yahoo.com

वीतराग ध्यान साधना शिविर 1 सितम्बर से

राग-द्वेष की मलिनता से आत्मा को निर्मल करना ही धर्म का लक्ष्य है। इसी लक्ष्य की पूर्ति हेतु ध्यान साधना की जाती है। धर्म-श्रवण करने के पश्चात् भी जीवन में परिवर्तन न होने का कारण राग-द्वेष दूर करने का प्रायोगिक (प्रेक्टिकल) अभ्यास नहीं करना है। अतः इसी अभ्यास के लिए वीतराग ध्यान-साधना शिविर 01 सितम्बर, 2014 से 11 सितम्बर 2014 तक होना निश्चित हुआ है। इच्छुक साधक 25 अगस्त 2014 तक आवेदन-पत्र पूरित कर जयपुर के निम्न पते पर भिजवा सकते हैं। साधक को 1 सितम्बर, 2014 को सायंकाल 5 बजे तक पहुँचना अनिवार्य है, दूरस्थ साधकों को 2 सितम्बर, 2014 को प्रातः तक अपनी उपस्थिति आवश्यक रूप से देनी अनिवार्य है। **सम्पर्क सूत्रः**- शान्ता जी मोदी, सी-26, देवनगर, टोंक रोड़, जयपुर (राज.), फोनः- 0141-2710077, मोबाइल- 09314470972, **स्थान**- सामायिक-स्वाध्याय भवन, महावीर नगर, टोंक रोड़, जयपुर (राज.), आवेदन पत्र आप जिनवाणी मासिक पत्रिका की वेबसाइट से डाउनलोड कर सकते हैं। वेबसाइट :- **www.jinvani.net**

सूत्रकृतांग सूत्र पर स्वाध्याय शाला संगोष्ठी सम्पन्न

श्री कर्नाटक जैन स्वाध्याय संघ के तत्त्वावधान में परमपूज्य आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. आदि ठाणा 6 के सान्निध्य में 19-20 जुलाई 2014 को "सूत्रकृतांग सूत्र शोध स्वाध्याय शाला" आयोजित की गई। महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. ने सूत्रकृतांग के छठे अध्ययन 'वीरत्थुई' के माध्यम से प्रभु महावीर के गुणों का विशद विवेचन किया। महासती श्री भाग्यप्रभा जी म.सा. ने सूत्रकृतांग में वर्णित उपमाओं के आधार पर सूत्रकृतांग की विषय वस्तु का सुन्दर विश्लेषण किया। महासती श्री लक्षित प्रभाजी म.सा. ने सूत्रकृतांग के

आधार पर पंच महाव्रतों के स्वरूप पर प्रकाश डाला। डॉ. श्रीमती सुषमा जी सिंघवी-जयपुर ने वर्तमान विभिन्न समस्याओं के निवारण हेतु सूत्रकृतांग से विचारणीय बिन्दु प्रस्तुत किए। जिनवाणी के सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जी जैन, जोधपुर ने जैनदर्शन एवं अन्य दर्शनों में आत्मा के स्वरूप का सूत्रकृतांग के आधार पर तुलनात्मक दृष्टि से विशद विवेचन किया। प्राचार्य श्री प्रकाशचन्द जी जैन-जलगांव ने सूत्रकृतांग के प्रथम श्रुत स्कन्ध के सोलह अध्ययनों के क्रम के औचित्य पर सुन्दर प्रकाश डाला। डॉ. अशोक जी कवाड़-चेन्नई ने मोह एवं अज्ञान के निवारण हेतु सूत्रकृतांग की उपयोगिता प्रतिपादित की। सुश्रावक श्री प्रकाशचन्द जी पटवा ने साधक एवं साधना के स्वरूप का परिचय करवाया। कर्नाटक जैन स्वाध्याय संघ के संयोजक श्री शांतिलाल जी बोहरा ने साधना में बाधक तत्त्वों का सूत्रकृतांग के आधार पर विवेचन किया। सभी विद्वानों ने अपने-अपने विषयों पर सारगर्भित आलेख प्रस्तुत किए।

संगोष्ठी का कार्यक्रम प्रातः 9.30 से 12.30 तक तथा 2.00 से 4.30 बजे तक दोनों दिन विधिवत् चला। सभी सत्रों में श्रोताओं की अच्छी उपस्थिति रही। प्रत्येक सत्र में महासती मण्डल के द्वारा सूत्रकृतांग की महिमा पर एक गीतिका का सामूहिक गान किया जाता था। उस गीतिका के बोल थे-

सूयगडांग कहता आओ, स्व-पर ज्ञान करा दूँगा।
साधक का उत्तम जीवन, रस पान करा दूँगा।।

रविवार को अन्तिम सत्र में सामूहिक चर्चा की गई, जिसमें स्वमत-परमत का स्वरूप, उसे जानने की आवश्यकता तथा पात्रता पर गहन मंथन हुआ। श्रोताओं ने भी इस चर्चा में सक्रिय भाग लिया। संगोष्ठी में 45 स्वाध्यायियों सहित लगभग 200 से अधिक सदस्यों ने भाग लिया। स्थानीय स्वाध्यायियों के अतिरिक्त मैसूर, हॉसपेट, दौडबल्लापुर आदि क्षेत्रों के सदस्य भी उपस्थित थे। स्वाध्याय संघ के अध्यक्ष श्री मीठालाल जी मकवाना ने विद्वानों का अभिनन्दन तथा श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के मंत्री श्री निर्मल चन्द जी बम्ब ने आभार व्यक्त किया। स्वाध्याय शाला संगोष्ठी का संचालन शिविर चेयरमैन श्री नवरत्नमल जी भंसाली ने किया। *-शांतिलाल बोहरा, संयोजक*

जैनागम स्तोक वारिधि परीक्षा 11 जनवरी, 2015 को

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, घोड़ों का चौक, जोधपुर द्वारा कक्षा 1 से 12 तक के पाठ्यक्रम की परीक्षा लगभग 300 केन्द्रों पर 20 जुलाई 2014 को आयोजित की गई।

आगामी जैनागम स्तोक वारिधि (थोकड़ा) परीक्षा 11 जनवरी-2015 को दोपहर

12.30 बजे से आयोजित की जायेगी। तत्त्वज्ञान के इच्छुक भाई-बहिनों से विनम्र निवेदन है कि स्वयं थोकड़ों की परीक्षा में भाग लें तथा अन्य को भी प्रेरित करने की कृपा करावें।

थोकड़ों की परीक्षा से सम्बन्धित आवेदन पत्र, पाठ्यपुस्तकें तथा परीक्षा आदि से सम्बन्धित अन्य जानकारी के लिए सम्पर्क करें- सुरेश बी. चोरडिया, संयोजक-94440-28841, नवरतन गिड़िया, सचिव-94141-00759, धर्मचन्द जैन,रजिस्ट्रार-93515-89694, शिक्षण बोर्ड कार्यालय, जोधपुर (राज.) फोनः-0291-2630490, 2622623, फैक्स-2636763 **E-mail:** shikshanboardjodhpur@gmail.com, info@jainratnaboard.com, **Website:** www.jainratnaboard.com

जयपुर में ग्रीष्मकालीन धार्मिक शिक्षण शिविर सम्पन्न

श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जयपुर द्वारा 11 मई, 2014 से सांगानेरी गेट स्थित सुबोध स्कूल एवं 18 मई से 06 जून तक महावीर नगर, मालवीय नगर, जवाहर नगर, श्याम नगर, नित्यानन्द नगर, झोटवाड़ा, लालकोठी, मानसरोवर एवं प्रतापनगर (सांगानेर) में कुल दस स्थानों पर बच्चों में संस्कार निर्माण हेतु धार्मिक शिविर लगाये गये। लगभग 700 बालक-बालिकाओं ने शिविर में भाग लेकर अनुभवी अध्यापकों द्वारा धार्मिक, नैतिक एवं संस्कार निर्माण से सम्बन्धित शिक्षा प्राप्त की। शिविर का समय प्रातः 7.00 बजे से 9.00 बजे तक रखा गया। प्रारम्भ में सामूहिक प्रार्थना के साथ जैनागमों में वर्णित एक प्रेरक कहानी बच्चों को सुनाई जाती। शिविर की विभिन्न कक्षाओं में ढ़ाई वर्ष के बच्चों से लेकर M.A, M.Com और C. A. में अध्ययन कर रहे बालक-बालिकाओं ने विशेष रुचि एवं उत्साह से भाग लिया। अनेक बच्चों ने सामायिक, 25 बोल, प्रतिक्रमण आदि कठंस्थ किये। 102 शिक्षकों ने अपनी सेवाएँ दीं।

25 जून, 2014 को सभी केन्द्रों के 10 वर्ष से बड़े लगभग 400 बच्चों को तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. आदि ठाणा के दर्शन-वन्दन एवं प्रवचन-श्रवण से लाभान्वित कराया गया। धार्मिक अध्ययन की निरन्तरता हेतु प्रेरणा करने पर 240 बच्चों ने श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा के फार्म भरे।

शिविर के दौरान आयोजित सुपात्रदान (गोचरी) विवेक प्रतियोगिता में संत-सतियों की गोचरी से सम्बन्धित 33 चित्र रखे गये, जिनके पीछे उनके नियम का वर्णन लिखा हुआ था। प्रत्येक बच्चे को एक-एक चित्र दिया गया और उसे चित्र का प्रभावशाली वर्णन अपने शब्दों में 2-3 मिनिट में प्रस्तुत करना था। इस प्रतियोगिता के माध्यम से केवल शिविरार्थी बच्चे ही नहीं बल्कि उनके माता-पिता, सभी शिक्षकों और परिषद् के कार्यकर्ताओं को भी सुपात्रदान के महत्त्व और उसके सम्बन्ध में श्रमणोपासक द्वारा रखे जाने योग्य विवेक की

महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई।

पोस्टर प्रतियोगिता और प्रदर्शनी के अन्तर्गत "प्राणिमात्र को देना है अभयदान-सबको समझना है अपने समान", "निर्व्यसनी प्रामाणिक श्रावक, होता है सबका मनभावक", "आओ लोक की सैर करें", "स्वच्छ-सुरक्षित पर्यावरण", "स्वस्थता की ओर चरण", "नारी का सम्मान, घर में उतारा स्वर्ग विमान", "रहना पवित्र-संभाल चरित्र, यौवन महकेगा" जैसे- विषयों पर बच्चों ने 350 पोस्टर बनाए। जिनमें आकर्षक चित्रकारी और कविता आदि के माध्यम से विषय को बखूबी प्रस्तुत किया गया। इन सभी प्रविष्टियों की एक प्रदर्शनी शिविर के समापन समारोह के दौरान लगाई गई, जिसे सभी आगन्तुक अतिथियों ने बहुत सराहा।

शिविर का समापन, पुरस्कार वितरण एवं गुणीजन सम्मान समारोह 29 जून, 2014 को सुबोध पब्लिक स्कूल के सभागार में आयोजित किया गया। समारोह की अध्यक्षता अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् के अध्यक्ष श्री जितेन्द्र जी डागा ने की। जस्टिस श्री एस. एस. कोठारी (लोकायुक्त, राजस्थान सरकार) मुख्य अतिथि एवं डॉ. नवनीत जी मेहता विशिष्ट अतिथि थे। इस अवसर पर सभी शिक्षकों का सम्मान किया गया तथा श्रेष्ठ शिविरार्थियों को पुरस्कृत किया गया।

समापन कार्यक्रम में शिविरार्थी बालिकाओं द्वारा चन्दनबाला के त्याग, तप एवं शील पर आधारित एक सुन्दर लघुनाटिका का बहुत ही प्रभावी मंचन किया गया। समारोह में गुणीजन सम्मान के अन्तर्गत श्रीमान् सरदारसिंह जी बोथरा का अभिनन्दन किया गया, जिन्होंने बिना किसी पद पर रहते हुए परिषद् के गठन के समय से आज तक परिषद् के कार्यक्रमों में सदा सहयोग एवं मार्गदर्शन प्रदान किया है। *-मनीष मुणोत, शाखा सचिव*

आचार्य हस्ती करुणा अवार्ड हेतु आवेदन आमंत्रित

करुणा अन्तरराष्ट्रीय, चेन्नई का 17 वां वार्षिक अधिवेशन 27-28 दिसम्बर, 2014 को आयोजित होगा। इस कार्यक्रम में अनेक अवार्ड प्रदान किए जायेंगे। एतदर्थ अहिंसा, करुणा, पशु कल्याण, पारिस्थिकीय (इकोलोजी), पर्यावरण संरक्षण, पशु क्रूरता निवारण एवं शाकाहार के प्रचार/प्रसार में विशेष कार्य करने वाला व्यक्ति/संस्थान इन अवार्डस् के लिए निम्नांकित श्रेणियों में आवेदन (प्रमाणित तथ्यों सहित) 30 सितम्बर, 2014 तक कर सकता है-

1. **'आचार्य हस्ती करुणा रत्न अवार्ड'** (100000/-) के लिए उस व्यक्ति विशेष का चयन किया जाएगा, जिसने विश्व के समस्त प्राणियों की भावनाओं का सम्मान करते हुए, करुणा भाव के प्रचार-प्रसार के लिए अपनी समर्पित सेवाएँ देकर ऐसा

विशेष कार्य किया हो, जो दूसरों के लिए अनुकरणीय हो।

2. **'आचार्य हस्ती करुणा इंस्टिट्यूशन अवार्ड'** (50000/-) उस संस्थान विशेष को प्रदान किया जाएगा, जिसने जीव-जंतुओं के संरक्षण में अथवा मानवीय जीवन मूल्यों के प्रचार-प्रसार में अपनी विशेष सेवाएँ समाज को प्रदान की है।
3. **आचार्य हस्ती करुणा युवा अवार्ड'** (25000/-) ऐसे युवा (न्यूनतम आयु 21 वर्ष एवं अधिकतम आयु 40 वर्ष) को प्रदान किया जाएगा जिसने करुणा के क्षेत्र में विशिष्ट कार्य किया हो।
4. **'आचार्य हस्ती करुणा लेखक अवार्ड'** (25000/-) अपनी सशक्त लेखनी से करुणा के क्षेत्र में विशिष्ट कार्य करने पर।
5. **'आचार्य हस्ती करुणा वक्ता अवार्ड'** (25000/-) अपनी वाक्-पटुता से समाज/विद्यार्थियों में करुणा भाव प्रसारित करने में अभूतपूर्व सहयोग करने पर।
6. **'आचार्य हस्ती करुणा नियोजक अवार्ड'** (25000/-) यह अवार्ड उस नियोजक-व्यक्ति विशेष को प्रदान किया जायेगा, जो अपने संस्थान/व्यवसाय की सफलता के साथ-साथ करुणा विषयक गतिविधियों से जुड़ने में भी विश्वास रखता हो एवं उसकी व्यवहार कुशलता से अधीनस्थ कर्मचारी भी संतोष के साथ अपनी सेवाएँ देते हुए समाजोपयोगी गतिविधियों में हिस्सा लेने के लिए भी प्रोत्साहित हों।
7. **'आचार्य हस्ती करुणा कर्मचारी अवार्ड'** (25000/-) इस हेतु ऐसे कर्मचारी का चुनाव किया जाएगा जो अपने मालिक व अपने साथियों के बीच सामंजस्य रखता हुआ, बेहतरीन सेवाएँ प्रदान करता हुआ किसी न किसी तरह करुणा विषयक गतिविधियों से भी जुड़ा हो।

समस्त अवार्डस् 'सुराणा एण्ड सुराणा इंटरनेशनल अटॉर्नीज चेरिटेबल ट्रस्ट' के सौजन्य से प्रदान किए जाएँगे। आवेदनकर्ता पूर्ण पता अंग्रेजी भाषा में स्पष्ट शब्दों में निम्नानुसार लिखें- Application for 'Aa. Hasti Karuna............Award', Karuna International, Old No. 70, Sembudoss Street, 1st Floor, Chennai-600001 (T.N.), Ph. 25231714,25231724, Email-karunainternational@ yahoo.co.in

-कैलाशमल दुगड़, अध्यक्ष-आचार्य हस्ती करुणा अवार्डस् चयन समिति

बेटियों का सशक्तीकरण

आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के सान्निध्य में 27 जुलाई को स्वाध्याय संघ जोधपुर के निदेशक एवं भारतीय जैन संघटना के सदस्य श्रावकरत्न श्री राजेन्द्र जी लूंकड़-ईरोड़ ने बेटियों के सशक्तीकरण पर प्रेरक उद्बोधन दिया। 21वीं सदी में कैसे हम

बेटियों को कैरियर निर्माण हेतु बाहर भेजें तथा बाहरी वातावरण में उन्हें सुरक्षित कैसे रखें, पारिवारिक सम्बन्धों में कैसे मजबूती लाएं तथा लड़कियाँ अपने दोस्तों को किस प्रकार चुनें, आदि बिन्दुओं पर उन्होंने प्रभावशाली उद्बोधन दिया। अखिल भारतीय श्री जैन रत्न बहू बालिका मण्डल द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम में बालिकाओं एवं अभिभावकों ने उत्साह के साथ भाग लिया।

सेन फ्रांसिस्को में बोतल-पानी निषिद्ध

अमेरिका के सेन फ्रांसिस्को के स्थानीय प्रशासन ने अधिक से अधिक लोगों को पेयजल मुहैया कराने और पानी व्यर्थ बहाने से बचने के लिए कानूनन सार्वजनिक स्थलों पर बोतल बंद पानी खरीदना और बेचना अपराध घोषित कर दिया है। दुनिया भर में बड़ी मात्रा में प्लास्टिक की बोतलें सड़कों या खाली मैदानों में फैंकी जाती हैं, जिससे गंदगी होती है और बीमारियाँ फैलती हैं। पर्यावरण को सेहतमंद बनाए रखने के लिए यह कदम उठाने वाला सेन फ्रांस्सिको दुनिया का पहला शहर है। वर्ष 2020 तक यहाँ 'जीरो वेस्ट' का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। *-स्रोत : दैनिक भास्कर*

गोवंश को बचाने हेतु ज्ञापन

हैदराबाद- भारतीय प्राणीमित्र संघ के अध्यक्ष सी.ए. जसराज जी श्रीश्रीमाल के नेतृत्व में संघ के एक प्रतिनिधि मंडल ने तेलंगाना के मुख्यमंत्री के. चंद्रशेखर राव से भेंट कर पवित्र गो वंश एवं अन्य पशुओं को कसाइयों द्वारा कत्ल किये जाने से बचाने के लिये गाय एवं अन्य पशुओं के संरक्षण के लिए 1977 में बने कानून को तेलंगाना में सख्ती से लागू करने हेतु एक ज्ञापन दिया। ज्ञापन में कहा गया है कि भारत के संविधान की धारा 48 में वर्णित राज्यों के नीति निर्देशक तत्त्वों में निर्देश किया गया है कि राज्य गोवंश एवं अन्य पशुधन के कत्ल पर पाबंदी लगायी जाएगी। राज्य के विभाजन से पूर्व 1977 में राज्य विधान सभा ने गोवंश एवं अन्य पशुओं के संरक्षण के लिये आन्ध्रप्रदेश में जो अधिनियम पारित किया था, उसे नये तेलंगाना राज्य में सख्ती से लागू किया जाय।

संक्षिप्त समाचार

जोधपुर- अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर के पदाधिकारियों के साथ 21 मई 2014 को सम्पन्न बैठक में श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल ने निर्णय किया था कि श्राविका मण्डल की शाखाओं में माह में एक बार अथवा तीन माह में एक बार स्वाध्याय संगोष्ठी का आयोजन किया जाय। उसी क्रम में श्राविका मण्डल की प्रथम स्वाध्यायी संगोष्ठी का आयोजन 16 जुलाई, 2014 को उपाध्यायप्रवर के सान्निध्य में स्वाध्याय भवन,

शक्तिनगर जोधपुर में किया गया, जिसमें लगभग 300 श्राविकाओं ने भाग लिया। संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना ने संघ के प्रति समर्पण एवं समय-समय पर अपने योगदान के लिए प्रेरित एवं प्रोत्साहित किया। श्रद्धेय श्री लोकचन्द्र जी म.सा. ने एकता में शक्ति है, इसका प्रतिपादन करते हुए प्रेम, प्रेरणा और प्रोत्साहन इन तीन सूत्रों को आवश्यक बताया। मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. ने श्राविकाओं में एक नई शक्ति का संचार करते हुए फरमाया कि संघ में श्राविकाओं की अहम् भूमिका है, साथ ही परिवार में संस्कारों का दायित्व भी श्राविकावर्ग पर रहता है। महिला शब्द का विश्लेषण करते हुए उन्होंने महिला को ममता, हिम्मत और लाजवन्ती विशेषणों से युक्त बताया तथा बच्चों में संस्कार देने की प्रेरणा की। बहू बालिका मण्डल से अपनी बच्चियों को जोड़ने के लिए भी प्रेरित किया। *-बीना मेहता, महासचिव*

जोधपुर- श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर द्वारा जनवरी-2014 में आयोजित अखिल भारतीय निबन्ध प्रतियोगिता (पाप से बचें एवं संवर की महिमा) का आयोजन किया गया, जिसमें 25 निबन्ध प्राप्त हुए। प्रतियोगिता का परिणाम इस प्रकार है- **प्रथम-** श्री पारसमल जी चंडालिया, ब्यावर, **द्वितीय-** श्रीमती मंजू जी भण्डारी-ब्यावर, **तृतीय-** श्रीमती रेखाजी नंगावत-मैसूर, **सांत्वना पुरस्कार-** सुषमाजी सिंघवी-जोधपुर, श्वेताजी सुराणा-चित्तौड़, श्रीमती अंकिताजी मांडोत-मुम्बई, श्री अनिल जी जैन-कोटा, श्रीमती लीलाबाईजी कोठारी-अहमदनगर।

न्यूयार्क- अध्यात्म योगी, युगमनीषी आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. के पुण्य स्मृति दिवस के उपलक्ष्य में 31 मई 2014 को जैन सेण्टर न्यूयार्क के स्थानक में महामंत्र नवकार का अखण्ड जाप चौबीस घण्टे तक उल्लासपूर्वक किया गया। जाप के कार्यक्रम में दिगम्बर, श्वेताम्बर, दादाबाड़ी एवं श्रीमद् राजचन्द्र के अनुयायियों ने भी बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। सामूहिक सामायिक कार्यक्रम में श्राविकारत्न श्रीमती श्वेता अतुल कोठारी ने पूज्य आचार्यप्रवर के सम्बन्ध में प्रभावी उद्बोधन दिया। कई श्रावक-श्राविकाओं ने अपने प्रयासों से जाप को सफल बनाया। यहाँ पर प्रत्येक माह के दूसरे रविवार को सामूहिक सामायिक का आयोजन रखा जाता है, जिसमें सभी जैन सम्प्रदायों के श्रावक-श्राविका रुचिपूर्वक भाग लेते हैं। जाप में प्रतिवर्ष संख्या बढ़ रही है, जिसमें छोटे बच्चों का भी योगदान रहता है।

जोधपुर- श्री वर्धमान जैन रिलीफ सोसायटी जोधपुर द्वारा स्व. श्रीमती अकलकंवरजी एवं स्व. श्रीमती जौहारमल जी मेहता की पावन स्मृति में निःशुल्क शल्य चिकित्सा शिविर 27 जुलाई 2014 को आयोजित किया गया, जिसमें सर्जन डॉ. राम गोयल द्वारा विभिन्न ऑपरेशन किए गए। रविवार 21 दिसम्बर 2014 को स्व. श्री पुखराज जी अबानी (संस्थापक-चक्षु

चिकित्सा सेवा समिति) की 52 वीं पुण्य स्मृति के उपलक्ष्य में निःशुल्क शल्य चिकित्सा शिविर आयोजित किया जायेगा।

जोधपुर- राष्ट्रीय मासिक पत्रिका 'ओसवाल महिमा' की ओर से 2471 वें ओसवाल स्थापना दिवस पर 'देश की आजादी में ओसवालों का योगदान' विषय पर अखिल भारतीय स्तर पर निबन्ध प्रतियोगिता आयोजित की गई है। ओसवंश का कोई भी सदस्य अधिकतम 2471 शब्दों तक अपने मौलिक विचारों के साथ 31 अगस्त 2014 तक अपना निबन्ध भेज सकते हैं। प्रत्येक प्रतियोगी को लेख के साथ अलग पृष्ठ पर अपना पूरा नाम, गोत्र, पिता/पति का नाम, जन्मतिथि, शैक्षणिक योग्यता, पूरा पता, फोन नम्बर तथा अपना संक्षिप्त परिचय भेजना अनिवार्य होगा। प्रथम पाँच विजेताओं को क्रमशः 1111, 999, 777,555 व 333 रुपये का नकद पुरस्कार तथा पचास प्रतिशत अंक प्राप्त समस्त प्रतियोगियों को एक वर्ष तक ओसवाल महिमा पत्रिका निःशुल्क भेजी जायेगी। **सम्पर्क सूत्र-** ओसवाल महिमा कार्यालय 'कल्पतरू' किशोरपथ, 2 डी एण्ड ई, पोकरण हाउस, जोधपुर-342001 (राज.) प्रधान सम्पादक-संघवी मिट्ठूलाल डागा-094142-47785

चेन्नई- श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, चेन्नई द्वारा पूज्य आचार्यप्रवर के दीक्षा दिवस के उपलक्ष्य में भोपालगढ़ में 11 बकरे छुड़वाकर अभयदान किया गया है।

उदयपुर- श्रमण संघीय आचार्य डॉ. शिवमुनि जी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी श्री कुसुमवती जी म.सा. की प्रधान सुशिष्या उपप्रवर्तिनी श्री चारित्र प्रभाजी म.सा. के चरणों में बहिन प्रीति एवं सोनिया की भागवती दीक्षा 09 नवम्बर 2014 को होगी।

चेन्नई- हाल ही में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य श्री तुलसी की स्मृति में उन पर पाँच रुपये का सिक्का जारी किया गया है।

नागपुर- ज्ञानगच्छाधिपति श्रुतधर श्री प्रकाशचन्द जी म.सा. के मुखारविन्द से 30 जून, 2014 को पाली निवासी मुमुक्षु श्री रमेश जी कोठारी ने भागवती दीक्षा ग्रहण की।

बधाई

दिल्ली- श्रीमती पारूल मेहता प्रभात धर्मपत्नी श्री प्रणय प्रभात एवं सुपुत्री श्रीमती तृप्ति-

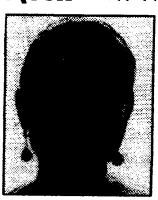

ए.एस. मेहता को ईंपीरियल कॉलेज, लंदन ने "जेनेटिक्स एवं मोलिक्यूलर माइक्रो बायोलोजी" के क्षेत्र में उनके शोध कार्य के लिए पी-एच्.डी. की उपाधि प्रदान की है। इस अध्ययन के लिए विश्व विख्यात विश्वविद्यालय द्वारा "रेक्टर एवार्ड फेलोशिप" भी प्रदान की गयी। आप जिनवाणी के पूर्व मानद् संपादक स्व. डॉ. नरेन्द्र भानावत एवं डॉ. शान्ता भानावत की दौहित्री हैं।

जलगांव - डॉ. गौरव सुपुत्र सज्जनीदेवीजी-राजेन्द्रकुमारजी बाफना ने घाटी मेडीकल

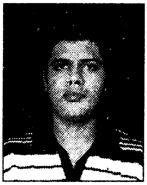

कॉलेज, औरंगाबाद से Master of surgery in Orthopedics परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की। आप गोटन (राजस्थान) निवासी सुश्रावक स्व. श्री नेमीचन्द जी एवं स्व. श्रीमती सुन्दरबाईजी बाफना के सुपौत्र हैं। आपका पूरा परिवार रत्नसंघ के प्रति समर्पित है।

दिल्ली - डॉ.अनेकान्त कुमार जैन को उनकी शोध कृति 'दार्शनिक समन्वय की जैन दृष्टि :

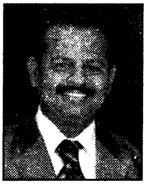

नयवाद' के लिए जैन विद्या संस्थान, जयपुर द्वारा 'महावीर पुरस्कार-2013' के लिए चयनित किया गया है। श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ (मानित विश्वविद्यालय), नई दिल्ली में जैनदर्शन विभाग में सहायक आचार्य के रूप में कार्यरत डॉ अनेकान्त अभी कुछ माह पूर्व महर्षि बादरायण व्यास युवा राष्ट्रपति सम्मान से भी सम्मानित हो चुके हैं।

जोधपुर - सुश्री शीतल सुपुत्री श्री सुमेरचन्द जी कर्नावट ने MBA (HR), परीक्षा में जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त किया है। आपको स्वर्णपदक प्रदान किया जाएगा।

उदयपुर - कवयित्री रेनू सिरोया 'कुमुदिनी' को देवघर (झारखण्ड) में आयोजित राष्ट्रीय शिखर सम्मान समारोह-2014 में 'पद्मभूषण महादेवी वर्मा पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। यह सम्मान उन्हें साहित्य एवं संगीत के क्षेत्र में योगदान हेतु दिया गया है।

जोधपुर - सुश्री अंजना भण्डारी सुपुत्री श्री राकेश जी भण्डारी ने CPT में पूरे भारतवर्ष में आठवाँ (8th) एवं जोधपुर में प्रथम स्थान प्राप्त किया। पूर्व में भी आपने CBSE की सी. सैकण्डरी परीक्षा में जोधपुर में चतुर्थ स्थान प्राप्त किया है।

जलगाँव- सुश्री अंकीता बरडिया सुपुत्री सुनीता-अजयजी बरडिया ने सरदार पटेल कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग मुम्बई से सिविल इंजीनियरिंग में विशेष योग्यता प्राप्त कर आई.आई.टी. कानपुर में एम.टेक हेतु प्रवेश लिया है।

अलीगढ़ (टोंक)- श्री हिमांशु जैन सुपुत्र श्री सोहनलाल जी जैन, सीकर एवं सुपौत्र श्री मूलचन्द जी जैन ने बिट्स पिलानी से कम्प्यूटर विज्ञान में इंजीनियरिंग परीक्षा द्वितीय स्थान के साथ उत्तीर्ण कर बैंगलोर में ebay inc कम्पनी में कार्य ग्रहण किया है।

जयपुर - श्री अंश हीरावत सुपुत्र श्रीमती अभिलाषा-अजय जी हीरावत ने ICSE की दसवीं की परीक्षा में 95 प्रतिशत अंक प्राप्त किये हैं।

जोधपुर - बालक धार्मिक बागरेचा सुपुत्र श्री धर्मचन्द जी बागरेचा ने 11 वर्ष की वय में 10 दिन में पूर्ण प्रतिक्रमण कंठस्थ किया है। आप सुश्रावक श्री मोहनलाल जी जीरावला के दौहित्र हैं।

श्रद्धांजलि

मदनगंज-किशनगढ़- श्रीमती कमलादेवी जामड़ धर्मपत्नी श्री भागचन्द जी जामड़ का 1

जुलाई, 2014 को स्वर्गवास हो गया। आपने अपने जीवन काल में 3 वर्षीतप, मासखमण, एक सिद्धितप 21, 15,11 एवं कई अठाई की तपस्याएँ कीं। आप प्रतिदिन सामायिक करती थीं। आपके अनेक प्रकार के त्याग-प्रत्याख्यान थे। आपकी आचार्य भगवन्त एवं सभी संत-सतियों के प्रति अटूट श्रद्धा थी। आप संघ की प्रत्येक गतिविधि में अग्रणी रहती थीं। मदनगंज-किशनगढ़ में पधारने वाले संत-सतीवृन्द को भक्ति-भाव पूर्वक निर्दोष आहार-पानी बहराकर आप अपने आपको भाग्यशाली समझती थीं। उन्होंने संस्कारी जीवन जीते हुए अपनी सन्तति को धार्मिक संस्कार देने का महत्त्वपूर्ण दायित्व निभाया।

कोटा- तपाराधिका सुश्राविका श्रीमती तारा बहन पतीरा धर्मसहायिका स्व. श्री विनोद रायजी पतीरा का 78 वर्ष की उम्र में 30 जून, 2014 को 3 दिन के चौविहार संथारे के साथ देवलोकगमन हो गया। आचार्यप्रवर जब दादावाड़ी विराज रहे थे, तब महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने भीषण गर्मी में दोपहर 1.30 बजे लगभग 3 किमी. जाकर 28 जून को श्रद्धानिष्ठ सुश्राविका को संथारे के प्रत्याख्यान करवाये। संथारा लगभग 55 घण्टे चला। परिवारजनों ने उसमें जो सहयोग प्रदान किया वह दिवंगत आत्मा की विशुद्धि का हेतु बना। तारा बहन ने 40 वर्षों से चौविहार तथा जमीकंद त्याग के प्रत्याख्यान ले रखे थे। आपने वर्षीतप तथा कई तपस्याएँ भी कीं। आप प्रायः दयाव्रत करती थीं।

हैदराबाद- सुश्राविका श्रीमती सुजाता जी मोदी धर्मपत्नी संघनिष्ठ श्रावकरत्न श्री श्याम जी

मोदी तथा पुत्रवधू स्व. श्रीमती ज्ञानजी एवं जस्टिस स्व. श्री सोहननाथ जी मोदी का 57 वर्ष की वय में 3 जुलाई 2014 को परलोकगमन हो गया। न्यायाधिपति मोदीजी अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष रहे। सुश्राविका ने अपने ससुर से प्रेरणा पाकर गुरु भक्ति और संघ-दीप्ति में ही नहीं, स्वयं के जीवन-निर्माण में गुरु हस्ती के सामायिक-स्वाध्याय एवं गुरु हीरा

के व्यसनत्याग को आत्मसात् कर परिवारजनों को संस्कारित किया।

चेन्नई- श्राविकारत्न श्रीमती सम्पतदेवीजी बाघमार धर्मपत्नी स्वर्गीय श्रावकरत्न श्री रेखचन्द जी बाघमार का 23 जून 2014 को संथारापूर्वक समाधिमरण हो गया। आपने अपने जीवन में अनेक त्याग-प्रत्याख्यान ग्रहण कर रखे थे। वे संत-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में सदैव तत्पर रहती थी। आप एवं आपका परिवार संघ-सेवा, समाज-सेवा में सदैव अग्रणी रहा है।

खेरली- संघनिष्ठ कर्तव्यनिष्ठ समाजसेवी श्रावकरत्न श्री रिखबचन्द जी जैन सुपुत्र श्री

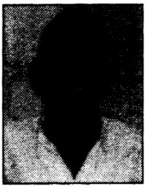

कजोडीलाल जी जैन का लगभग 70 वर्ष की वय में 30 जून 2014 को देहावसान हो गया। सन् 1987 से आप खेरली स्वाध्याय भवन में ही रहते थे। आपने खेरली जैन स्थानक भवन में एक कमरे के निर्माण में अपने सम्पूर्ण जीवन की बचत राशि 45000/- दान देकर एक मिशाल कायम की जिसके फलस्वरूप संघ द्वारा आपको 2013 में गुणीजन अभिनन्दन-समारोह में सम्मानित किया गया। आप खेरली संघ के समर्पित एवं ईमानदार कार्यकर्ता थे।

अलीगढ-रामपुरा- सुश्रावक श्री नेमीचन्द जी जैन (बिलोता वाले) का 6 जून, 2014 को

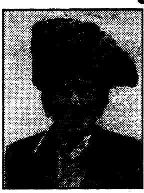

85 वर्ष की आयु में स्वर्गगमन हो गया। आपका जीवन सरलता, उदारता, मधुरता आदि सद्गुणों से युक्त था। सन् 1980 में आचार्यप्रवर हस्तीमल जी म.सा. ग्राम-बिलोता पधारे थे तब आपने आजीवन शीलव्रत का नियम लिया था।

जयपुर- सन्तसेवी श्रद्धानिष्ठ सुश्राविका श्रीमती सज्जनकँवरजी धर्मसहायिका स्व. श्रीमान् ज्ञानमलजी लोढ़ा का स्वर्गवास 21 जुलाई 2014 को हो गया। आपका जीवन सहज, सरल एवं सादगी जैसे गुणों से सुगन्धित था। आपने अपना जीवन त्याग-प्रत्याख्यान के साथ व्यतीत किया।

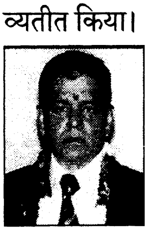

जोधपुर- धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री नरेन्द्र राज जी मेहता सुपुत्र स्व. श्री गुलराज जी चाबंड मेहता का 6 जून, 2014 को 54 वर्ष की वय में स्वर्गारोहण हो गया। आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा., आचार्यश्री हीराचन्द्र जी म.सा., उपाध्याय श्री मानचन्द्र जी म.सा. के प्रति आप समर्पित थे।

जोधपुर- सरलचेता धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री सांकलचन्द जी संकलेचा का 93 वर्ष की वय में

22 जुलाई, 2014 को संथारापूर्वक पण्डितमरण हो गया। आप ओजस्वी, दयावान एवं गम्भीर व्यक्तित्व के धनी थे। जीवन के अन्तिम समय में परिवारजनों की सजगता एवं आपकी इच्छाशक्ति के फलस्वरूप आपको महासती जी ने प्रातः 08.15 बजे संलेखना संथारा करवाया। लगभग 20

मिनट पश्चात् आपने समाधिमरण को प्राप्त किया। आप स्वाध्याय संघ के वरिष्ठ स्वाध्यायी युवारत्न श्री सुनील जी संकलेचा के पिताश्री थे।

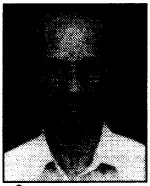

जोधपुर- श्री प्रसन्नचन्द जी गाँधी सुपुत्र श्री हीरालाल जी गाँधी का 24 जुलाई, 2014 को देहावसान हो गया। आप मृदुभाषी एवं प्रसन्नचित्त व्यक्ति थे तथा कल्पतरु सिनेमा, जोधपुर के मैनेजर थे।

रांजणी (जलगांव)- करुणाशील, पशुप्रेमी सुश्रावक श्री मोहनलाल जी कोठारी 5 जुलाई 2014 को 65 वर्ष की अवस्था में कालधर्म को प्राप्त हो गए। मितभाषिता, मितव्ययिता एवं स्वभाव की सरलता आपके विशेष गुण थे। मूक पशुओं के लिए उनके हृदय में सदैव करुणा बहती रहती थी। आपका पौत्र श्री विराग कोठारी स्वाध्याय संघ, जोधपुर का नन्हा स्वाध्यायी है।

जयपुर- सुश्रावक श्री घीसूलाल जी डोशी सुपुत्र श्री इन्दरमल जी डोशी का 7 जून 2014 को देहावसान हो गया। आप धर्मनिष्ठ एवं श्रद्धाशील श्रावक थे।

निमाज- सुश्रावक श्री महेन्द्रकुमारजी गादिया का 2 जून 2014 को स्वर्गारोहण हो गया। आप सरल, विनयी और सहृदय थे।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी-परिवार तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

समाज की तस्वीर

प्रवर्तक श्री गणेशमुनि शास्त्री

कोख में पल रही
कन्या को हुआ
मौत का एहसास,
बेचारी करने लगी
मन ही मन अरदास-
माँ! क्यों छीन रही
मेरे जन्म का अधिकार,
एक बार मुझे भी
देखने दे संसार।
जरा सोच
तेरी माँ ने
किया होता
गर ऐसा ही अत्याचार
तो क्या हो पाता
तेरा माँ बनने का
स्वप्न साकार।
यदि एक औरत
औरत का दुःख
नहीं समझेगी,
तो दहेज के लोभी
बहू को जलाने वाले
नारी पर कहर ढहाने वाले
कन्या को अभिशाप बताने वाले
इस पुरुष प्रधान
समाज की तस्वीर
कैसे बदलेगी?

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

21000/- सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल साहित्य निधि पोषक हेतु प्रत्येक

01 श्री अशोक जी कवाड़, चेन्नई (तमिलनाडु)

1000/- जिनवाणी पत्रिका की 20 वर्षीय आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

क्रम संख्या 15270 से 15287 तक 18 सदस्य बने।

'जिनवाणी' मासिक पत्रिका हेतु साभार प्राप्त

11000/- श्री श्यामजी, सुधीरजी एवं क्षितिज जी मोदी, जोधपुर हाल मुकाम हैदराबाद, श्रीमती सुजाता जी मोदी धर्मपत्नी श्री श्यामजी मोदी का 03 जुलाई, 2014 को स्वर्गगमन हो जाने पर उनकी स्मृति में।

2100/- श्री बाबुलालजी, नरेन्द्र कुमारजी जैन, देई, अक्षय तृतीया के पारणे देई संघ में होने के उपलक्ष्य में।

2100/- श्री प्रकाशमलजी, सुनील कुमारजी, हर्षजी बोथरा, चेन्नई, सहयोगार्थ।

2100/- श्री भागचंदजी, ताराचंदजी जामड़, मदनगंज-किशनगढ़, स्व. श्रीमती कमलादेवीजी धर्मपत्नी श्री भागचंदजी जामड़ का 1 जुलाई 2014 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

2100/- श्री राजेन्द्रकुमारजी ओस्तवाल, जोधपुर, अट्ठाई के उपलक्ष्य में।

2100/- श्रीमती मुन्नीदेवीजी-श्री नवरतन जी बाफना, जोधपुर, श्री दीपकजी एवं श्रीमती प्रियंका जी के अट्ठाई तपश्चर्या के उपलक्ष्य में।

1111/- श्री निर्मल कुमारजी, मनोहरलालजी बम्ब, शूले-बेंगलोर, सहयोगार्थ।

1101/- श्री राजेन्द्र कुमारजी, महावीरचन्दजी सी.ए. बाफना,जलगांव, डॉ. गौरवजी सुपुत्र श्री राजेन्द्र कुमारजी-सज्जनीदेवी बाफना के एम.एस. (ओर्थो), परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण करने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री देवेन्द्रनाथ जी-श्रीमती कमलाजी मोदी, लोकेन्द्रनाथ-रीतू जी, लोरी, यिशिता मोदी, जोधपुर, श्रीमती विमला जी (भंवरी बाईसा) भण्डारी धर्मपत्नी स्व. श्री रणजीत सिंह जी भण्डारी की 24 वीं पुण्यतिथि पर स्मरणांजलि स्वरूप।

1100/- श्री शांतिलालजी, आशीषजी, राहुलजी लुणावत, बैंगलोर, चि. राहुल का शुभविवाह सौ.कां. अंजू जी के संग 7 जुलाई 2014 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

1100/- श्री रिखबचन्दजी, नवरतनमलजी, अशोक कुमारजी बम्ब, विल्लीपुरम्, सहयोगार्थ।

1100/- श्री रोहित जी सिंघवी, जोधपुर, अपने माताजी श्रीमती सरलाजी एवं पिताजी श्री राजकुमारजी सिंघवी के सजोड़े 9 उपवास की तपस्या के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री विजयराज जी कोठारी, जोधपुर, अपने सुपुत्र का विवाह 28 जून, 2014 को सानन्द सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्रीमती कमलाबाई जी बाघमार, जबलपुर, सहयोग हेतु।

1100/- श्री अरूणजी, राहुलजी गांधी, जोधपुर, श्री प्रसन्नचन्द जी गांधी सुपुत्र स्व. श्री हीरालाल जी गांधी का 24 जुलाई, 2014 को स्वर्गवास होने पर उनकी पावन स्मृति में।

1100/- श्री मूलचन्दजी, अलीगढ़-रामपुरा, अपने सुपौत्र श्री हिमांशु जैन सुपुत्र श्री सोहनलालजी-उर्मिलाजी जैन की नियुक्ति बैंगलोर में ebay inc कम्पनी में होने के उपलक्ष्य में।

अ.भा.श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर

संघ-सेवा सोपान के अन्तर्गत साभार प्राप्त

63000/- श्रीमती पारसकंवरजी हस्तीमलजी, नेमीचन्दजी, श्रीपालजी डोसी, मेड़तासिटी,जिला-नागौर (राज.) , वरिष्ठ सुश्रावक श्री श्रीचन्द जी डोसी का संथारा समाधिमरण सहित देवलोकगमन होने पर उनकी पावन स्मृति में संघ सहयोग हेतु। (सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, स्वाध्याय संघ, शिक्षण बोर्ड हेतु)

15300/- श्री सुभाषचन्दजी, अशोककुमारजी, अभयकुमारजी, नरेशकुमारजी, नितिनकुमारजी हुण्डीवाल (कांकरिया), जलगांव (महा.), वीरभ्राता-वीरपिता श्री प्रकाशचन्द जी हुण्डीवाल की पावन स्मृति में संघ सहयोग हेतु।(जिनवाणी, स्वाध्यायसंघ, शिक्षणबोर्ड हेतु)

5100/- श्री अमित जी बोहरा, ब्यावर, जिला-अजमेर (राज.), जीव दया हेतु।

5000/- श्री चैनराजजी, दीपकजी, नितेशजी, प्रदीपजी, यशवन्तजी, मेहुलजी ओस्तवाल, कृष्णागिरी (तमिलनाडु) संघ सहयोग हेतु।

5000/- श्री सुमतिचन्दजी जैन, जोधपुर (राज.), जीवदया हेतु।

1100/- श्रीमती चन्द्रकला जी जैन, जोधपुर (राज.), जीवदया हेतु।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर हेतु साभार प्राप्त

21000/- पृथ्वी सॉफ्टेक लिमिटेड, चेन्नई, सहयोग।

21000/- श्री रतनलाल जी बाफना, जलगांव, अपने सुपुत्र चि. सिद्धार्थ का शुभ विवाह सौ. विभूति सुपुत्री हुकमीचन्द जी-अशोक जी पटवा, रायपुर के साथ 07 जुलाई, 2014 को सानन्द सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में।

6000/- जैन श्री संघ, पल्लीपट, सहयोग हेतु।

1100/- श्री पदमराज जी, राजेशजी, दिनेशजी भण्डारी, जोधपुर, अपनी माताजी श्रीमती ज्ञानकंवर जी धर्मपत्नी स्व. श्री अजीतराज जी भण्डारी का 08 जून, 2014 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में।

अ.भा.श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड हेतु साभार प्राप्त

21000/- श्री रतनलाल जी बाफना, जलगांव, अपने सुपुत्र चि. सिद्धार्थ का शुभ विवाह सौ. विभूति सुपुत्री हुकमीचन्द जी-अशोक जी पटवा, रायपुर के साथ 07 जुलाई, 2014 को सानन्द सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में।

21000/- श्री दलीचन्दजी, अशोक जी कवाड़, पुनमल्ली, चेन्नई, सहयोग हेतु।

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा क्रियान्वित)

दानदाता एवं दान एकत्रित करने वालों की सूची

500000/- श्री हरीश जी कवाड़, पुन्नमल्लै, चेन्नई

120000/- श्री भागचन्द जी जामड़, मदनगंज-किशनगढ़, श्रीमती कमलादेवी जामड़ पत्नी श्री भागचन्द जी जामड़ की पुण्यस्मृति में।

12000/- श्री मांगीलाल जी, राजीव जी गांधी, बांद्रा (महा.)

12000/- श्रीमती कमलादेवी त्रिलोकचन्द जी नाहटा, टी.नगर, चेन्नई।

12000/- श्री विमल जी मलरेचा, बैंगलोर, अपनी पुत्रवधू की प्रथम पुण्यस्मृति में।

6000/- श्री मानचन्द जी मेहता सुपुत्र श्री सवाईचन्द जी मेहता, जोधपुर, श्रीमती लालकंवरजी धर्मपत्नी श्री सवाईचन्द जी मेहता की पुण्यस्मृति में।

छात्रवृत्ति-योजना में इच्छुक दानदाता एक छात्र के लिए 12000/- रु. अथवा उनके गुणक में जितनी छात्रवृत्तियाँ देना चाहें तदनुसार दानराशि 'गजेन्द्र निधि आचार्य श्री हस्ती स्कॉलर शिप फण्ड' योजना के नाम चैक या ड्राफ्ट(Donations to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of IncomeTax Act 1961) से निम्नांकित पते पर भेजने का कष्ट करें- ***Sh. B. Budhmal Bohra**, Poojaa Foundation, W-570, Park Road, Annanagar West Extn., Chennai-600101 (Mob. 9543068382)*

आगामी पर्व

भाद्रपद कृष्णा 8 रविवार	17.08.2014	अष्टमी
भाद्रपद कृष्णा 13 शनिवार	23.08.2014	पर्युषण पर्व प्रारम्भ
भाद्रपद कृष्ण 30 सोमवार	25.08.2014	पक्खी
भाद्रपद शुक्ला 5 शनिवार	30.08.2014	संवत्सरी महापर्व
भाद्रपद शुक्ला 8 मंगलवार	02.09.2014	अष्टमी
भाद्रपद शुक्ला 14 सोमवार	08.09.2014	पक्खी
आश्विन कृष्णा 8 मंगलवार	16.09.2014	अष्टमी
आश्विन कृष्णा 14 मंगलवार	23.09.2014	पक्खी

पर्युषण पर्वाराधना हेतु स्वाध्यायी आमन्त्रित कीजिए

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर विगत 68 से भी अधिक वर्षों से सन्त-सतियों के चातुर्मासों से वंचित गाँव/शहरों में 'पर्वाधिराज पर्युषण पर्व' के पावन अवसर पर धर्माराधन हेतु योग्य, अनुभवी एवं विद्वान् स्वाध्यायियों को बाहर क्षेत्र में भेजकर जिनशासन एवं समाज की महती सेवा करता आ रहा है। इस वर्ष भी उन क्षेत्रों में जहाँ जैन सन्त-सतियों के चातुर्मास नहीं हैं, स्वाध्यायी बन्धुओं को भेजने की व्यवस्था है। इस वर्ष **पर्युषण पर्व 23 से 30 अगस्त 2014** तक रहेंगे। अतः देश-विदेश के इच्छुक संघ के अध्यक्ष/मंत्री निम्नांकित बिन्दुओं की जानकारी के साथ अपना आवेदन पत्र दिनांक **18 अगस्त 2014** तक इस कार्यालय को अवश्य प्रेषित करने का श्रम करावें। पहले प्राप्त आवेदन पत्रों को प्राथमिकता दी जायेगी।

1. गांव/शहर का नाम......................जिला.............प्रान्त................
2. श्री संघ का नाम व पूरा पता..
3. संघाध्यक्ष का नाम, पता मय फोन नं..
   ....
4. संघ मंत्री का नाम, पता मय फोन नं...
   ....
5. संबंधित जगह पहुंचने के विभिन्न साधन...
   ....
6. समस्त जैन घरों की संख्या...
7. क्या आपके यहाँ धार्मिक पाठशाला चलती है?.................................
8. क्या आपके यहाँ स्वाध्याय का कार्यक्रम नियमित चलता है?.......................
9. पर्युषण सेवा संबंधी आवश्यक सुझाव...
10. अन्य विशेष विवरण..

आवेदन करने का पता-संयोजक/सचिव, श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, प्रधान कार्यालय-घोड़ों का चौक, जोधपुर- 342001 (राज.) फोन नं. 0291-2624891, फैक्स- 2636763, मो.-94604-41570 (संयोजक), 94610-13878 (सचिव), 9460081112 (का. प्रभारी) ,ईमेल-**swadhyaysanghjodhpur@gmail.com**

विशेष- दक्षिण भारत के संघ अपनी मांग श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ शाखा चेन्नई 24/25, **Basin Water Works Street,Sowcarpet, Chennai-600079** के पते पर भी भेज सकते हैं। सम्पर्क सूत्र- श्री सुधीर जी सुराणा, फोन नं. 09380997333 (मोबाइल)044-25295143 (स्वाध्याय संघ)

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

क्रोध पर विजय प्राप्त करनी हो तो क्षमा धारण करें।

– आचार्यश्री हस्ती

जोधपुर में प्लॉट, मकान, जमीन, फार्म हाउस खरीदने व बेचने हेतु सम्पर्क करें।

पद्मावती

डेवलपर्स एण्ड प्रोपर्टीज

महावीर बोथरा
09828582391

नरेश बोथरा
09414100257

292, सनसिटी हॉस्पिटल के पीछे, पावटा, जोधपुर 342001 (राज.)
फोन नं. : 0291-2556767

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

अंतर में सच्चाई चाहिए और व्यवहार में सफाई चाहिए, वही प्राणी संसार में अपना आत्म हित कर जगत के सामने आदर्श रख सकता है ।

- आचार्य श्री हीरा

C/o CHANANMUL UMEDRAJ
BAGHMAR MOTOR FINANCE
S. SAMPATRAJ FINANCIERS
S. RAJAN FINANCIERS

 # 218, Ashoka Road, Lashkar Mohalla,
Mysore-570001 (Karanataka)

With Best Compliments from :

C. Sohanlal Budhraj Sampathraj Rajan
Abhishek, Rohith, Saurav, Akhilesh Baghmar

Tel. : 821-4265431, 2446407 (O)
Mo. : 9845126407 (B), 9845580407 (S), 9845113334 (R)

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

सामायिक वह महती साधना है, जिसके द्वारा जन्म-जन्मान्तरों के संचित कर्म-मल को नष्ट किया जा सकता है।

BALAJI AUTOS

(Mahindra & Mahindra Dealers)
618, 619, Old No. 224, C.T.H. Road
Padi, Mannurpet, Chennai - 600050
Phone : 044-26245855/56

BALAJI HONDA

(Honda Two Wheelers Dealers)
570, T.H. Road, Old Washermenpet, Chennai - 600021
Phone : 044-45985577/88
Mobile : 9940051841, 9444068666

BALAJI MOTORS

(Royal Enfield Dealers)
138, T.H. Road, Tondiarpet, Chennai - 600081
Maturachaiya Shelters,
Annanagar
Mobile : 9884219949

BHAGWAN CARS

Chennai - 600053
Phone : 044-26243455/66

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

With Best Compliments from :

Parasmal Suresh Kumar Kothari

Dhapi Nivas, 23, Vadamalai Street,
Sowcarpet, Chennai - 600079
Phone : 044-25294466/25292727

Gurudev

SURANA™

yes, the best TMT RE-BARS

DRI Plant

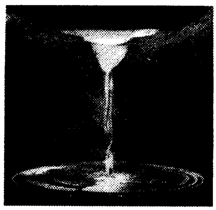

Electric Arc Furnace

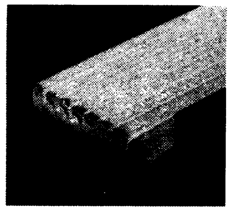

Billets

Rolling Mill

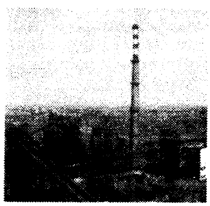

Captive Power Plant

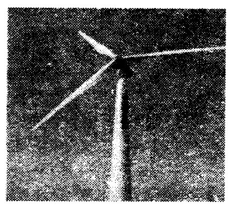

Windmill

With best wishes from

ISO 9001-2008

SURANA INDUSTRIES LIMITED

INTEGRATED STEEL PLANT

MANUFACTURE OF TMT BARS AND ALL KIND OF ALLOY STEEL

29, Whites Road, II Floor, Royapettah, Chennai 600 014/ Ph : 044-28525127 (3 lines) 28525596. Fax: 044-28521143

Email: steelmktg@suranaind.com / www.surana.org.in

STEEL I POWER I MINING

।। श्री महावीराय नमः ।।

हस्ती-हीरा जय जय ! हीरा-मान जय जय !

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का।।

अखण्ड बाल ब्रह्मचारी चारित्र चूड़ामणि, भक्तों के भगवान् 1008
श्री हस्तीमल जी म.सा. के चरणों में हृदय की असीम आस्था से समर्पण
उनके अनमोल खजाने के हीरे-मोती जन-जन के तारणहार
पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा.,
पण्डित रत्न उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा.
एवं समस्त

रत्नाधिक साधु साध्वी मण्डल

के चरण कमलों में भावभरा कोटिशः वन्दन एवं समर्पण...

OUR HUMBLE SALUTATIONS TO THE MOST NOBLE SOULS

PRITHIVIRAJ PREM KUMAR KAVAD
690, Trunk Road, Poonamallee, Chennai - 600 056
Ph. 044-26272196 Mob. : 93810-07273

MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD
GURU HASTI THANGA MAALIGAI
(JEWELLERS & BANKERS)
5, Car Street, Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. : 044-26272609 Mob. : 95-00-11-44-55

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

प्यास बुझाये, कर्म कटाये
फिर क्यों न अपनायें
धोवन पानी

Narendra Hirawat & Co.

Flat No. 1, Building No. 2, Navjeevan Society,
Senapati Bapat Marg, Matunga (West), MUMBAI-400 016

Trin-Trin

Matunga Office : 022-24370713, 24380713, 66669707
Opera House Office : 022-23669818
Mobile : 09821040899

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित
आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद्

आदरणीय रत्नबंधुवर,

अत्यधिक हर्ष एवं प्रमोद का विषय है कि रत्न संघ के अष्टम् पट्टधर परम पूज्य आचार्य भगवंत 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. एवं पंडितरत्न उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. एवं संत-सतीमण्डल की असीम कृपा एवं रत्नसंघ के संघनिष्ठ, गुरुभक्तों के पूर्ण सहयोग से छात्रवृत्ति योजना के आठ वर्ष पूर्ण हो चुके हैं।

वर्ष 2014-2015 के लिए प्रति वर्ष की भांति पुराने लाभान्वित छात्र-छात्राओं को नवीनीकरण आवेदन पत्र एवं नये छात्र-छात्राओं से आवेदन पत्र भरवाकर लाभान्वित किया जा रहा है।

आप जैसे श्रीमंतों के पूर्ण समर्पण एवं अर्थ सहयोग से यह योजना अपने गुरु भाईयों के छात्र-छात्राओं को शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ाने में निरन्तर रूप से सहयोग कर रही है। छात्रवृत्ति योजना को अपने लक्ष्यों की ओर प्रगति करने के लिए आपके निरन्तर अर्थ सहयोग की आवश्यकता है।

छात्रवृत्ति योजना के प्रगति एवं विकास के सम्बन्ध में आपके सुझाव अपेक्षित हैं, निवेदन है कि सुझावों से अवश्य अवगत करावें एवं रत्नसंघ के चहुँमुखी विकास एवं यशकीर्ति के लिए अतिशीघ्र अर्थ सहयोग करावें। नोट- आप अपने सुझाव ई-मेल द्वारा भी भेज सकते हैं।

निवेदन है कि अपने परिवार में होने वाली खुशियों के दिवस को मूर्त रूप देने के लिए छात्रवृत्ति योजना में रुपये 3000/-, 6000/-, 9000/- या एक छात्र के लिए 12000/- रुपये अथवा उनके गुणक में छात्रवृत्ति राशि का अतिशीघ्र अर्थ सहयोग करके दिवस विशेष को चिरस्थायी बनायें एवं पुण्य कमायें।

ज्ञान का एक दीया जलाइये, सहयोग के लिए आगे आइये।

अनन्य गुरुभक्त जो भी इस योजना में अर्थ सहयोग करना चाहते हैं एवं अन्य को अर्थ सहयोग की प्रेरणा करके योजना को गतिशील करने के लिए चैक, ड्राफ्ट या नकद राशि भेज सकते हैं। कोष का खाता विवरण इस प्रकार है।

A/c Name-Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund
A/c No. 168010100120722
Bank Name & Address-AXIS BANK LTD. Anna Salai, Chennai (TN) IFSC Code- UTIB0000168 PAN No. AAATG1995J
Note- Donation to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of Income Tax Act 1961.
सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पत पर भेजें-

B. Budhmal Bohra
Poojaa Foundation, W-570, Park Road, Annanagar West Extn.,
CHENNAI-600101 (Tamilnadu)

छात्रवृत्ति योजना से संबंधित जानकारी के लिए सम्पर्क करें - मनीष जैन, चैन्नई (Mob. 95430 68382)

Name	Place	Contact No.	Name	Place	Contact No.
Ashok Kavad	Chennai	9381041097	Sumtichand Mehta	Pipar	9414462729
Budhmal Bohra	Chennai	9444235065	Manoj Kankaria	Jodhpur	9414563597
Praveen Karnaavat	Mumbai	9821055932	Kushalchand Jain	Sawai Madhopur	9460441570
Mahendra Bafna	Jalgaon	9422773411	Rajkumar Golecha	Pali	9829020742
Ravindra Jain	Sawai Madhopur	9413401835	Harish Kavad	Chennai	9500114455
Suresh Chordia	Chennai	9444028841	Jitendra Daga	Jaipur	9829011589
Vikram Bagmar	Chennai	9841090292	Sheryansh Mehta	Jodhpur	9799506999

नोट- आपके द्वारा जमा कराये गये अर्थसहयोग की जानकारी MSG के द्वारा भेज देवें (Mob. 95430-68382) नम्बर पर भेज देवें।

जय गुरु हस्ती

जय गुरु हीरा

जय गुरु मान

अगर व्यक्ति प्रभु के मार्ग पर चले तो कहीं भी अशान्ति नहीं हो सकती।

- आचार्य श्री हीरा

सांखला परिवार की ओर से निवेदन

हम :

चौबीसों तीर्थंकरों के चरण
कमलों पर मस्तक रखते हैं
और
विनम्रता तथा गौरव के साथ
जाहिर करते हैं कि
"जिनवाणी" के
उत्कर्षदायी तथा पुण्यात्मक कार्यों में
हमारा सहर्ष
सदैव सहकार रहेगा।

मदन मोहन सांखला,
सौ. हेमलता मदन सांखला
मेहुल मदन सांखला
सौ. प्रणिता मेहुल सांखला और
बेबी बुणम मेहुल सांखला

MAXHEAL

MAXHEAL Group of Companies

Jai Guru Heera Jai Guru Hasti Jai Guru Maan

शाश्वत सुख के लिए प्रतिपल प्रयत्न करने वाले जीव मुमुक्षु कहलाते हैं।
ये जीव साधक भी हो सकते है और श्रावक भी।
- आचार्य श्री हीरा

BHANSALI GROUP

Dhanpatraj V. Bhansali

BHANSALI DEVELOPERS

Sharda Bhawan, 2nd Floor, Nandapatkar Road,
Vile Parle (E), Mumbai - 400 057
Tel. : (O) 26185801 / 32940462
E-MAIL : bhansalidevelopers@yahoo.com

संघ-सेवा सोपान के अंतर्गत संघ एवं संघ से सम्बन्धित संस्थाओं के संचालन में निम्नानुसार सहयोग कर पुण्यार्जन करें

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड

शिक्षा निधि संरक्षक	- ₹ 100000 एक मुश्त
शिक्षा निधि स्तम्भ	- ₹ 51000 एक मुश्त
शिक्षा निधि पोषक	- ₹ 21000 एक मुश्त
पाठ्यक्रम पुस्तक प्रकाशन सहयोग	- ₹ 10000
वरियता सूची में स्थान प्राप्त करने वाले परीक्षार्थियों को पदक	- ₹ 10000
परीक्षार्थी पुरस्कार हेतु सहयोग	- ₹ 10000
विशिष्ट वार्षिक सहयोग	- ₹ 10000
संस्कार केन्द्र संचालन हेतु सहयोग	- ₹ 10000
संस्कार केन्द्र पुरस्कार हेतु सहयोग	- ₹ 10000

शरदचन्द्रिका मोफतराज मुणोत श्री जैन रत्न वात्सल्य निधि

सदस्यता	- ₹ 100000 एक मुश्त
पारिवारिक सहयोग	- ₹ 12000 एक मुश्त
छात्रवृत्ति	- ₹ 6000 एक मुश्त

सामायिक-स्वाध्याय भवन योजना

बड़े स्थानक-प्रति स्थानक-₹1100000/500000/251000/100000 प्रतिवर्ष

छोटे स्थानक-प्रति स्थानक-₹251000/100000/51000/21000 प्रतिवर्ष

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

छात्रवृत्ति	- ₹ 12000 प्रतिछात्र

आर.एन.आई. नं. 3653/57 डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-21/2012-14
मुद्रण तिथि दिनांक 5 से 8 अगस्त, 2014
वर्ष : 72 ★ अंक : 08 ★ मूल्य : 10 रु.
डाक प्रेषण तिथि 10 अगस्त, 2014 ★ श्रावण, 2071

Kalpataru

AURA

• Awarded Best Architecture (Multiple Units) at Asia Pacific Property Awards 2010 • A complex of multi-storeyed buildings • Luxurious 2 BHK & E3 homes • Two clubhouses with gymnasium, squash, half-basketball and tennis courts • Mini-theatre • Yoga room • Swimming pool • Multi-functional room • Spa • Landscaped garden and children's play area • Safety and security features

KALPA-TARU®

Site Address: LBS Marg, Ghatkopar (West), Mumbai - 400 086.
Head Office: 101, Kalpataru Synergy, Opp. Grand Hyatt, Santacruz (East), Mumbai - 400 055.
Tel.: 022-3064 3065 • **Fax:** 022-3064 3131
Email: sales@kalpataru.com • **Visit:** www.kalpataru.com

All specifications, designs, facilities, dimensions, etc. are subject to the approval of the respective authorities and the developers reserve the right to change the specifications or features without any notice or obligation. Images are for representative purposes only. All project elevations are an artistic design. Conditions apply.

Kalpataru Limited is proposing, subject to market conditions and other considerations, to make a public issue of securities and has filed a Draft Red Herring Prospectus ("DRHP") with the Securities and Exchange Board of India (SEBI). The DRHP is available on the website of SEBI at www.sebi.gov.in and the respective websites of the Book Running Lead Managers at www.morganstanley.com/indiaofferdocuments, www.online.citibank.co.in/rhtm/citigroupglobalscreen1.htm, www.csinga.com, www.icicisecurities.com, www.nomura.com/asia/services/capital_raising/equity.shtml, www.idfccapital.com. Investors should note that investment in equity shares involves a high degree of risk and for details relating to the same, see 'Risk Factors' in the aforementioned offer documents. This communication is not for publication or distribution to persons in the United States, and is not an offer for sale within the United States of any equity shares or any other security of Kalpataru Limited. Securities of Kalpataru Limited, including its equity shares, may not be offered or sold in the United States absent registration under U.S. securities laws or unless exempt from registration under such laws.

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक – विनय चन्द डागा द्वारा दी डामयण्ड प्रिंटिंग प्रेस, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित व सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर – 302003 से प्रकाशित । सम्पादक – डॉ. धर्मचन्द जैन